दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केन्द्र

CENTRE FOR DISTANCE & ONLINE EDUCATION

जम्मू विश्वविद्यालय

UNIVERSITY OF JAMMU

जम्मू

JAMMU

स्व–शिक्षण सामग्री

SELF LEARNING MATERIAL

कला स्नातक–सत्र–पहला

B.A. SEMESTER-I

SESSION – 2025 ONWARDS

पाठ्यक्रम संख्या :HI-101
COURSE CODE:HI-101

इकाई संख्या–एक से पाँच
UNIT 1-V

CREDITS- 06
B.A. HINDI(GENERAL)

आलेख संख्या : 1 से 16 तक
LESSON NO: 1-16

सत्र : पहला
SEMESTER-I

Dr. JASPAL SINGH
COURSE CO-ORDINATOR

इस पाठ्य सामग्री का रचना स्वत्व/प्रकाशनाधिकार
दूरस्थ एवं ऑनलाइन शिक्षा केन्द्र, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू–180006 के पास सुरक्षित है।

http:/www.distanceeducation.in
Printed and published on behalf of the Centre for Distance & Online Education, University of Jammu, Jammu by the Director, CDOE, University of Jammu, Jammu

B.A HINDI (GENERAL)　　CREDITS- 06　　COURSE CODE:HI-101

Course Contributors:

1. **Dr. Anju Thappa** — **Lesson- 1 to 4**

   Professor, Dept. of Hindi, CDOE

   University of Jammu

2. **Dr. Parshotam Kumar** — **Lesson- 9 to 12**

   Assistant Professor,

   Department of Hindi,

   University of Jammu

3. **Dr. Pooja Sharma** — **Lesson- 13 to 16**

   Lecturer in Hindi, CDOE

   University of Jammu

4. **Dr. Deepika Sharma** — **Lesson- 5 to 8**

   Lecturer in Hindi,

   Govt. M.A.M. College, Jammu

PROOF READING/ CONTENT EDITING & REVIEW

Dr. Pooja Sharma, Lecturer in Hindi, CDOE

University of Jammu

©Centre for Distance & Online Education, University of Jammu, Jammu 2025

- **All rights reserved. No part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from the CDOE, University of Jammu.**
- **The script writer shall be responsible for the lesson/ script submitted to the CDOE and any plagiarism shall be his/ her entire responsibility.**

B.A HINDI (GENERAL) **CREDITS- 06** **COURSE CODE:HI-101**

विषय–सूची

आलेख संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	कबीर की साखियों की प्रसंग व्याख्याएँ तथा पाठ्यक्रम में निर्धारित साखियों पर आधारित प्रश्न	7–22
2.	कबीर का व्यक्तित्व एवं साहित्यिक विशेषताएँ	23–35
3.	सूरदास के पदों की व्याख्या तथा पठ्ति पदों पर आधारित प्रश्न	36–55
4.	सूरदास का व्यक्तित्व एवं साहित्यिक विशेषताएँ	56–63
5.	जयशंकर प्रसाद की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याएँ तथा पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न	64–78
6.	जयशंकर प्रसाद का व्यक्तित्व एवं साहित्यिक विशेषताएँ	79–88
7.	सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याएँ तथा पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न	89–102
8.	सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का व्यक्तित्व एवं साहित्यिक विशेषताएँ	103–113
9.	मुक्तिबोध की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याएँ तथा पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न	114–127
10.	मुक्तिबोध का व्यक्तित्व एवं साहित्यिक विशेषताएँ	128–138
11.	अनामिका की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याएँ तथा पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न	139–147
12.	अनातिका का व्यक्तित्व एवं साहित्यिक विशेषताएँ	148–161
13.	सन्धि– परिभाषा एवं भेद	162–178
14.	पत्र लेखन तथा अनेक शब्दों के लिए एक शब्द	179–197
15.	निबन्ध लेखन	198–214
16.	प्रत्यय एवं विलोम शब्द	215–230

Syllabus of B.A. HINDI (हिन्दी)

Semester - 1st

Course Code : HI-101 **Total Marks : 100**

Credits : 06 **Semester Examination : 80**

Time : 3 Hrs. **Sessional Assessment : 20**

Examination to be held in Dec. 2025,2026,2027

Tittle - काव्य एवं व्याकरण

भाग (क) काव्य

निर्धारित पुस्तक : 'काव्य सुमन' सम्पादक – महेन्द्र कुलश्रेष्ठ, प्रकाशक – राजकमल एंड संज, नई दिल्ली।

इकाई – एक – कबीरदास एवं सूरदास

1. सप्रसंग व्याख्या
2. कबीरदास की साहित्यिक विशेषताएँ एवं पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न
3. सूरदास की साहित्यिक विशेषताएँ एवं पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न

इकाई – दो – प्रसाद एवं निराला

1. सप्रसंग व्याख्या
2. प्रसाद की साहित्यिक विशेषताएँ एवं पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न
3. निराला की साहित्यिक विशेषताएँ एवं पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न

इकाई – तीन – मुक्तिबोध एवं अनामिका

1. सप्रसंग व्याख्या
2. मुक्तिबोध की साहित्यिक विशेषताएँ एवं पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न
3. अनामिका की साहित्यिक विशेषताएँ एवं पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न

भाग (ख) व्याकरण

इकाई – चार –

1. सन्धि–परिभाषा एवं भेद
2. पत्र लेखन

3. अनेक शब्दों के लिए एक शब्द

इकाई – पांच

1. निबन्ध लेखन
2. प्रत्यय– पूर्व प्रत्यय, मध्य प्रत्यय, अन्त्य प्रत्यय
3. विलोम शब्द

प्रश्न पत्र का प्रारूप एवं अंक विभाजन

1. प्रत्येक इकाई में से एक–एक दीर्घ उत्तरापेक्षी प्रश्न पूछा जाएगा । जिनमें से केवल दो प्रश्नों के उत्तर देने होंगें । प्रत्येक प्रश्न का उत्तर लगभग 500–600 शब्दों में देना होगा । 2x15=30

2. किन्हीं दो इकाइयों में से शत–प्रतिशत विकल्प के साथ दो सप्रसंग व्याख्या पूछी जाएगी । अन्य तीन इकाइयों में से एक–एक लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न (कुल तीन) पूछें जाऐंगे । प्रत्येक प्रश्न का उत्तर लगभग 250–300 शब्दों में देना होगा । इसमें कोई विकल्प नहीं दिया जाएगा । 5x7=35

3. प्रत्येक इकाई में से एक–एक अति लघु उत्तरापेक्षी प्रश्न पूछना अनिवार्य है । कुल पांच प्रश्न पूछे जाऐंगे। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर लगभग 70–80 शब्दों में देना होगा । इसमें कोई विकल्प नहीं दिया जाएगा ।

5x3=15

कुल अंक – 80

संस्तुत पुस्तकें :–

1. कबीर – हजारी प्रसाद द्विवेदी ।
2. कबीर साहित्य की परख – परशुराम चतुर्वेदी ।
3. सूरदास – नंददुलारे बाजपेयी ।
4. सूरदास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ।
5. प्रसाद का काव्य : प्रेमशंकर, भारती भण्डार, इलहाबाद ।
6. अनामिका का काव्य : आधुनिक स्त्री–विमर्श, मंजु रुस्तगी ।
7. हिन्दी एक मौलिक व्याकरण – डॉ. रमाकान्त अग्निहोत्री ।
8. मानक हिन्दी व्याकरण – डॉ. शशि शेखर तिवारी ।

कबीरदास की साखियों की सप्रसंग व्याख्याएँ तथा पाठ्यक्रम में निर्धारित साखियों पर आधारित प्रश्न

1.0 रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 कबीरदास की साखियों की सप्रसंग व्याख्याएँ

1.4 पाठ्यक्रम में निर्धारित साखियों में आधारित प्रश्न

1.5 सारांश

1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.7 पठनीय पुस्तकें

1.1 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययनोपरान्त आप कबीर की साखियों के अर्थ को समझ सकेंगे, जिससे इन साखियों की व्याख्या करने में आपको कोई कठिनाई नहीं होगी। पाठ्यक्रम में निर्धारित साखियों पर किस प्रकार के प्रश्न आपसे पूछे जा सकते हैं इसकी जानकारी भी आपको प्राप्त होगी।

1.2 प्रस्तावना

'साखी' कबीर साहित्य का बहुत ही महत्वपूर्ण अंश है। साखियों में कबीर का व्यक्तित्व अपनी समग्रता में अभिव्यक्त हो गया है। कबीर के भक्त, ज्ञानी, रहस्यवादी, प्रेमी एवं कवि रूपों के अतिरिक्त उनका चिन्तक व्यक्तित्व भी उनकी साखियों में पूर्णतया स्पष्ट है। साखियों में कबीर के जीवन–दर्शन की पूर्ण एवं सांगोपांग झलक मिल जाती

है। मोटे तौर पर कबीर को समाज–सुधारक कहा जाता है। वास्तव में, कबीर का जीवन–दर्शन व्यक्ति के परम कल्याण को ही अपना चरम लक्ष्य मानकर चलता है। कबीर के जाति–पाँति, ऊँच–नीच, हिन्दू–मुसलमान आदि के भेदों के निषेध आदि का समाज की पुनर्व्यवस्था से इतना सम्बन्ध नहीं है। यह सब तो व्यक्ति में इन अहंकारों को समाप्त कर देने का सन्देश है।

1.3 कबीरदास की साखियों की सप्रसंग व्याख्याएँ

1) *गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूँ पायँ।*
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविन्द दियो बताय।।

शब्दार्थ :– दोऊ–दोनों, काके– किसके, पायँ– पाव, गोविन्द– ईश्वर, बलिहारी– न्यौछावर होना।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पाठ्यपुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। इस साखी में कवि ने गुरु के महत्व को प्रतिपादित किया है।

व्याख्या :– कबीर गुरु को भगवान से भी अधिक महत्व देते हैं क्योंकि उनका मानना है कि भगवान की कृपा भी तभी सम्भव है जब गुरु की कृपा होती है। गुरु की इसी महत्ता को प्रतिपादित करते हुए वे कहते हैं कि गुरु और गोविन्द दोनों ही सामने खड़े हैं, दुविधा में हूँ कि किसके पैर पकड़ूं। इस दुविधा के पश्चात् वह निर्णय लेते हैं कि वह गुरुदेव पर न्यौछावर होंगे क्योंकि गुरु की कृपा से ही उन्हें गोविन्द के दर्शन हुए हैं। अर्थात् गुरु राह न दिखाते तो गोविन्द की प्राप्ति भी सम्भव नहीं थी इसलिए गोविन्द से भी बड़े गुरु हैं जिनकी कृपा से उन्होंने ईश्वर को प्राप्त किया है।

विशेष :– 1. सभी संत कवि गुरु को ईश्वर से बड़ा मानते हैं।

2. सगुण भक्त कवि भी गुरु की महत्ता स्वीकार करते हैं किन्तु सगुण और निर्गुण में अंतर यह है कि सन्त कवि गुरु को परमेश्वर भी मान लेते हैं।

3. संत कवि सगुण कवियों की अपेक्षा गुरु को अधिक महत्व देते हैं।

2) *सात समंद की मसि करौं, लेखनि सब बनराई।*
धरती सब कागद करौं, तऊ हरि गुन लिख्या न जाइ।।

शब्दार्थ :– मसि– स्याही, लेखनि– कलम, बनराई– वन की लकड़ी, कागद– कागज़, तऊ– तब भी।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पाठ्यपुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया हैं। इस साखी में कवि ने ईश्वर की असीमता को सिद्ध किया है।

व्याख्या :– कबीर ईश्वर को असीम मानते हुए कहते हैं कि सातों समुद्रों को स्याही में तथा सम्पूर्ण वन की लकड़ियों को कलम में परिणत कर लिया जाए और सम्पूर्ण धरती रूपी कागज पर भगवान के गुणगान लिखे जाएँ, तब भी उनके पूरे गुण नहीं लिखे जा सकते हैं अर्थात् ईश्वर असीम है और सांसारिक वस्तुएँ सीमित होती हैं इसलिए इससंसार की कोई भी वस्तु या प्राणी ईश्वर की असीमता को वर्णित नहीं कर सकता।

विशेष :– 1. सभी संत कवि ईश्वर की सत्ता को असीम मानते हैं।

2. सांसारिक वस्तुएं ससीम हैं, इनके द्वारा असीम वर्णित नहीं हो सकता।

3) *पानी बाढ़े नाव में, घर में बाढ़े दाम।*
दोनों हाथ उलीचिए, यहि सयानो काम।।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पाठ्यपुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया हैं। इसमें कवि ने मनुष्य की संचय की प्रवृत्ति और उससे होने वाले दुख की ओर संकेत करते हुए दान की महत्ता बतलाने का प्रयास किया है।

व्याख्या :– मनुष्य में संचय की प्रवृत्ति अधिक होती है और वही उसके दुख का कारण भी है। वह व्यक्ति सुखी है जो किसी को कुछ देता है। देने में एक सुख है जिसे वही अनुभव कर पाता है जो दान करता है। इसीलिए कबीर कहते हैं जब नाव में जल और घर में धन बढ़ने लगे तो उसे दोनों हाथों से बाहर निकालना ही सयानोंअर्थात् बुद्धिमानों का काम है। क्योंकि जिस प्रकार नाव पानी से भर जाने पर डूब जाती है उसी प्रकार अधिक धन होने पर व्यक्ति को उसके संरक्षण की चिंता बनी रहती है। इसलिए बुद्धिमान व्यक्ति अधिक धन होने पर सुपात्र को धन दान देकर सुख अनुभव करते हैं।

विशेष :– 1. दान की सुखद अनुभूति का संकेत दिया है।

2. उपदेशात्मक भाषा का प्रयोग हुआ है।

4) *लघुता ते प्रभुता मिलै, प्रभुता ते प्रभु दूर।*
चींटी शक्कर लै चली, हाथी के सिर धूर।।

शब्दार्थ :– लघुता– छोटा, प्रभुता – प्रभु, प्रभुता – बड़प्पन या अहंकार, धूर –धूल।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पुस्तक 'काव्य तारा' में संकलित 'कबीर' की साखियों से लिया गया है। इस दोहे में कवि ने विनम्रता को व्यक्ति की सफलता का श्रेय दिया है।

व्याख्या :– कबीर का कहना है कि यदि व्यक्ति को अपना बड़प्पन रखना है तो उसे सदैव छोटे बनकर रहना चाहिए। छोटा अर्थात् विनम्र रहो। विनम्रता से व्यक्ति का लोगों में मान बढ़ेगा। कबीर कहते हैं कि ईश्वर प्राप्ति के लिए भी, जो तुच्छ और छोटा बनता है वही सम्मान और बड़प्पन प्राप्त करता है। अहंकार का दिखावा करने वाले से तो ईश्वर भी दूर ही रहता है। चींटी का उदाहरण देते हुए वह अपनी बात इस प्रकार स्पष्ट करते हैं कि चींटी छोटी, विनम्र हैइसलिए उसे शक्कर मिलती है किन्तु हाथी को अपने विशालकाय और बलशाली होने का अहंकार होता है। इसी बल के अहंकार के कारण वह सूंड से घूल उठाकर अपने सिर पर डालता रहता है। कहने का अर्थ यह है कि जीवन में कभी भी किसी भी विशेषता का अभिमान नहीं करना चाहिए। विनम्रता आपको शिखर तक ले जा सकती है और अहंकार पतन के अंधकार तक। निर्णय आपको करना है कि आप किसका चयन करते हैं।

विशेष :– 1. दृष्टांत अलंकार का प्रयोग हुआ है।

2. 'लघुता ते प्रभुता मिलै, प्रभुता ते प्रभु दूर' पंक्ति में 'प्रभुता' शब्द दो बार आया है किन्तु उसका अर्थ बदल गया है इसलिए यहाँ यमक अलंकार है।

5) *निंदक नियारे राखिये, आंगनि कुटी छवाय ।*
बिन साबुन पानी बिना, निरमल करै सुभाय।।

शब्दार्थ :– निंदक – आलोचक, निन्दा करने वाला, नियारे – निकट, समीप, निरमल – स्वच्छ, सुभाय – स्वभाव।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा संपादित पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। इस साखी में कवि ने निन्दक को व्यक्ति के लिए हितकारी माना है।

व्याख्या :– कबीर का कहना है कि हमें अपने निंदक को अपने समीप ही, अपने आँगन में ही कुटिया डालकर रखना चाहिए। वह बिना साबुन और जल के व्यक्ति को सहज रूप में ही निर्मल कर देता है। अर्थात् हमें निंदा करने वाले व्यक्ति को अपने पास रखने का कोई प्रबंध कर लेना चाहिए। जिससे हम रोज उनसे अपनी बुराईयों के बारे में जान सकें और अपनी गलतियाँ दोबारा दोहराने से बच सकें। इस प्रकार हम बिना साबुन और पानी के ही खुद को निर्मल बना सकते हैं।

विशेष :– 1. निंदा अहंकार की निवृत्ति करती है।

6) ***कबीर यहु घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।***
सीस उतारै भुईं धरे, सौ पैठे घर मांहि।।

शब्दार्थ :– खाला– मौसी ,उतारै– काटे, भुईं– हाथ, पैठे– बैठे।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। कवि ने इस साखी के माध्यम से प्रेम और समर्पण में साहस तथा निडरता की भूमिका को स्पष्ट किया है।

व्याख्या :– कबीर कहते हैं कि प्रेम का घर कोई मौसी का घर नहीं यहाँ बिना प्रयत्न सरलता से प्रवेश मिल जाए। इस घर में उसे ही प्रवेश मिल सकता है जो सिर काट कर हाथ में रख कर चले। अर्थात् प्रेम लौकिक हो या अलौकिक उसे प्राप्त करने के लिए आपको अपने प्राणों की बलि भी देनी पड़ सकती है। यदि आप अपने प्राणों की रक्षा ही करते रहे तो यह प्रेम नहीं प्राप्त होगा। ईश्वर के प्रेम को प्राप्त करने के लिए आपको अपना अहं भगवान को समर्पित करना पड़ेगा। यदि आप अहं का त्याग नहीं कर सकते तो आपको ईश्वर का प्रेम भी प्राप्त नहीं हो सकता।

विशेष :– लौकिक प्रेम से आध्यात्मिक प्रेम की व्यंजना की है। द्विवेदी जी ने इस प्रेम को मृत्यु का प्रेम कहा है। 'सीस उतारै भुई धरे' में लौंकिक एवं अलौकिक क्षेत्र की दो भिन्न लक्षणाएँ और ध्वनियाँ हैं।

7) ***पाणी केरा बुदबुदा, अस मानुस की जाति।***
देखत ही छिपि जाइंगे, ज्यौं तारे परभाति।।

शब्दार्थ :– पाणी केरा– पानी के, बुदबुदा – बुलबुला, परभाति – सुबह, प्रातः

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। इसमें कबीर ने व्यक्ति के जीवन की क्षणभंगुरता पर प्रकाश डाला है।

व्याख्या :– कबीर कहते हैं कि हम सांसारिकों की जाति पानी के बुलबुलों के समान है जिनका अस्तित्व अत्यन्त क्षणिक है। एक दिन हम उसी प्रकार लुप्त हो जाएंगे जिस प्रकार प्रातः काल होते ही तारे छिप जाते हैं।

विशेष :– 1. पहली पंक्ति में उपमा अलंकार का प्रयोग है।

2. दूसरी पंक्ति में उदाहरण अलंकार का प्रयोग किया गया है।

8) *करता था तौ क्यूँ रह्या, अब करि क्यूँ पछताइ।*
बोवै पेड़ बबूल का, अंब कहाँ तैं खाई।।

शब्दार्थ :– बोवै – बीजना, अंब – आम।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। इस साखी में कबीर कर्म फल की ओर इंगित करते हैं।

व्याख्या :–कबीर का कहना है कि हे मनुष्य! जिस समय तुने कुकर्म किए थे उस समय तुमें यह ध्यान क्यों नहीं रहा कि मुझे ऐसा कर्म नहीं करना चाहिए। अब उन कर्मों के फलस्वरूप दुख उठाने पर क्यों पछताता है ? तुने अपने कर्मों से बबूल का वृक्ष बोया तो अब उसके फल शूल ही प्राप्त हो सकते हैं, मधुर रसाल (आम, सुख) कहाँ से खा सकता है। अर्थात् हम जैसे कर्म करते हैं उसी के अनुरूप फल भी प्राप्त करते हैं इसलिए हमें कर्म करते समय ध्यान रखना चाहिए कि हम कैसे कर्म कर रहे हैं। यदि बुरे कर्म किए तो फिर अच्छे फल की कामना क्यों करनी।

विशेष :– 1. निदर्शना अलंकार का प्रयोग।

2. कर्म की महत्ता को प्रतिपादित किया गया है।

9) *जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि हैं मैं नाँहि।*
सब अँधियारा मिटि गया, जब दीपक देख्या माँहि।।

शब्दार्थ :– मैं– अहं, दीपक – ज्ञान, अँधियारा – अज्ञान।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। इसमें कबीर ने ईश्वरीय ज्ञान से अहं की समाप्ति का प्रतिपादन किया है।

व्याख्या :– कबीर कहते हैं कि परमतत्व के परिचय से पूर्व जब मुझमें अहं था, तब प्रभु का निवास मुझमें नहीं था किन्तु अब ईश्वर की सर्वव्यापकता एवं जीव और ब्रह्म की एकता के ज्ञान से मेरा अहं नष्ट हो जाने पर वहाँ प्रभु ही रह गए हैं, 'मैं' नहीं। कवि का कहना है कि अब अन्तःज्योति के दीप–दर्शन से अज्ञान का सम्पूर्ण अन्धकार नष्ट हो गया है।

विशेष :– 1. परमतत्व के ज्ञान की दशा का वर्णन है।

2. ज्ञान होने पर 'सर्व खल्विद ब्रह्मा' की भावना दृढ़ हो जाती है।

10) *जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ।*
मैं बपुरा डूबन डरा, रहा किनारे बैठ।

शब्दार्थ :– पाइया– पाया, पैठ – प्रवेश, पहुँच, बपुरा – पागल।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। जिसमें कवि ने कर्म करने और लक्ष्य प्राप्त करने की प्रेरणा दी है।

व्याख्या :– कबीर जी कहते हैं कि जो गहरे जल में घुसकर ढूँढता है, वह मोती को प्राप्त कर लेता है, परन्तु जो पागल डूबने से डरता है, वह किनारे पर ही बैठा रह जाता है। मोती गहरे धंस कर ही प्राप्त किया जा सकता है। अर्थात् अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमें प्रयत्न भी करना पड़ेगा। यदि प्रयत्न न करें तो लक्ष्य की प्राप्त नहीं होगी।

विशेष :– 1. फल के लिए प्रथम कर्म करने की आवश्यकता होती है।

11) *ऐसी बानी बोलिये, मन का आपा खोय।*
औरन को सीतल करै, आपहु सीतल होय।।

शब्दार्थ :– बानी – भाषा, आपा – अभिमान, गर्व, खोय – नष्ट, सीतल – आनन्दित करना, आपहु – स्वयं को।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। इसमें कबीर ने बोली की मीठास पर बल दिया है।

व्याख्या :– कबीर जी कहते हैं कि मानव को अपना अहंकार छोड़कर ऐसी मधुर और विनम्र वाणी बोलनी चाहिए जिससे उसे स्वयं भी शीतलता प्राप्त हो और सुनने वालों को भी सुख मिले।

विशेष :– व्यक्ति को मित भाषी व मधुर भाषी होना चाहिए।

12) *साधु ऐसा चाहिए, जैसा सूप सुभाय।*
सार–सार को गहि रहै, थोथा देई उड़ाय।।

शब्दार्थ :– साधु – संत, महात्मा, सज्जन, उत्तम, सदाचारी। सूप – अनाज फटकने के लिए बाँस एवं सरकंडे की तीलियों से बना एक पात्र : छाज, सुभाय – स्वभाव, सार – मूल भाग, श्रेष्ठ, उत्तम, गहि रहै – रख लेना, थोथा – तत्वरहित, खराब, उड़ाय – निकालना, ओझल करना।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। इसमें कबीर ऐसे संत की कामना करते हैं जो व्यक्ति की बुराईयों को खत्म कर दे जिससे व्यक्ति सदाचारी बन सके।

व्याख्या :– कबीर कहते हैं कि संसार में ऐसे सज्जनों की जरूरत है जो अनाज साफ करने वाले सूप के समान हो। क्योंकि सूप अनाज से सार्थक को बचा लेता है और निरर्थक को उड़ा देता है। अर्थात् ऐसे सज्जन ही व्यक्ति के भीतर की बुराई को समाप्त करके उसे सदाचारी बना सकते हैं।

विशेष :– उपमा अलंकार का प्रयोग हुआ है।

13) *तेरा साईं तुज्झ में, ज्यों पुहुपन में बास।*
कस्तुरी का मिरग ज्यों, फिर–फिर ढूंढै वास।।

शब्दार्थ :– साई – ईश्वर, पुहुपन – पुष्प, बास – सुगन्ध, कस्तुरी – एक प्रसिद्ध सुगंधित पदार्थ जो हिरन की जाति के एक पशु की नाभि में पाया जाता है तथा औषधि बनाने में प्रयुक्त होता है।, मिरग – हिरण, वास – आवास।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। इसमें कबीर ने इस बात पर बल दिया है कि ईश्वर हमारे मन में ही विद्यमान है। हमें ईश्वर को बाहर न्हीं खोजना चाहिए।

व्याख्या :– कबीर का कहना है कि ईश्वर की प्राप्ति करनी है तो हमें उसे अपने भीतर ही खोजना होगा अर्थात् आत्मज्ञान से ही ईश्वर प्राप्ति संभव है। कबीर कहते हैं कि हे व्यक्ति ! तेरा ईश्वर तुम्हारे भीतर इस प्रकार वास करता है जैसे पुष्प में सुगन्ध बसी रहती है। वह दिखाई तो नहीं देती पर महसूस की जाती है। किन्तु व्यक्ति मृग की भाँति उसे स्वयं से बाहर ढूंढता रहता है।

विशेष :– आत्मज्ञान पर बल दिया गया है।

14) *ऊँचे कुल क्या जनमियाँ, जे करणी ऊँच न होइ।*
सोवन कलस सुरै भर्या, साधू निंद्या सोइ।।

शब्दार्थ :– करणीं – कर्म, सोवन – सोना, सुरै – मदिरा, निंद्या – निंदा।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। इसमें कबीर ने जन्म कुल की उच्चता से अधिक कर्म की उच्चता पर बल दिया है।

व्याख्या :– कबीर का कहना है कि यदि मनुष्य के कर्म उसकी उच्च जाति के अनुरूप उच्च नहीं हैं तो उसके ऊँचे कुल में जन्म लेना किस काम का होगा क्योंकि स्वर्ण के कलश में यदि मदिरा भरी हुई है तो साधु उस स्वर्ण कलश की भी निंदा करते हैं। अर्थात् उच्च कुल में जन्म लेने पर यदि कर्म नीच हैं तो वह निंदा का पात्र है। जन्म से उच्च होने से कोई लाभ नहीं होगा।

विशेष :– 1. व्यक्ति की पहचान उसकी जाति नहीं उसके कर्म हैं।

2. 'दुष्टान्त' अंलकार है।

15) *मनिषा जनम दुलभ है, देह न बारम्बार।*
तरवर थै फल झड़ि पड़्या, बहुरि न लागै डार।।

शब्दार्थ :– मनिषा – मनुष्य, दुर्लभ – कठिनता से मिलने वाला, देह – शरीर, बारम्बार – बार–बार, तरबर – वृक्ष, बहुरि – दुबारा, डार – डाल, शाख।

प्रसंग :– प्रस्तुत दोहा 'महेन्द्र कुलश्रेष्ठ' द्वारा सम्पादित पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'कबीर की साखियों' से लिया गया है। इसमें कबीर ने मनुष्य जन्म की महत्ता को व्यंजित किया है।

व्याख्या :– कबीर का कहना है कि यह मानव जन्म कठिनता से प्राप्त होता है। मानव शरीर बार–बार नहीं मिलता। मनुष्य जन्म की महत्ता को स्पष्ट करने हेतु वह उदाहरण देकर समझाते हैं कि जिस प्रकार एक बार जब फल पेड़ से गिर जाता है तो पुनः वह डाल से नहीं जुड़ सकता, वैसे ही एक बार गया हुआ मानव–शरीर पुनः प्राप्त नहीं होता है। इसलिए हमें अपने जीवन में सत्कर्म करके समय रहते अपने जीवन को सार्थक करना चाहिए।

विशेष :– उदाहरण तथा रूपक अलंकार का प्रयोग।

1.4 पाठ्यक्रम में निर्धारित साखियों पर आधारित प्रश्न

प्र1) साखी किसे कहते हैं ?

साखी अर्थ :– साखी शब्द संस्कृत के साक्षी (साक्षिन्) शब्द का अपभ्रंश रूप है। इसका अर्थ है– वह व्यक्ति जिसने कोई घटना अपनी आँखों से देखी हो, वह तटस्थ दर्शक। साखी, उपदेश प्रधान काव्य रूप है। नाथ और निर्गुण सम्प्रदाय के सन्तों में नीति, व्यवहार, ज्ञान, वैराग्य आदि की बातें बताने के लिए इसका प्रयोग किया है। साखी पर्याप्त प्राचीन काव्यरूप है, जिसकी परम्परा गुरु गोरखनाथ के समय से ही प्राप्त होती है। कबीर की साखियों में अधिकतर दोहा छन्द का प्रयोग प्राप्त होता है। दोहों के अतिरिक्त सोरठा, उपमान, हरिपद, मुक्तमणि, अवतार, गीता अदि छन्दों के प्रयोग भी तत्र–यत्र प्राप्त होते हैं। साखियों की भाषा प्रधानतः खड़ीबोली हिन्दी है।

विषय की दृष्टि से कबीर की साखियों को दो भोगों में बाँटा जा सकता है– लौकिक भावप्रधान और परलौकिक भावप्रधान। लौकिक भावप्रधान साखियाँ तीन प्रकार की हैं– (क) सन्तमय का स्वरूप बताने वाली (ख) पाखण्डों का विरोध करने वाली और (ग) व्यवहार प्रधान साखियाँ। परलौकिक भावप्रधान साखियों में आध्यात्मिक विचारधारा का प्रकाशन हुआ है। साखियाँ कबीर साहित्य का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंश हैं। इनमें कबीर का व्यक्तित्व अपनी समग्रता में अभिव्यक्त हुआ है। उनके भक्त, ज्ञानी, रहस्यवादी, प्रेमी एवं कवि रूपों के अतिरिक्त उनका चिंतक व्यक्तित्व भी उनकी

साखियों में स्पष्ट हुआ है। सन्त कबीर ने परमतत्त्व की प्राप्ति को ही जीवन का चरम लक्ष्य तथा आध्यात्मिक यात्रा का गन्तव्य माना है। इसके लिए व्यक्ति को अपने लौकिक एवं आध्यात्मिक जीवन में कैसा व्यवहार करना चाहिए, यही साखी भाग का प्रधान प्रतिपाद्य है।

साखी शब्द में सीख अर्थात् उपदेश की, कल्याण की कामना से उपदेश की अर्थ छवि निहित है। कबीर की साखी की प्रेरणा इसी अर्थ की पौषक है। स्वयं कबीर ने कहा है–

हरि जी यहै विचारिया, साखी कहौ कबीर।
भवसागर में जीव है, जे कोई पकड़ै तीर।।

सन्त–परम्परा के अनुरूप कबीरदास जी आध्यात्मिक जीवन–यात्रा का एक निश्चित क्रम मानते हैं। साखी साहित्य में अंगों में इसी क्रम का निरूपण है। पहले जीव को गुरुकृपा से उस परमतत्व की झलक मिलती है। यह झलक उसमें प्रेम की अतृप्ति पैदा करती हुई प्रियतम से मिलने की तीव्र आकांक्षा और तज्जनित विरह–व्यथा जगा देती है। जीव को संसार के प्रति वैराग्य उत्पन्न हो जाता है और उसे परम रमणीय तत्व की प्राप्ति केवल प्रेमयोग अैर ज्ञानयोग से होती है। बीच–बीच में वह प्राण और मन के नियन्त्रण के लिए हठयोग की साधनाओं में भी प्रवृत्त होत है। विभिन्न पड़ावों के बाद अन्त में 'पारख' रूप हो जाना, परमतत्व में लय अर्थात् परमतत्व रूप होना इस महायात्रा का अत्तिम पड़ाव है। जीवन की इसी परम यात्रा का वर्णन साखियों का प्रतिपाद्य है। अंगों के नाम इन्हीं विभिन्न पक्षों तथा यात्रा के विभिन्न पड़ावों के संकेत हैं। डॉ. श्याम सुन्दर दास ने साखियों का विभाजन कुल 59 अंगों में कियाहै। बीजक के किसी प्रमाणिक पाठ में अंग–विभाजन नहीं मिलता।

प्र2) कबीर के गुरु विषयक विचारों को स्पष्ट करें ।

भारतीय सन्त–परम्परा में और विशेषतः निर्गुण सन्तों की परम्परा में गुरु को अत्यन्त महत्व दिया गया है। साखी के प्रथम अंग 'गुरुदेव कौ अंग' में ही कबीर के गुरु विषयक विचार प्रकट हो जाते हैं। कबीर के अनुसार संसार में गुरु के समान कोई हितैषी और अपना सगा नहीं है, इसलिए मैं अपना तन–मन और सर्वस्व गुरु के प्रति समर्पण करता हूँ जो क्षणभर में ही अपनी कृपा से मनुष्य को देवता बनाने में समर्थ हैं। गुरु की महिमा अनंत है और इसे वही समझ सकता है जिसके ज्ञान–चक्षु खुल गए हों। गुरु की कृपा जिस व्यक्ति पर होती है, कलियुग का प्रभाव भी उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता, अर्थात् उस पर पापों और दुष्कर्मों का भी कोई प्रभाव नहीं हो सकता। गुरु हीअपने शिष्य

के अन्दर की ज्योति को प्रज्वलित करने में समर्थ है किन्तु दुर्भाग्यवश जिस व्यक्ति को विद्वान गुरु प्राप्त नहींहोता, उस शिष्य की कभी मुक्ति नहीं हो सकती, बल्कि वह तो अपने साथ अपने शिष्य को भी लेकर डूब जाता है। गुरु की वाणी ही उस संशय को नष्ट करने में समर्थ है, जो समस्त संसार को अपने कठोर पाश में आबद्ध किए हुए है। इसलिए कबीर कहते हैं–

कबीर गुर गरवा मिल्या, रलि गया आटैं लूँण।
जाति पाँति कुल सब मिटे, नाँव धरौगे कौंण।।

अर्थात् मुझे गौरवशाली गुरु व उनके शब्द मंत्र मिले हैं। अब 'मैं' व्यापक चैतन्य में तथा 'गुरु' मुझ में उसी प्रकार एकाकार हो गए हैं जैसे आटे में नमक। भेद करने वाली जाति–पाँति की सब उपाधियाँ मिट गई हैं। नाम–रूप सब विलीन हो गए हैं। अब किस नाम से मुझे अभिहित करोगे। क्योंकि ऐसी अवस्था में व्यक्ति नाम रूप से परेहो जाता है।

कबीर का मानना है कि जिन लोगों को गुरु की प्राप्ति नहीं होती, वे चाहे जितना तप और साधना करें, उसका कोई फल प्राप्त नहीं होता। इसलिए वह गुरु को भगवान से भी बड़ा मानते हुए कहते हैं–

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूँ पायँ।
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविन्द दियो बताय।।

अर्थात् कबीर गुरु और गोविन्द दोनों में से गुरु पर न्यौछावर होना चाहते हैं क्योंकि उनकी कृपा से ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति हुई है। अतः सर्व प्रकार से समर्थ गुरु से ही परिचय हो जाने पर समस्त सांसारिक और मानसिक दुख नष्ट हो जाते हैं और आत्मा निर्मल होकर प्रभु–भक्ति में तल्लीन हो जाती है। गुरु की महिमा अनंत और अवर्णनीय है।

प्र3) कबीर के ईश्वर के प्रति विचार ।

कबीर निर्गुण ब्रह्मा की उपासना करते हैं। उनका मानना है कि प्रभु सब कुछ करने में समर्थ हैं, मनुष्य के वश में कुछ भी नहीं है। मनुष्य तो अहं के कारण कर्त्ता होने का दावा करता है। जिस पर संसार की कृपा होती है, सारा संसार उसकी उंगलियों के इशारे पर नाचता है और वह सहज में ही प्रभु के दर्शन कर लेता है। भगवानकी असीमता का वर्णन करते हुए कबीर कहते हैं–

सात समंद की मसि करौं, लेखनि सब बनराई।
धरती सब कागद करौं, तऊ हरि गुन लिख्या न जाइ ।।

अर्थात् प्रभु के गुण असंख्य और वर्णनातीत है। यदि सातों समुद्रों की स्याही बनाकर, सारे वनों की लेखनी बनाकर और सारी धरती को कागज बनाकर भी प्रभु के गुण लिखे जायें तो भी वे नहीं लिखे जा सकते क्येंकि प्रभु तो अवर्ण्य हैं, उसके स्वरूप का थोड़ा बहुत आभास केवल उसी व्यक्ति को हो सकता है जो सच्चे मन से प्रभु–प्रेम में लीन रहता है। कबीर कहते हैं कि जब तक हमारे भीतर अहं है तब तक हमें ईश्वर नहीं मिल सकते, ईश्वर से एकाकार होने की दशा को उन्होंने निम्न दोहे में व्यक्त किया है–

जब मैं था तब हरि नहीं, अब हरि है मैं नांहि।
सब अँधियारा मिटि गया, जब दीपक देख्या माँहि।।

भगवान को खोजना है तो हमें गहराई में उतरना होगा अर्थात् आत्मज्ञान से ईश्वर की पहचान करनी होगीं कबीर यह भी मानते हैं कि ईश्वर को खोजना है तो हमें कहीं बाहर ढूंढने की जरूरत नहीं है क्योंकि ईश्वर हमारे हृदय में विराजमान हैं। इसलिए ईश्वर को प्राप्त करने के लिए आत्मज्ञान और प्रेम की आवश्यकता है। तथा ईश्वर को हम मनुष्य जन्म में ही प्राप्त कर सकते हैं इसलिए समय रहते अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त करना चाहिए और मनुष्य के जीवन का लक्ष्य ईश्वर प्राप्ति है। कबीर कहते हैं–

मनिषा जन्म दुलर्भ है, देह न बारम्बार।
तरवर थे फल झड़ि पड़या, बहुरि न लागै डार।।

अर्थात् मनुष्य जन्म बहुत कठिनता से प्राप्त होता है। जिस तरह वृक्ष से एक बार फल गिर जाए तो पुनः नहीं जोड़े जा सकते वैसे ही मनुष्य जन्म एक बार गया तो पुनः मिलना कठिन है इसलिए समय रहते ईश्वर प्राप्ति कर लेनी चाहिए। यह जीवन पानी के बुलबुले के समान है। अर्थात् क्षण में नष्ट हो जाएगा जैसे सुबह होने पर तारे छिप जाते हैं। इसलिए हे मनुष्य! ईश्वर की सता को पेहचान कर इस संसार रूपी माया से मुक्ति प्राप्त कर ले ।

अतः कबीर के ईश्वर निर्गुण, निराकार हैं किन्तु वह घट–घट में वास करते हैं। वह असीम हैं, अगोचर हैं किन्तु मनुष्य के हृदय में विराजमान हैं, इसलिए उन्हें बाहर खोजना व्यर्थ है।

प्र4) कबीर की साखियों में व्यक्त व्यवहारिक ज्ञान ।

कबीर कवि बाद में किन्तु समाज सुधारक पहले थे इसलिए उनकी साखियों में हमें व्यवहारिक ज्ञान भी मिलता है। वह व्यक्ति को जीवन जीने की राह दिखाते थे। उनका लक्ष्य समाज में अनाचार एवं अनैतिकता को समाप्त कर सदाचार और नैतिकता को स्थापित करना रहा है। वह कहते हैं मनुष्य को अपने भीतर से अहं को समाप्त कर देना चाहिए क्योंकि मनुष्य जीतना विनम्र होगा वह उतना ही शिखर पर पहुँचेगा। विनम्रता से तो प्रभु भी प्राप्त हो जाते हैं। अपने स्वभाव में विनम्रता रखने से जीत के द्वार खुल जाते हैं। वह चींटी और हाथी का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि चींटी छोटी होती है इसलिए उसे शक्कर मिलती है किंतु हाथी विशालकाय होता है लेनिक उसके हिस्से धूल ही आती है। इसलिए मनुष्य को अपने भीतर से अहं भावना को निकाल देना चाहिए। उनका कहना है कि व्यक्ति कूकर्म करता है लेकिन अच्छे फल की कामना उसे रहती है, यदि उसने बबूल का बीज बोया है तो फिर वह आम कैसे प्राप्त कर सकता है अर्थात् व्यक्ति को अपने कर्मानुसार फल की प्राप्ति होती है इसलिए यह कर्म करना है या नहीं यदि पहले नहीं सोचा तो फिर कूकर्म के परिणाम से भी नहीं डरना चाहिए, क्योंकि जैसा कर्म किया फल भी वैसा ही प्राप्त होगा।

कबीर कहते हैं कि मनुष्य को अपनी वाणी में भी मिठास लानी चाहिए। हमें ऐसी बोली अपनानी चाहिए जिससे सूनने वाले का दिल न दुखे क्योंकि मीठी वाणी बोल कर हम दूसरे को भी प्रसन्नता देते हैं और साथ हीहमारा मन भी निर्मल होता है। वह कहते हैं यदि कोई हमारी निंदा करता है तो हमें उससे घृणा नहीं करनी चाहिए।बल्कि उसे अपने घर के आंगन में ही कूटियां बनाकर दे देनी चाहिए क्योंकि वह हमारी हर समय कमियाँ निकाले। हमें अपनी कमियों का ज्ञान होगा तो हम उसमें सुधार भी ला सकते हैं। इसलिए निन्दक हमारे लिए अच्छा है उससे घृणा न करें।जो लोग ऊँचे कुल में जन्म लेकर अभिमान करते हैं और निम्न कुल में जन्में लोगों को हीन समझते हैं ऐसे लोगों पर कटाक्ष करते हुए वे उन्हें यह सीख देते हैं कि यदि आपके कर्म ऊँच नहीं हैं तो ऊँचे कुल में जन्म लेने से भी कोई लाभ नहीं होगा क्योंकि–

ऊँचे कुल क्या जनमियाँ, जो करणी ऊँच न होइ।
सोवन कलस सुरे भर्या, साधू निंद्या सोई।।

अर्थात् सोने के कलस में यदि मदिरा भरा हो तो साधू उसकी निंदा ही करेंगे। इसलिए ऊँच कुल में जन्म लेने के उपरान्त यदि आपके कर्म नीच हैं तो आपकी समाज में प्रसन्नता नहीं होगी। इसलिए जन्म पर नहीं कर्म पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। सुकर्म ही हमें उच्च बनाते हैं।

1.5 सारांश

इस प्रकार कहा जा सकता है कि कबीर ने अपनी मर्मस्पर्शी वाणी द्वारा तत्कालीन धार्मिक पाखण्डों एवं सामाजिक कुरीतियों को दूर करके जनसाधारण को सरल–जीवन, सत्याचरण, सात्विक व्यवहार, पारस्परिक एकता, समता आदि की ओर उन्मुख करने का जो सराहनीय कार्य किया है, इसी के परिणामस्वरूप वे एक उच्च कोटि के समाज–सुधारक कहलाते हैं।

1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) *'लघुता ते प्रभुता मिलै, प्रभुता ते प्रभु दूर।*
चींटी शक्कर लै चली, हाथी के सिर धूर। पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

प्र2) **पाठ्यक्रम में निर्धारित साखियों का सार लिखिए।**

....

....

....

....

प्र3) **साखी किसे कहते हैं? स्पष्ट करें।**

....

....

....

....

प्र4) कबीर के गुरु विषयक विचारों को स्पष्ट करें।

....

....

....

. प्र4) कबीर के गुरु विषयक विचारों को स्पष्ट करें।

....

....

....

प्र5) कबीर के ईश्वर संबंधी विचारों को सोदाहरण स्पष्ट करें।

....

....

....

प्र6) कबीर की साखियों से प्राप्त व्यवहारिक ज्ञान पर सोदाहरण चर्चा करें।

....

....

....

1.7 पठनीय पुस्तकें

1. काव्य सुमन– सं. महेन्द्र कुलश्रेष्ठ
2. प्राचीन काव्य– डॉ. कृष्णा रैणा
3. कबीर ग्रन्थावली– डॉ. पुष्पपाल सिंह
4. हिन्दी के प्राचीन कवि– डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना

***

B.A. Sem-Ist **Lesson No. 2**

COURSE CODE : HI-101 **भाग (क) काव्य** **Unit-I**

कबीरदास का व्यक्तित्व एवं साहित्यिक विशेषताएँ

2.0 रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 कबीरदास का व्यक्तित्व

2.4 कबीरदास की साहित्यिक विशेषताएँ

2.5 सारांश

2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.7 पठनीय पुस्तकें

2.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययनोपरान्त आप–

– कबीरदास के जीवन का ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे।

– कबीरदास के काव्य की विशेषताओं से अवगत होंगे।

2.2 प्रस्तावना

कबीर अरबी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है महान। अन्य मध्यकालीन विभूतियों के समान ही कबीर के समय, जाति, जन्मस्थान तथा जीवन की विभिन्न घटनाओं के बारे में विद्वान एकमत नहीं हैं। स्वयं कबीर ने अपने सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से कुछ भी नहीं कहा है। उनके समकालीन माने जाने वाले व्यक्ति भी उनकी ओर केवल संकेत करते रह गए हैं। कबीर के बारे में आरम्भ से ही अनेक चमत्कारपूर्ण घटनाओं का प्रचार रहा।

2.3 कबीरदास का व्यक्तित्व

कबीर के जन्मकाल के सम्बन्ध में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है। उन्हें सिकन्दर लोदी (शासनकाल संवत् 1546–1576) का समकालीन मानते हुए डॉ. रामकुमार शर्मा ने उनका जन्म संवत् 1455 (सन् 1398) में सिद्ध किया है। डॉ. माताप्रसाद गुप्त, डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत आदि विद्वान तथा अनेक कबीरपंथी साधु संवत् 1455 को ही कबीर का जन्मवर्ष मानते हैं। 'कबीर चरित्रबोध' नाम एक कबीरपंथी ने लिखा है– ''सम्वत् चौदह सौ पचपन विक्रमी जेठ सुदी पूर्णिमा सोमवार के दिन सत्पुरुष का तेज काशी लहतारा में उतरा। इसके सम्बन्ध में निम्न पद्य प्रचलित हैं–

चौदह सौ पचपन साल गये, चंद्रवार एक ठाठ ठए।
जेठ सुदी वरसायत को, पूरनमासी प्रकट भए।।
धन गरजे दामिनी दमके, बूँदें बरसे झर लाग गए।
लहर तालाब में कमल खिले, तहं कबीर भानु प्रकट भए।।

संवत् 1455 में जन्म मानने वाले अनेक विद्वान कबीर की मृत्यु संवत् 1575 (सन् 1518) में मानते हैं। पं. रामचंद्र शुक्ल, डॉ. श्यामसुन्दर दास आदि विद्वान कबीर के 120 वर्ष तक जीवित रहने की बात का समर्थन करते हैं। कबीर के मृत्युकाल से सम्बन्धित एक प्रचलित छन्द निम्न है–

संवत् पन्द्रह सौ पछतरा, किया मगहर को गवन।
माघ शुदी एकादशी, रला पवन में पवन।

कबीर के जन्मस्थान के बारे में भी विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान उनका जन्मस्थान मगहर, कुछ आजमगढ़ (उ.प्र.) का बेलहरा गाँव मानते हैं परन्तु अधिकांश विद्वान कबीर को काशी में जन्मा मानते हैं। कबीर की रचनाओं में बार–बार काशी का उल्लेख प्राप्त होता है। काशी से उन्हें बहुत प्रेम भी रहा। 'बहुत बरस तप कीया कासी', 'सकल जन्म सिवपुरी गैवाया' आदि कबीर के कथन यह प्रमाणित करते हैं कि उनका अधिक समय काशी नगरी में ही व्यतीत हुआ था। कबीर ने बार–बार स्वयं को काशी का जुलाहा कहा है। अतः कबीर का जन्म काशी ही होना चाहिए।

कबीर की जाति का प्रश्न भी विवादास्पद रहा है। इस सम्बन्ध में मुख्यतः दो मत प्रसिद्ध हैं। एक मत उन्हें मूलतः हिन्दू बतलाकर उनके 'कोरी' जाति का होने का अनुमान करता है। दूसरा मत उन्हें जन्म से लेकर मरणोपरन्त

तक जुलाहा मानता है। एक किंवदन्ती बहुत प्रचलित है कि वे वस्तुतः किसी विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से उत्पन्न हुएथे, माता ने अपनी लाजरक्षा हेतु उन्हें बनारस में लहरतारा तालाब के पास छोड़ दिया था। वहाँ से उठाकर नीरू और नीमा नामक जुलाहा दम्पत्ति ने उनका पालन–पोषण किया। स्वयं कबीर ने स्वयं को काशी का जुलाहा कहा है। कबीर के मुस्लिम संस्कारों के चिन्ह उनकी रचनाओं में स्थान–स्थान पर मिलते हैं। अतः कबीर को जुलाहा मानना ही उपयुक्त प्रतीत होता है। कबीर हिन्दू थे या मुसलमान, यह विवाद उनकी मृत्यु के बाद भी उत्पन्न हुआ था। देवकथा है कि ऐसा विवाद उठाने पर उनका शव पुष्पों में परिवर्तित हो गया था।

कबीर के माता–पिता, पत्नी, पुत्र–पुत्री आदि के बारे में अनेक मत हैं। कबीरपंथी मानते हैं कि कबीर एक ज्योति के रूप में उत्पन्न हुए थे। यह ज्योति काशी के लहर तालाब में पुरइन के पत्ते पर बालक के रूप में अवतरित हुई। लोक–प्रचलित किंवदन्ती है कि नीरू–नीमा जुलाहा ने उनका पालन–पोषण किया तथा वे ही कबीर के सांसारिक माता–पिता थे। कबीर विवाहित थे अथवा नहीं, ये भी निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। कुछ लोग मानते हैं कि कबीर जैसे महान त्यागी पुरुष का गृहस्थी से क्या सम्बन्ध? परन्तु कबीर की रचनाओं से उनकी पत्नी और पुत्र–पुत्री के बारे में कुछ संकेत प्राप्त होते हैं जिनके अनुसार लोई नाम की उनकी विवाहिता पत्नी थी और कमाल–कमाली उनकी दो संतानें। कबीर स्वामी रामानन्द के दीक्षित शिष्य थे। स्वामी जी के प्रत्यक्ष सम्पर्क में रहकर कबीर ने उनसे उपदेश ग्रहण किया था कबीर स्वतन्त्र प्रवृति के व्यक्ति थे। उनका तमाम सन्तों, साधुओं, सूफियों, पीरों से सत्संग होत रहता था, परन्तु वह किसी सम्प्रदाय विशेष की परिधि के भीतर सीमित नहीं थे। वे वस्तुतः सत्य के पुजारी थे। वे उसी के अन्वेषण तथा अनुभूति में निरन्तर प्रवृत्त रहते थे। वे सत्य तक पहुँचने के लिए उपेक्षित शुद्ध हृदय और मस्तिष्क के स्वामी थे।

कबीर का व्यक्तित्व नितान्त सहज, उन्मुक्त और पूर्ण निर्भीक था। वह निष्पक्ष और मानवतावादी थे। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर के व्यक्तित्व का निरूपण इन शब्दों में किया है– "वे सिर से पैर तक मस्तमौला, स्वभाव से फक्कड़, आदत से अक्खड़, भक्त के सामने निरीह, भेषधारी के आगे प्रचंड, दिल के साफ, दिमाग के दुरुस्त, भीतर से कोमल, बाहर से कठोर, जन्म से अस्पृश्य, कर्म से वंदनीय थे। युगावतार की शक्ति और विश्वास लेकर वे पैदा हुए थे और युग प्रवर्त्तक की दृढ़ता उनमें वर्तमान थी।"

2.4 कबीरदास की साहित्यिक विशेषताएँ

कबीर पढ़े–लिखे नहीं थे। उन्होंने स्वयं ही कहा है' मसि कागद तो छुओ नहिं, कलम गह्यों नहिं हाथ।' अशिक्षित होते हुए भी इन्होंने अपनी वाणी के रूप में श्रेष्ठ कविता दी है। इनके शिष्यों ने उनकी रचनाओ का संकलन

किया। 'बीजक' नाम से उनकी रचनाओं का संकलन इनके शिष्य 'धर्मदास' द्वारा किया गया है। 'बीजक' के अतिरिक्त बाबू श्यामसुन्दर दास ने उनकी रचनाओं का संकलन 'कबीर ग्रन्थावली' में किया है। 'बीजक' में कबीर की वाणियें का जो संग्रह किया है उसे तीन भागों में विभाजित किया गया है– साखी, सबद, रमैणी। इनका परिचय इस प्रकार है–

1. **साखी** :– कबीर ग्रंथावली, बीजक आदि में कबीर के जो दोहे संकलित हैं उन्हें 'साखी' कहा जाता है। 'साखी' शब्द संस्कृत के 'साक्षी' शब्द का रूपांतरण है, जिसका अर्थ है– गवाही अर्थात् साक्षात्कृत अनुभूतियों का वर्णन। ये साखियाँ कबीर की आध्यात्मिक अनुभूतियों की गवाह या साक्षी हैं। बीजक में साखी को ज्ञान की आँख कहा गया है– साखी आँखी ज्ञान की समुझ देखि मन मांहि। कबीर की साखियों की संख्या लगभग 800 है।

2. **सबद** :– कबीर के लिखे पद 'सबद' कहलाते हैं। कबीर के शिष्यों ने गुरु की वाणी को 'सबद' कहा है। सबद के रूप में कबीर के जिन पदों का संग्रह किया गया, वे कबीर की आध्यात्मिक अनुभूतियाँ हैं, जिन्हें वे अपने उपदेश के रूप में शिष्यों से कहते हैं। कबीर के 'सबद' राग–रागिनियों में निबद्ध हैं। कबीर के सबदों की संख्या 115 है।

3. **रमैनी :–** 'रमैनी' वस्तुतः 'रामायण' का अपभ्रंश है। बीजक में कबीर द्वारा रचित 84 रमैनी संकलित हैं। यह दोहा–चौपाई शैली में है, किन्तु कितनी चौपाइयों के बाद दोहा आएगा, इसका कोई नियम नहीं है। रमैनी में सृष्टि रचना का वर्णन प्रमुखता से किया गया है। एक अन्य व्याख्या के अनुसार जीव इस सांसारिक माया में रमा रहता है। अर्थात् माया में रमण करता है, इसलिए इन्हें रमैनी कहा गया है। राम नाम ही सार तत्व है यही इसमें समझाया गया है।

कबीर भक्त और कवि बाद में थे, समाज सुधारक पहले। इनकी कविता में अनुभूति की सच्चाई एवं अभिव्यक्ति का खरापन है। इनके साहित्य की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

निर्गुण की उपासना :–

सन्त कवि कबीर निर्गुणोपासक थे। वे ईश्वर को निर्गुण, निराकार, अजन्मा, अविनाशी एवं सर्वव्यापी मानते हैं। कभी–कभी वे इस निर्गुण को राम, गोविन्द, हरि आदि नामों से भी पुकारते हैं। कबीर राम की उपासना पर बल देते हैं लेकिन इनके राम रघुनाथ नहीं हैं, इनकी राम के विषय में अवधारणा है–

दशरथ सुत तिहुं लोक बखाना।
राम नाम का मरम है आना।।

कबीर के अनुसार वह परम तत्व पुष्प गंध से भी पतला है तथा उसकी रूपरेखा कुछ भी नहीं है। वह कहते हैं कि आत्मा को परम तत्व की अनुभूति के लिए किसी मध्यस्थ, पुस्तकीय ज्ञान या लौकिक समझ की जरूरत नहीं है। किसी सहयोग के बिना ही व्यक्ति अपने साध्य को प्राप्त कर सकता है 'साक्षी' का अनुभव करने हेतु किसी दूसरे की जरूरत नहीं है। बल्कि सच्चाई यह है कि किसी दूसरे की मौजूदगी में परम सत्ता से तादात्म्य में बाधा उत्पन्नहो सकती है। यह निर्गुण नामस्मरण पर बल देते हुए कहते हैं–

निर्गुन राम जपहु रे भाई।
अविगत की गति लखी न जाई।।

कबीर ऐसे नाम स्मरण का विरोध करते हैं जिसमें मन दसों – दिशाओं में घूमता रहता है। यह तो एकाग्रचित्त होकर ईश्वर के नाम जप का समर्थन करते हैं। क्योंकि ईश्वर मनुष्य के हृदय में वास करता है इसलिए उसे एकाग्रचित्त होकर ही पाया जा सकता है।

सदगुरु का महत्व :–

कबीर गुरु की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए उसे ईश्वर से भी बड़ा दर्जा देते हैं। गुरु ही ब्रहम् का साक्षात्कार कराता है, वही ज्ञान–नेत्र खोलता है। 'गुरुदेव कौ अंग' शीर्षक से संकलित साखियों में कबीर ने गुरु की महत्ता प्रतिपादित की है। गुरु की प्रतिष्ठा इन्होंने नाथपन्थ से ग्रहण की है। साधना के मार्ग में कबीर गुरु को अत्याधिक महत्व देते हैं। उनके अनुसार गुरु अपने शिष्य के बाहयाचार और मानसिक चिंतन का परिष्कार करता है–

गुरु कुम्हार सिश कुंभ है गढ़–गढ़ काढ़ै खोट।
अन्तर हाथ सहार दे बाहै बाहै चोट।।

वह कहते हैं गुरु की कृपा से ईश्वर के प्रति अनुराग पैदा होता है–

सतगुरु हम पर रीझि कर, कहया एक प्रसंग।
बरस्या बादल प्रेम का, भीजि गया सब अंग।।

यदि गुरु की कृपा न हो तो हमें ईश्वर की प्राप्ति भी नहीं होगी। इसलिए गुरु ईश्वर से भी बड़ा है।

रहस्यवाद :–

कबीर काव्य में रहस्यवाद की प्रवृत्ति परिलक्षित होती है जो दो खण्डों में सामने आती है–

(1) भावनात्मक रहस्यवाद

(2) साधनात्मक रहस्यवाद

दाम्पत्य प्रतीकों के माध्यम से इन्होंने निर्गुण ब्रह्म के साथ माधुर्य भाव की भक्ति का समावेश करते हुए भावनात्मक रहस्यवाद का विधान किया है। कबीर का पद 'दुलहिनी गावहु मंगलचार' इसी प्रकार का भावात्मक रहस्यवादी पद है। दूसरी ओर कुण्डलिनी योग से सम्बन्धित पदों में उन्होंने साधनात्मक रहस्यवाद का विधान किया है। कबीर के काव्य में हठयोग साधना एवं कुण्डलिनी योग का जो विवरण मिलता है उसका सम्बन्ध भी नाथपन्थ से है। परिभाषिक शब्दावली उन्होंने नाथपन्थ से ग्रहण की है। कुण्डलिनी साधना वाले उनके पदों में आचार्यरामचन्द्र शुक्ल ने साधनात्मक रहस्यवाद माना है। ऐसा एक पद उद्धृत है–

अवधू गगन मण्डल घर कीजै।

अमृत झरै सदा सुख उपजै बंकनालि रस पीजै।।

कुण्डलिनी मूलाधार चक्र में सुषुप्तावस्था में रहती है। योगी साधना द्वारा इसे जाग्रत करता है और यह षट चक्रों का भेदन करती हुई सहस्रार चक्र में पहुंचती है। जहां ब्रह्मरंध्र से झरने वाले अमृत रस का पान करतीहै।

भक्ति भावना :–

कबीर की कविता का मूल स्वर भक्ति है। वे भक्ति को भवसागर से मुक्ति का साधन मानते हैं। इस भक्ति के अभाव में ही मानव 'भव–जल' में डूबता है–

भगति बिन भौजलि डूबत है रे।

भक्ति से भवसागर भी गोपद के समान सुगमता से तरने योग्य हो जाता है–

भाव भगति हित बोहिया सदगुरु खेवन हार।
अलप उदिम तब जांणिये जब गोपद खुर विस्तार।।

अर्थात् संसार रूपी सागर से पार जाने के लिए भक्ति भाव ही जहाज है जिसके खेवनहार (मल्लाह) सद्गुरु हैं। भक्ति से भव सागर 'गोपद' से बने गड्डे में भरे जल जैसा सुगमता से पार करने योग्य हो जाता है।

बहुदेववाद व अवतारवाद का विरोध :–

कबीर एक ही ईश्वर में विश्वास रखते हैं। उनका मानना है कि एक ही ईश्वर सर्वव्यापक है। सभी धर्मों, मतों आदि के मार्ग अंततः इसी ओर जाते हैं। नामों के आधार पर संघर्ष व्यर्थ है क्योंकि एक ही परम ब्रह्म से सबकी उत्पत्ति होती है और अंततः सब उसी में लीन हो जाते हैं–

प्राणी ही ते हिम भया, हिम ह्वै गया बिलाइ।
जो कुछ था सोई भया, अब कुछ कहा न जाई।।

अतः वह ईश्वर की अज्ञात सत्ता पर विश्वास कर बहुदेववाद या अवतारवाद का खण्डन करते हैं।

आडम्बरों का विरोध :–

कबीर बाह्याडम्बरों का विरोध करते हैं। मूर्ति पूजा, तीर्थाटन, व्रत, रोजा, नमाज में इन्हें कोई विश्वास न था। हिन्दू–मुसलमान दोनों को इन्होंने अन्धविश्वासों, रूढ़ियों, धर्मान्धता के लिए फटकारा। मूर्तिपूजा पर कटाक्ष करते हुए इन्होंने कहा है–

पाहन पूजै हरि मिलै, तो मैं पूजूं पहार।
घर की चाकी कोई न पूजै, पीस खाय संसार।।

कबीर की वाणी का प्रहार इतना तीव्र होता है कि वो श्रोता को हिला देता है।

कंकर पत्थर जोरि के, मस्जिद लई बनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय।

कबीर के इसी आक्रमणकारी दृष्टिकोण के कारण इन्हें युगांतकारी और विद्रोही कवि के रूप में मान्यता मिली है। ये धर्म के सामान्य तत्वों–सत्य, अहिंसा, प्रेम, करुणा, संयम, सदाचार को मानव के लिए आवश्यक मानते हैं। यह ज्ञान की महत्ता को प्रतिपादित करते हैं। यह ज्ञान वेद–पुराणों या कुरान से नहीं, अपितु चित्त की निर्मलता एवं हृदय की पावनता से प्राप्त किया जाता है। ज्ञान दशा में ही ब्रह्म का साक्षात्कार होता है। विवेक युक्त ज्ञान दृष्टि से व्यक्ति

को अज्ञान, अन्धविश्वास एवं पाखण्ड से मुक्त करती है। ज्ञान की अग्नि जब माया के जल में लगती है वो विषय–वासना का कीचड़ नष्ट हो जाता है।

अगिनि जु लागी नीर में बन्दू जलिया झारि।
उत्तर–दक्षिण के पंडिता रहे बिचारि–बिचारि।।

अतः कबीर काव्य में शास्त्र का विरोध करते हुए स्वानुभूति पर बल दिया गया है। उनकी उक्ति में खरापन एवं निर्भीकता है जिसे जनता ने पसन्द किया।

माया का विरोध :–

कबीर काव्य में अद्वैववादी दर्शन को स्थान मिला है। इनकी दार्शनिक मान्यताएं शंकर के अद्वैव दर्शन से प्रभावित है। ब्रह्म और जीव की एकता का प्रतिपादन, माया का अस्तित्व स्वीकारना, ईश्वर को निर्गुण–निराकार बताना, आत्मा की सर्वशक्तिमता का प्रतिपादन– सब कुछ शंकर के अद्वैत दर्शन के अनुरूप है। कबीर के अनुसार माया ने सभी को ठगा है। मनुष्य–देवता, राजा–रंक, ऋषि–मुनि–गृहस्थ, भक्त–योगी आदि में से कोई उसके प्रभाव से नहीं बच सका। माया सर्वत्र व्याप्त है और वह परमात्मा से तादात्म्य की राह मे हमेशा रोड़ा अटकाती है। कबीर ने अपने काव्य में माया के विविध रूपों का वर्णन किया है। व्यावहारिक दृष्टि से उन्होंने माया के दो भेद किए हैं– विद्या माया और अविद्या माया। 'विद्या माया' ब्रह्म की शक्ति है। कबीर कहते हैं कि यह माया ईश्वर के साक्षात्कार में सहायक होती है। लेकिन इसके लिए कठोर साधना से गुजरना पड़ता है। 'अविद्या माया' मानसिक विकारों एवं मिथ्या ज्ञान से उत्पन्न होती है। काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह आदि इसके कारण होते हैं। माया को कबीर पापिणी, मोहनी, महाठगिनि, सांपिनि और डाकणी कहकर पुकारते हैं। वह कहते हैं–

माया जग सांपिनि भई, विष लै बैठी पास।
सब जग फंदे फंदिया, चले कबीर उदास।।

कबीर ने मन और माया का घनिष्ठ सम्बन्ध माना है। जब मन में काम, क्रोध, तृष्णा, ईर्ष्या, मोह आदि नहीं होंगे तो माया, मन को अपने प्रभाव में नहीं ले पाएगी लेकिन जब भी मन कमजोर होगा, माया उसमें घर बनाकर बैठ जाएगी। इसलिए कबीर ने माया के प्रभाव से मुक्त होने के लिए मन को नियन्त्रित करने की बात कही है।

मानवतावादी दृष्टिकोण :–

समाज के प्रति कबीर की दृष्टि विशुद्ध मानवतावादी है। वे ऐसे सामाजिक व्यवहार और धार्मिक मान्यताओं, मूल्यों की स्थापना पर जोर देते हैं जो सभी को स्वीकार्य हों । वे मानव को आदर्श नागरिकता का पाठ पढ़ाते हैं–

कबीर लोहा एक है, गढ़ने में है फेर।
ताहि का बख्तर बने, ताहि की शमशेर।।

अर्थात् लोहा तो एक है लेकिन उसकी बख्तर अर्थात् सुई बनती है जो सीलने के काम आती है और उसी लोहे की शमशेर भी बनती है जो सिर्फ काटती है। अतः मनुष्य को भी नैतिक मूल्यों को ही अपनाना चाहिएताकि किसी को उनसे कष्ट न हो। कबीर सबल भी हैं और अक्खड़ भी। वे सत्य के पक्ष में मजबूती से खड़े हैं। अच्छाईको सामने लाने के लिए क्या कीमत चुकानी पड़ेगी, वे इसकी परवाह नहीं करते। वे किसी खेमे में बंधकर नहीं बल्कि मानवता के पक्ष में आवाज़ उठाते हैं। वे व्यक्ति को सुधारने के लिए चिकनी–चुपड़ी बात नहीं करते, खरी–खरी सुनाते हैं। उन्हें पंडितों को झूठा कहने में भी डर नहीं लगता और न ही मुल्लाओं की असलियत को उजागर करने में–

बकरी पाती खात हैं, तिनकी काढ़ी खाल।
जे नर बकरी खात हैं, तिनके कौन हवाल।।

राजतंत्र और सामंतवादी व्यवस्था में जनता के लिए कोई स्थान नहीं था। कबीर का प्रहार बहुफलकीय है। वे सड़ चुकी व्यवस्थाओं को नष्ट करने को आतुर हैं। उनके लिए 'ढाई आखर' ही सब कुछ है। क्योंकि कबीर का कहना है कि जिसने व्यक्ति एवं समाज से 'प्यार' करना सीख लिया, वही सच्चे अर्थों में पंडित है–

पोथी पढ़ि–पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोई
ढाई आखर प्रेम का, पढ़ै सो पंडित होई।।

कबीर आचरण पर जोर देते हैं। गोरखनाथ की तरह इनका भी स्पष्ट मत है कि कथनी और करनी में अंतर नहीं होना चाहिए।

नारी विषयक दृष्टिकोण :–

कबीर के नारी सम्बन्धी विचार मूलतः दो बातों पर आधारित हैं। कबीर के अनुसार दो तरह की नारियां होती हैं। एक नारी तो साधना में बाधा नहीं बनतीं और वह नारी है पतिव्रता। दूसरी नारी जो साधना में अवरोध पैदा करती है उसे कबीर ने तिरस्कृत किया है, जिससे ज्ञात होता है कि मूलतः कबीर नारी के विरोधी नहीं थे। कबीर का मानना है कि उपासना और ध्यान में नारी का त्याग आवश्यक है। कबीर न तो हर जगह नारी की स्तुति करते हैं और न ही हर जगह भर्त्सना। वे परस्त्री को भोगने का विरोध करते हैं–

पर नारी पैनी छुरी, मति कोई करो प्रसंग
रावन के दश शीश गये, पर नारी के संग।

अर्थात् परस्त्री का संग नहीं करना चाहिए। परनारी पैनी छुरी की तरह होती है, परनारी का संग करने से रावण के दस सर भी चले गए, रावण का अंत हो गया। वहीं पतिव्रता की प्रसन्नता करते हुए वह कहते हैं–

पतिवरता मैली भली, काली कुचिल कुरूप
पतिवरता के रूप पर बारौं कोटि स्वरूप।

अर्थात् ऐसी नारी जो अपने पति को समर्पित है, पतिव्रता है भले ही वो मैली–कुचैली, कुरूप क्यों न हो कबीर ऐसी नारी को श्रेष्ठ मानकर नमन करते हैं।

भाषा :–

कबीर की भाषा अपरिष्कृत है। साहित्यिक भाषा के स्थान पर बोलचाल की भाषा का प्रयोग वे अपने वाक्य मे करते थे। देशाटन के कारण उनकी भाषा में अनेक बोलियों एवं भाषाओं का मिश्रण दिखाई पड़ता है। ब्रज, अवधी, खड़ी बोली, राजस्थानी, पंजाबी, फारसी, अरबी शब्दों के मिले–जुले रूप के कारण आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने उनकी भाषा को सधुक्कडी भाषा या पंचमेल खिचड़ी भाषा कहा है। अनगढ़ भाषा होने पर भी उनकी भाषा भाव सम्प्रेषण में पूर्ण सफल है। उसकी शक्ति एवं सामर्थ्य के कारण आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी ने इन्हें 'वाणी का डिक्टेटर' तक कह दिया है। इनके काव्य में अलंकारों का प्रयोग चमत्कार प्रदर्शन के लिए न होकर भावों के उत्कर्ष के लिए हुआ है। वस्तुतः वे पिंगल शास्त्र के क, ख, ग से भी परिचित न थे। अतः काव्य में अलंकारों का समावेश कर सकने की शक्ति एवं सामर्थ्य

उनमें थी ही नहीं। यह बात अलग है कि उनका काव्य अलंकार विहीन नहीं है। उसमें अनायास ही उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, विरोधाभास का समावेश हो गया है। 'उपमा' अलंकार का एक उदाहरण दृष्टव्य है–

पानी केरा बुदबुदा अस मानस की जात।

देखत ही छिप जाएगा, ज्यूं तारा परभात।।

अपनी आध्यात्मिक अनुभूतियों को बोधगम्य बनाने के लिए उन्होंने प्रतीकों का सहारा लिया है। अलौकिक प्रेम एवं रहस्यवादी भावना को व्यक्त करने के लिए उन्होंने दाम्पत्य प्रतीकों का प्रयोग किया है। इनकी उलटबासियों में भी प्रतीकों का खूब प्रयोग हुआ है। जैसे–

समुन्दर लगी आग नदियां जलि कोइला भई।

देख कबीरा जाग मंछी रुखा चढ़ि गई।।

यहाँ समुन्दर मूलाधार चक्र, नदियां चित्रवृत्तियों और मंछी कुण्डलिनी जैसे प्रतीकों का प्रयोग किया गया है। इनके काव्य में लयात्मकता और नादात्मकता मौजूद है। चूंकि उनके प्रायः सभी पद गेय श्रेणी में हैं, इसलिए उनकी रचना में छंदविधान का पालन भी हुआ है। अतः कबीर का काव्य शिल्प–विधान भी कसौटी पर पूरी तरह खरा उतरता है।

2.5 सारांश

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि कबीर भले ही एक समाज सुधारक और भक्त के रूप में लोकप्रिय रहे हों किन्तु उनकी कविता में काव्यत्व के उपादान भी प्रभूत मात्रा में उपलब्ध हो जाते हैं। कविता करना कबीर का उद्देश्य न था। वे तो अपनी बात कहने के लिए कविता का सहारा लेते थे। इसीलिए उनकी काव्यकला सहज और अनगढ़ है। उसमें कला का चमत्कार भले ही न हो, किन्तु अनुभूति की सचाई एवं अभिव्यक्ति का खरापन उसमें विद्यमान है, इसीलिए वे जन कवि के रूप में प्रसिद्ध हुए। भारतीय जनता में तुलसी और कबीर ही दो ऐसे कवि हैं जिनकी उक्तियां लोगों की ज़वान पर चढ़ी हुई हैं। किसी भी प्रसंग में कबीर की साखी का उदाहरण लोग प्रस्तुत कर देते हैं– यह कबीर की लोकप्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण है।

2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) कबीर के व्यक्तित्व पर चर्चा करें।

....

....

....

....

प्र2) कबीर काव्य की विशेषताओं पर प्रकाश डालें।

....

....

....

....

प्र3) कबीर के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए इनके साहित्य की विशेषताओं पर चर्चा करें।

....

....

....

....

प्र4) कबीर की भाषा पर संक्षिप्त टिप्पणी करें।

....

....

....

....

प्र5) कबीर के रहस्यवाद पर संक्षिप्त टिप्पणी करें।

....

....

....

....

2.7 पठनीय पुस्तकें

1. काव्य सुमन– सं. महेन्द्र कुलश्रेष्ठ
2. प्राचीन काव्य– डॉ. कृष्णा रैणा
3. कबीर ग्रन्थावली– डॉ. पुष्पपाल सिंह
4. हिन्दी के प्राचीन कवि– डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना

***

सूरदास के पदों की व्याख्या तथा पठित पदों पर आधारित प्रश्न

3.0 रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 सूरदास के पदों की व्याख्या

3.4 पठित पदों पर आधारित प्रश्न

3.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.6 पठनीय पुस्तकें

3.1 उद्देश्य

– प्रस्तुत अध्याय के अन्तर्गत पाठ्यक्रम में निर्धारित विनय एवं भक्ति, बाल लीला तथा भ्रमरगीत के पदों की व्याख्या की गई है जिसके आधार पर आप सूरदास के भावपक्ष एवं कला पक्ष को समझ पाएंगे।

– इसी अध्याय के अन्तर्गत सूरदास की भक्ति भावना, भ्रमर गीत परम्परा, भ्रमर गीत के स्रोत को जानेंगे तथा बाललीला के अन्तर्गत यशोदा और श्री कृष्ण के संवादों के माध्यम से सूरदास के वात्सल्य वर्णन का आनद ले पाऐंगे।

3.2 प्रस्तावना

सूरदास जी भक्तिकाल की सगुण भक्तिधारा की कृष्ण काव्यधारा के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। इन्होंने कृष्ण की सखा भाव से उपासना की। पुष्टीमार्गीय भक्ति में विश्वास रखकर इन्होंने कृष्ण कृपा को ही सर्वोपरि माना और कृष्ण के

लोक–रंजक रूप का वर्णन किया। जहाँ सूरदास का बाल लीला वर्णन अद्धितीय है वहीं सूरदास द्वारा रचित भ्रमर गीत विरह में व्यथित गोपियों की दशा का चित्रण निर्गुण पर सगुण की विजय को प्रतिपादित करता है ।

3.3 सूरदास के पदों की व्याख्याएँ

<u>विनय एवं भक्ति</u>

1) *चरन–कमल बंदौं हरि–राई।*

जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अँधे को सब कछु दरसाई।।

बहिरौ सुनै, मूक पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र धराइ।

सूरदास स्वामी करुनामय बार–बार बंदौ तोहि पाइ।।

शब्दार्थ :– राई = राजा, पंगु = लंगड़ा, लघै = लांघ जाना, मूक = गूंगा, रंक = निर्धन, गरीब, छत्र धराई = राज छत्र धारण करके, तेहि = तिनके, पाई = चरण

प्रसंग :– प्रस्तुत पद पाठ्यपुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित विनय एवं भक्ति से लिया गया है। इसमें सूरदास ने अपने आराध्य की चरण–वंदना से अपने महान ग्रन्थ 'सूरसागर' का शुभारम्भ किया है। इसमें कवि ने अपने आराध्य श्रीकृष्ण की सर्वशक्तिमत्ता और असीम कृपालुता को प्रस्तुत किया है।

व्याख्या :– इन पंक्तियों में सूरदास जी श्री कृष्ण की महिमा का बखान करते हुए कहते हैं कि जिस पर श्री हरि की कृपा हो जाती है, उसके लिए असम्भव कार्य भी संभव हो जाता है। अंधे को गुप्त रूप से एवं प्रकट रूप से देखने की शक्ति मिल जाती है। बहरा व्यक्ति अपने कानों से सुनने लगता है और गूंगा व्यक्ति बोलने की शक्ति प्राप्तकर लेता है। निर्धन एवं कंगाल व्यक्ति श्री हरि की कृपा होने पर राजा–छत्र धारण कर लेता है। सूरदास जी कहते हैकि ऐसा करुणमय प्रभु की पद–वन्दना अर्थात् भक्ति कोई अभागा ही होगा जो नहीं करेगा अर्थात् ऐसे प्रभु की भक्ति एवं पद–वन्दना करना बड़े ही सौभाग्य की बात होगी।

विशेष :– इस पद में सूरदास जी ने श्रीहरि को अपना सर्वस्व न्यौछावर करने की बात की है।

2) *अब कैं राखि लेहुं भगवान*

हौं अनाथ बैठ्यो द्रुभ–डरिया, पारधि साधे बान।

ताकै डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर दुक्यौ सचान।

दुहुँ भाँति दुख भयो आनि यह, कैस उबारै प्रान ?

सुमिरत ही अहि डरयौ पारधी, कर छूट्यौ संधान।

सूरदास सर लग्यों सचानहिं, जय जय कृपानिधान।।

शब्दार्थ :– अब कैं = अब की बार, हौं = मैं, राखि लेहु = रक्षा करके, प्रभु = वृक्षर, पारधि = वहेलिया, सचान = बाज पक्षी, आनि = आकर, अहि = सर्प, संधान = लक्ष्य।

प्रसंग :– प्रस्तुत पद पाठ्यपुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित सूरदास के पद 'विनय एवं भक्ति' से लिया गया है। इसमें सूरदास ने भगवान से अपनी रक्षा हेतु प्रार्थना की है। उनहोंने स्वयं को संकटग्रस्त और असहाय दिखाकर भग्वान की कृपा प्राप्त करनी चाही है।

व्याख्या :– सूरदास जी कहते हैं कि हे भगवान! इस बार तो आप मेरी रक्षा ही कीजिए। मेरी स्थिति उस अनाथ पक्षी की तरह है जो वृक्ष की डाली पर बैठा हो, नीचे से बहेलिया उस पर बाण चलाना चाहता हो और ऊपर से अपने प्राण बचाने वाला कोई नहीं दिखाई देता है तो उसका कष्ट और बढ़ जाता है। वह स्वयं को अनाथ महसूस करता है। तब वह आत्मरक्षा के लिए भगवान का स्मरण करता है और भगवान का स्मरण करते ही बहेलिये को सांप डस लेता है, इससे उसका निशाना चूक जाता है और बाण ऊपर बाज पर लग जाता है। सूरदास कहते हैं कि हे कृपानिधान! जिस तरह आपने उस पक्षी की रक्षा की उसी प्रकार आप मेरे ऊपर कृपा कीजिए और मुझे संकट से उबार लीजिए।

विशेष :– पद की भाषा ब्रज है। वर्णनात्मक शैली है, वर्णन में चित्रात्मकता है।

3) *प्रभु मेरे औगुन चित न धरो।*

समदरसी प्रभु नाम तिहारो अपने पनहि करो।

इक लोहा पूजा में राखत, इक घर बधिक परो।

यह दुविधा पारस नहिं जानत, कंचन करत खरो।

इक नदिया इक नार कहावत, मैलो नीर भरो।

जब मिलकै एक बरन भये सुरसरि नाम परो।
एक जीव इक ब्रह्मा कहावत, सूरस्थाम झगरो।
अब की बेर मोहि पार उतारो, नहिं पन जात टरो।

शब्दार्थ :– समदरसी = जो सब को एक समान से देखता हो, औगुन = अवगुण, कंचन = सोना, नीर = जल

प्रसंग :– प्रस्तुत पद पाठ्यपुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'विनय एवं भक्ति' से लिया गया है। इस पद में सूरदास जी भगवान से अपने अवगुण समाप्त करने के लिए नहीं अपितु प्रार्थना करते हैं कि श्रीहरि सूरदास के अवगुण हृदय में न धरें।

व्याख्या :– सूरदास जी कहते हैं कि हे प्रभु, हे मेरे स्वामी मेरे अवगुणों पर ध्यान मत दीजिए। आप तो समदर्शी हो उस कारण ही मेरा उद्धार अर्थात कल्याण कीजिए। जिस तरह से एक लोहा पूजा में रखा जाता है अर्थात् तलवार की पूजा होती है और एक लोहा (छुरी) कसाई के घर पड़ा रहता है किंतु पारस इस भेद को नहीं जानता, वह ते दोनों को ही अपना स्पर्श देकर उन्हें सचा सोना बना देता है। एक नदी कहलाती है और एक नाला जिसमें गंदा पानी भरा है, किन्तु जब दोनों गंगा जी में मिल जाते हैं तब उनका रूप एक–सा हो जाता है। इसी प्रकार सूरदास जी कहते हैं कि यह शरीर माया और जीव कहा जाता है किंतु माया के साथ तादात्म्य हो जाने के कारण वह ब्रह्मरूप जीव हो जाता है। अब आप या तो इनको पृथक कर दीजिए या जीव की अहंता–ममता मिटाकर उसे मुक्त कर दीजिए, नहीं तो आपकी प्रतिज्ञा जो आपने पतितों का उद्धार करने के लिए ली थी मिट जाएगी।

विशेष :– इस पद में भक्त और भगवान के बीच के मधुर सम्बन्ध को दर्शाया गया है।

बाल लीला

1) *जसोदा हरि पालनैं झुलावै।*
हलरानै, दुलराई मल्हानै जोई–सोई कछु गावै।।
मेरे लाल कौं आउ निंदरिया, काहैं न आनि सुवावै।
तू काहैं नहिं बेगिहिं आवै, तोकौ कान्ह बुलावै।।
कबहुं पलक हरि मूंद लेते हैं, कबहुँ अधर फरकावै।
सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि, करि–करि सैन बतावै।

इंहि अंतर अकुलाइ उठे हरि, जसुमति मधुरैं गानै।
जौ सुख सूर अमर–मुनि दुरलभ, सों नन्द भामिनी पावै।।

शब्दार्थ :– हलरावै = इधर–उधर हिलाना, मल्हावै = चुमकारना, निदरिया = निद्रा, बेगिहिं = शीघ्र, सैन = इशारा, इंहि अंतर = इसी बीच, नँद भामिनी = यशोदा।

प्रसंग :– कवि सूरदास जी के द्वारा रचित यह पद पाठ्य पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित सूरदास के पद 'बाल लीला' से लिया गया है। इसमें सूरदास ने बाल कृष्ण को सुला रही यशोदा और सोने जा रहे बाल कृष्ण का चित्रण किया है।

व्याख्या :– सूरदास जी कहते हैं कि यशोदा कृष्ण को पालने में झुला रही है। पालने में झुलाते हुए यशोदा पालने को इधर–उधर हिलाती है, कृष्ण को दुलारती है और चुमकारती है। यशोदा जैसा–तैसा भी गा सकती कृष्ण को झुलाते हुए गाती है। गाती हुई यशोदा निद्रा से सम्बोधित होकर कहती है कि मेरे लाल के पास तुम शीघ्र ही आओ, तुम आकर इसे सुलाती क्यों नहीं। अरी निद्रा तुम को कान्हा बुला रहा है तुम शीघ्र ही क्यों नहीं आ रही। पालने मे झूलते हुए कृष्ण कभी पलकें मूँद लेते हैं और कभी अपने होठों को फड़फड़ाते हैं। इसी से उसे सोया हुआ जानकर यशोदा गीत गाना बन्द करके मौन हो जाती है और दूसरों को इशारा करके मौन रहने का संकेत देती है। इसी बीच कृष्ण जी व्याकुल होकर उठ जाते हैं और यशोदा पुनः मीठे स्वर में गीत गाने लगती है। सूरदास जी कहते हैं कि जो सुख नंद की पत्नी यशोदा प्राप्त कर रही है, वह सुख तो देवताओं और मुनियों के लिए भी दुर्लभ है।

विशेष :– बाल मनोविज्ञान के ज्ञाता सूरदास ने यहाँ बाल मनोविज्ञान के अनुकूल ही वर्णन किया है। कृष्ण की बाल लीला के अन्तर्गत उनका वर्णन अत्यंत मनोहारी है।

2) *मैया कबहिं बढ़ैगी चोटी।*
किती बार मोहि दूध पिवत भई यह अजहुँ है छोटी।।
तू जो कहति बल की बेनी, ज्यों है, लांबी मोटी।
काढ़त गुहत न्हवावत ओंछति नागिन–सी भुँइ लोटी।।
काचो दूध पियावत पचि पचि देत न माखन रोटी।
'सूर' स्याम चिरजीव दोऊ भैया, हरि–हलधर की जोटी।।

शब्दार्थ :– अजहुँ = आज भी, बेनी = चोटी, गुहत = गूथना, = काचों = कच्चा, जोटी = जोड़ी।

प्रसंग :– कवि सूरदास जी के द्वारा रचित यह पद पाठ्य पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित सूरदास के पद 'बाल लीला' से लिया गया है। इसमें श्री कृष्ण माँ यशोदा से शिकायत करते हैं कि मैं कई बार दूध पी चुका हूँ परन्तु मेरी चोटी तो उतनी ही है, बढ़ी नहीं है।

व्याख्या :– सूरदास जी द्वारा रचित 'बाल लीला' की इन पंक्तियों में वह कहते हैं कृष्ण अपनी माँ यशोदा से पूछते हैं कि उनकी चोटी कब बढ़ेगी ? कितनी बार मैंने दूध पिया है परन्तु यह तो बढ़ी नहीं। वे माँ से कहते हैंमाँ तू तो कहती थी कि जैसे बलराम की चोटी है उसी तरह की यह लम्बी और मोटी हो जाएगी, जो कंघी करते हुए नागिन जैसी भूमि पर लोटती रहेगी। ऐसा कह कर बार–बार तुम मुझे कच्चा दूध पिलाती हो, माखन रोटी नहीं देती।सूरदास जी कहते हैं, हे श्याम हरि और हलधर यानि बलराम की जोड़ी चिरंजीव हो।

विशेष :– इन पंक्तियों में सूरदाजी जी ने बालकृष्ण के बाल–मन का सुन्दर चित्रण किया है, साथ ही बालों के सौंदर्य का अच्छा वर्णन किया है। सूरदास जी बाल मनोविज्ञान के अच्छे ज्ञाता हैं।

3) *मैया मोहिं दाऊ बहुत खिझयौ।*
मौसों कहत मोल कौ लीन्हौ, तोहिं, जसुमति कब जायौ।
कहा कहौं यहि रिस के मारे, खेलन हौं नहिं जातु।
पुनि–पुनि कहत कौन है माता, को है तेरौ तात।
गोरे नंद, जसोदा गोरी, तू कत स्याम सरीर।
चुटकी दै–दै हँसत बाल सब, सिखै देत बलवीर।
तू मोही को मारन सीखी, दाउहिं कबहुँ न खीझै।
मोहन को मुख रिस समेत लखि, जसुमति सुनि–सुनि रीझै।।

शब्दार्थ :– दाऊ = बड़े भाई, दादा बलराम, जायौ = पैदा किया, रिस = गुस्सा, तात = पिता, कत = क्यों ।

प्रसंग :– कवि सूरदास जी के द्वारा रचित यह पद पाठ्य पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित सूरदास के पद 'बाल लीला' से लिया गया है। इसमें श्रीकृष्ण माँ यशोदा से अपने बड़े भाई बलराम की शिकायत करते हैं कि माँ मुझे बलराम बहुत खिझाते हैं।

व्याख्या :– माता द्वारा रोने के कारण पूछे जाने पर कृष्ण अपने खिसियाने और हारने की बात न बताकर माता से बड़े भाई बलराम की शिकायत करते हुए कह रहे हैं– मैया मुझे बलराम बहुत खिझाते हैं। मुझसे कहते हैं कितुझे तो माता यशोदा ने मोल लिया था, उन्होंने तुझे पैदा कहाँ किया था, जन्म कब दिया था? मैं क्या करूँ, इसी गुस्से के मारे मैं उन लोगों के साथ खेलने नहीं जाता। बार–बार मुझसे यह कहते हैं कि तेरी माता कौन है, तेरा पिता कौन है। क्योंकि बाबा नन्द गोरे हैं और यशोदा माता भी गोरी है, तू ऐसे काले रंग का कैसे हो गया। दादा की बातें सुन–सुन सारे ग्वाले चुटकी बजा–बजा मुझे नचाते हैं और हँसते–मुस्कराते रहते हैं। परन्तु तू तो केवल मुझे ही मारना सीखी है, बलराम को कभी नहीं डाँटती। सूरदास जी कहते हैं कि मोहन कृष्ण के गुस्से से भरे मुख की ये बातें सुन–सुनकर यशोदा मन–ही–मन रीझ रही हैं। फिर कहने लगती है कि सुन कन्हैया, यह बलभद्र तो जन्म का ही धूर्त और शैतान है। मैं गोधन की सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि मैं माता हूँ और तू मेरा पुत्र है।

विशेष :– सरल चलती हुई भाषा की चटपटी योजना।

भ्रमर गीत

1) *ऊधो ! मन नाहीं दस बीस।*
एक हुतो सौ गयो स्याम संग, को अराध तुव ईस ?
भईं अति सिथिल सबै माधव बिनुं जथा देह बिनु सीस।
स्वासा अटकि रहे आसा लगि, जीवहिं कोटि बरीस।।
तुम तौ सखा स्यामसुन्दर के सकल जोग के ईस।
सूरदास रसिक की बतियाँ पुरबो मन जगदीस।।

शब्दार्थ :– हुतो = था, अराधै = आराधना करे, तुब = तुम्हारा, जथा = यथा जैसे, स्वासा = साँस, बरीस = वर्ष, ईस = स्वामी, अधिकारी, पुरबौ = पूरी करो।

प्रसंग :– प्रस्तुत पद पाठ्यपुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'भ्रमर गीत' से लिया गया है। इसमें गोपियां कृष्ण के मथुरा जाने पर अपनी मन की व्यथा उद्धव के समक्ष प्रकट करती हैं।

व्याख्या :– अपनी विवशता का स्पष्टीकरण करती हुई गोपियाँ उद्धव से कहती हैं कि हे उद्धव! मन तो केवल एक ही होता है, वह तो कृष्ण के साथ मथुरा चला गया। अब यह बताओ कि तुम्हारे इस ईश्वर की आराधना कौन करे

? क्योंकि अराधना तो मन से की जाती है और हमारा मन हमारे पास नहीं है फिर हम ब्रह्मा की आराधना कैसे करें ? कृष्ण के बिना हम सब गोपियाँ उसी प्रकार शिथिल अर्थात् निष्प्राण हो उठी हैं, जैसे मस्तक के कट जाने पर शरीर निष्प्राण और निश्चेतन हो जाता है। हमारे शरीर में हमारे प्राण केवल इसी आशा पर टिके हुए हैं कि कृष्ण कभी न कभी लौटकर यहाँ अवश्य आयेंगे। हम इसी आशा के सहारे करोड़ों वर्ष तक जीवित नहीं रहेंगी। अर्थात् हमसे उनके बिना प्राण भी नहीं त्यागे जा सकेंगे। गोपियाँ फिर कहती हैं हे उद्धव ! तुम तो श्यामसुन्दर कृष्ण के सखा और सम्पूर्ण प्रकार की योग–साधनाओं के स्वामी अर्थात् परम ज्ञात हो अर्थात् योग साधना द्वारा कुछ करने में पूर्ण समर्थ हो। इसलिए हमारी तुमसे केवल एक यही प्रार्थना है कि संसार के स्वामी उन रसिक कृष्ण के मन में रसिकता की कही सारी बातें पुनः उत्पन्न करदो, जो वे यहाँ किया करते थे, उनके मन में उन बातों की स्मृति हो जाने से वह यहाँ अवश्य लौट आयेंगे।

विशेष :– 1. अन्तिम दो पंक्तियों में गोपियाँ उद्धव से यह प्रार्थना कर रही हैं कि वे अपनी योग–शक्ति द्वारा कृष्ण के मन में उन पुरानी केलि–क्रीड़ाओं की स्मृति जागृत कर दें, जिससे कृष्ण उनका स्मरण कर पुनः ब्रज लौट आयें।

2. प्रस्तुत पद में काव्य और संगीत का सन्तुलित कलात्मक समन्वय–दृष्टव्य है। गेयता इस पद की प्रधान विशेषता मानी जा सकती है।

2) *ऊधो ! अंखियाँ अति अनुरागी।*
इकटक मग जोवतिं अरू रोवतिं, भूलेहुं पलक न लागी।।
बिनु पावस पावस करि राखी, देखत हौ बिदमान।
अब धौं कहा कियौ चाहत हौ ? छाँड़ौ निरगुन ज्ञान।।
तुम हौ सखा स्याम सुन्दर के, जानत सकल सुभाइ।
जैसे मिलैं सूर के स्वामी, सोई करहु उपाइ।।

शब्दार्थ :– जोवति = देखती हैं, भूलेहू = भूल से भी, कभी भी नहीं, बिदमान = विद्यमान, प्रस्तुत।

प्रसंग :– प्रस्तुत पद पाठ्यपुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'भ्रमर गीत' से लिया गया है। इन पंक्तियों में स्पष्ट होता है कि गोपियाँ श्री कृष्ण के विरह में कितनी व्यथित हैं और वे उद्धव से कृष्ण मिलन का उपाय पूछती हैं।

व्याख्या :– गोपियाँ कहती हैं कि हे उद्धव! हमारी आँखें कृष्ण–प्रेम में अत्यधिक अनुरक्त हो रही हैं। वे निरन्तर टकटकी बाँधे कृष्ण की बाट देखती और विरह–व्यथा के कारण रोती रहती हैं। कभी भूल से भी पलक नहीं झपकती। अर्थात्

उनकी प्रतीक्षा में निरन्तर जागती रहती हैं। तुम स्वयं देख रहे हो कि यहाँ बिना वर्षा ऋतु आए ही वर्षा ऋतु विद्यमान रहती है। अर्थात् कृष्ण–वियोग में हमारी आँखों से सदैव वर्षा ऋतु की सी आँसुओं की झड़ी लगती रही है। (हमारे ऐसी विणम, दुखी दशा देखकर भी तुम्हें हमारे ऊपर दया नहीं आती ?) अब और क्या करना चाहते हो हमें और कौन–सा दुख पहुँचाना चाहते हो ? अब तुम अपने इस नीरस ज्ञान का उपदेश देना बन्द कर दो।

हे श्याम सुन्दर के प्रिय सखा उद्धव! सुनो! तुम उनके प्रिय सखा हो, इसलिए उनके सम्पूर्ण स्वभाव को अच्छी तरह से जानते–पहचानते होंगे। तुम अब कोई ऐसा उपाय करो जिससे स्वामी कृष्ण हमें पुनः मिल जायें, उनसेहमारा मिलन हो जाए।

विशेष :– 1. उद्धव को खरी–खोटी सुनाने वाली गोपियाँ इस पद में अन्वन्त कातर बन उसकी खुशामद कर रही हैं। उनकी यह कातरता और उद्धव की खुशामद करना ह्रदयद्रावक है। अन्तिम पंक्तियों में उनकी प्रेम–विवशता अत्यन्त मार्मिक हो उठी है।

2. 'बिन पावस पावस ऋतु आई' में विभावना अलंकार है, क्योंकि यहाँ बिना कारण के ही कार्य हो रहा है। बिना वर्षा ऋतु के ही वर्षा ऋतु छाई है।

3) ***निसिदिन बरसत नैन हमारे।***
सदा रहत पावस ऋतु हम पर, जब ते स्याम सिधारे।।
अंजन थिर न रहत अँखियन में, कर कपोल भये कारे।
कंचुकि–पट सूखत नहि कबहुँ, उर बिच बहत पनारे।
आँसू सलिल भये पग थाके, बहे जात सित तारे।
'सूरदास' अब डूबत है ब्रज, काहे न लेत उबारे।।

शब्दार्थ :– निसिदिन = रोज, सिधारे = चले जाना, अंजन = काजल, कपोल = गाल, कंचुकि = चोली।

प्रसंग :– प्रस्तुत पद पाठ्यपुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित 'भ्रमर गीत' से लिया गया है। इन पंक्तियों में सूरदास जी ने गोपियों की विरह वेदना का चित्रण किया है कि किस तरह कृष्ण जी के चले जाने के बाद गोपियाँ उनको स्मरण करते हुए अपनी वेदना प्रकट करती हैं।

व्याख्या :– सूरदास जी कहते हैं कि गोपियाँ श्री कृष्ण को स्मरण करते हुए कहती हैं कि हे श्याम! जब से आप ब्रज छोड़ मथुरा में चले गये हैं तब से हमारे नयन नित्य ऐसे बरस रहे हैं जैसे कि वर्षा हो रही हो अर्थात हमारे आँसू सूखते ही नहीं हैं अपितु आपका स्मरण करते हुए हम दिन–रात रोती रहती हैं। रोने के कारण हमारी आँखों में काजल नहीं टिक पा रहा है अर्थात् वह आँसुओं की अविरल धारा में बहता चला जा रहा है। काजल के बहने से हमारे गाल श्याम वर्ण के होते जा रहे हैं। हमारी पहनी हुई चोली आँसुओं से इस कदर भीग जाती है कि वह सूखने का नाम ही नहीं लेती है। निरन्तर बहते आँसुओं के कारण हमारी देह ऐसा लगता है मानों जल या स्त्रोत बन गई हो जिसमें जल सदैव रिसता रहता है। सूरदास जी कहते हैं कि गोपियाँ श्री कृष्ण को पुकारते हुए कहती हैं कि हे कान्हा! हे हमारे ईशु हे हमारे सर्वस्व इन आसुओं में ब्रज डूब रहा है– आकर ब्रज वासी एवं समस्त ब्रज को आप बचा क्यों नहीं लेते।

विशेष :– इस पद में अत्यन्त कलात्मक पद्धति द्वारा विरह की अभिव्यक्ति हुई है।

3.4 पठित पदों पर आधारित प्रश्न

प्र1) पठित पदों के आधार पर सूरदास की भक्ति–भावना पर प्रकाश डालें।

उत्तर) भक्त प्रवर सरूदास भक्तिकाल की सगुण धारा के कृष्ण भक्त कवि हैं। वे बल्लभाचार्य के शिष्य थे तथा अष्टछाप के कवियों में सर्वप्रथम थे। भक्ति के क्षेत्र में वल्लभाचार्य का साधना मार्ग 'पुष्टि मार्ग' के नाम से जाना जाता है। वल्लभाचार्य के पुष्टि मार्ग में दीक्षित होने से पहले सूरदास एक सन्त थे जो सभी उपासना पद्धतियों, भक्ति प्रणालियों को समान भाव से देखते थे। पुष्टि मार्ग में आने से पूर्व सूर पर किसी विशेष भक्ति सम्प्रदाय का प्रभाव न था। उनमें ईश्वर भक्ति के प्रति अनन्यता दिखाई देती है–

मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै।
जैसे उड़ि जहाज कौ पंछी पुनि जहाज पै आवै।।

कहा जाता है कि आचार्य वल्लभाचार्य जी से भेंट से पूर्व वे विनय एवं दास्य भाव–भक्ति के पद गाया करते थे। विनय भक्ति का अविभाजन अंश है और सूरदास का आरम्भ विनय के पदों द्वारा ही होता है।

'चरण–कमल बंदौं हरि–राई' सूरसागर का यह पहला पद है जो मंगलाचरण के रूप में प्रस्तुत है। भारतीय साहित्य शास्त्र में ग्रन्थ की निर्विघ्न समाप्ति के लिए मंगलचरण को जरूरी माना जाता है। इसके तीन रूप माने जाते

हैं– 1. आशीर्वादात्मक 2. नमस्कारात्मक 3. वस्तुनिर्देशात्मक। प्रस्तुत पद नमस्कारात्मक है। इसमें सूरदास जी ने अपने आराध्य की चरण–वंदना से अपने महान ग्रन्थ का शुभारम्भ किया है। इसमें कवि ने अपने आराध्य कृष्ण की सर्वशक्तिमत्ता और असीम कृपालुता को प्रस्तुत किया है–

चरन–कमल बंदौं हरि–राई।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अंधे को बस कछु दरसाइ।
बहिरौ सुनै, मूक पुनि बौले, रंक चलै सिर छत्र धराइ।
सूरदास स्वामी करुनामय बार–बार बंदौ तोहि पाइ।

इसमें सूरदास जी की विनय भक्ति की झलक मिलती है जहां वे अपने आराध्य देव श्री कृष्ण के आगे विनय करते हैं और उनकी सर्वशक्तिमत्ता और असीम कृपालुता को प्रस्तुत करते हैं। इसी प्रकार 'आत्मनिवेदन' की प्रवृति भी उनके काव्य में उपलब्ध होती है जहाँ वे अपने इष्टदेव में दृढ़ विश्वास, उसका गुणगान, सर्वस्व अर्पण की भावना को चित्रित करते हैं। वे श्री कृष्ण के समक्ष निवेदन करते हुए कहते हैं–

प्रभु मेरे औगुन चित न धरो।
समदरसी प्रभु नाम तिहारो अपने पनहि करो।
इक लोहा पूजा में राखत, इक घर बधिक परो।
यह दुविधा पारस नहीं जानत, कंचन करत खरो।

इन पंक्तियों में सूरदास जी श्री कृष्ण से आत्म निवेदन करते दिखाई देते हैं। यह पद भक्त और ईश्वर के आपसी मधुर सम्बन्ध को दिखाता है। सूरदास जी के 'विनय के पद' अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं जिनमें कवि ने प्रभु की शरण में जाकर अपने उद्धार की प्रार्थना की है। विनय की सभी सातों भूमिकाएँ उनके काव्य में उपलब्ध होती हैं वे कहते हैं–

अब कैं राखि लेहु भगवान।
हौं अनाथ बैठ्यो द्रुम–डरिया, पारधि साधे बान।।

संसार रूपी वृक्ष की शाखा पर जीवात्मा रूपी पक्षी बैठा हुआ है। नीचे शिकारी वाण का संधान कर रहा है। माया और काल के चक्र में बंधी जीवात्मा पक्षी की भांति फड़फड़ा रहा है। प्रभु की कृपा से ही इन दोनों के डर से वह मुक्त हो सकता है। दैन्य निरूपण सूर के काव्य में विस्तार से उपलब्ध होता है। उनके प्रारम्भिक पद विनय, वैराग्य, आन्तरिक साधना, गुरु का महत्व आदि से सम्बन्धित है, किन्तु पुष्टि मार्ग में दीक्षित होने के उपरान्त उन्होंने जो पद

रचना की वे प्रेम लक्षणा भक्ति से सम्बन्धित है किन्तु पुष्टि मार्ग में दीक्षित होने के उपरान्त जो पद उन्होंने रचे वे प्रेमलक्षणा भक्ति से सम्बन्धित हैं।

श्रीमद्भगवत के द्वितीय स्कन्ध में दशम अध्याय के अन्तर्गत 'पुष्टि' को परिभाषित करते हुए कहा गया है– 'पोषणं तदनुग्रहं' अर्थात् ईश्वर का अनुग्रह (कृपा) ही पोषण है। भगवान कृपा से ही भक्त के हृदय मेंभगवान के प्रति प्रेमलक्षणा भक्ति जागृत होती है। सूरदास ने पुष्टिमार्गीय सेवा भाव को अपनाते हुए भक्ति के तीनों रूप–गुरु सेवा, सन्त सेवा तथा प्रभु सेवा को अपनी भक्ति में स्थान दिया है। भगवान श्री कृष्ण परब्रह्म है और दिव्य गुण सम्पन्न पुरुषोत्तम हैं। सूर ने प्रेम की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए भक्त की विकलता, अभिलाषा एवं विवशता का सुन्दर चित्रण किया है।

प्रश्न) सूरदास का वात्सल्य वर्णन अद्वितीय है, इस कथन को सस्पुष्ट करें।

उत्तर) सूर वात्सल्य है और वात्सल्य सूर है। सूरदास के विषय में यह उक्ति प्रचलित है। आश्चर्यपूर्ण बात यह है कि सूर से पूर्व किसी अन्य कवि ने वात्सल्य रस का चित्रण नहीं किया। किन्तु सूर ने पहली बार इस क्षेत्र में इतना सुन्दर कहा है कि इस सम्बन्ध में और किसी के लिए कुछ कहने को नहीं रहा। सूर के वात्सल्य वर्णन के बाद सब उसकी जूठन है। सूर वात्सल्य रस का कोना–कोना झाँक आये हैं। उन्होंने बाल्य जीवन की साधारण से साधारण घटनाओं और चेष्टाओं का अत्यन्त मनोवैज्ञानिक और कलात्मक वर्णन किया है।

सूर को माता–पिता के हृदय और बालकों के मन की गहरी पहचान है। सूर गोपाल कृष्ण का कभी भी साथ नहीं छोड़ते हैं। कभी यशोदा के ममतापूर्ण हृदय में बैठकर गोपाल कान्हा की नयनाभिराम लीलाओं को निहारते हैं तो कभी बाबा नन्द के दिल की गहराइयों में बैठकर कन्हैया की स्नेहमयी झाकियाँ देखते हैं। कभी वे कृष्ण के मित्र बन उनके साथ माखन चुराने, दूध और दधि लुढ़काने और गौएँ चराने के साथ–साथ बने रहते हैं तो कभी इस सम्बन्ध में गोपियों के द्वारा कृष्ण को दिलाये गये उपालम्भों में मीठा आनन्द लेते हैं तो कभी बलराम और कृष्णकी परस्पर की छेड़छाड़ में रसास्वादन करते हैं। कभी वे यशोदा द्वारा भिजावाये करूणार्द्र संदेशों में द्रवित होते हैकभी वृद्ध और गोपियों के होते हैं तो कभी वृद्ध गोपियों के प्रेमोद्गारों में गद्गद हो उठते हैं। सूर के कलाकार का भोले-भाले बालक का सा हृदय है। उनकी विराट प्रतिभा के सामने बाल्य जीवन की कोई भी वृत्ति तिरोहित न रहीं। कृष्ण के बाल्य जीवन से सम्बन्ध सम्पूर्ण क्रीड़ाओं–कृष्ण–जन्म, नाल छेदन, नामकरण, वर्णगांठ, कृष्ण का पालने में झूलना, अंगूठा चूसना, लोरियों

के साथ सोना, प्रभातियों के साथ जागना, हंसना, मचलना, बहाने बनाने का अत्यन्त सूक्ष्म और विशद् विवेचन सूर ने किया है।

नन्द और यशोदा को प्रौढ़ अवस्था में बालक की प्राप्ति होती है। उनका कृष्ण के प्रति प्रतिशय स्नेह स्वाभाविक था जैसे कृष्ण–साहित्य में राधा प्रेम रूपिणी है वैसे ही यशोदा वात्सल्य–रसधरिणाी है। उनका समस्त व्यक्त्वि ही कृष्ण प्रेम में घुलमिल गया है। उठते–बैठते, सोते जागते, खाते–पीते चौबीसों घंटे उन्हें कृष्ण का ही ध्यान है। वे कृष्ण को सुलाती, झूला झुलाती और लोरियाँ गाती है–

यशोदा हरि पालनैं झुलावै।
हलरावै, दुलराइ मल्हावै, जोई–सोइ कछु गावै।।

सूरदास द्वारा बालकों के हृदयस्थ मनोभावों का चित्रण भी कितना स्वाभाविक चित्र है। यशोदा लोरी गाकर कृष्ण को सुला रही है। कृष्ण के आँखें बंद कर लेने पर माँ समझाती है कि बेटा सो गया है। वह लोरी गाना बंद कर देती है और उठना चाहती है कि फिर कृष्ण अकुला उठते हैं और यशोदा फिर से लोरी गाने लगती है। उसे पुत्र के पास बैठना पड़ता है।

सूर के वात्सल्य वर्णन में स्वाभाविकता, विविधता, रमणीयता एवं मार्मिकता है जिसके कारण वे अत्यन्त हृदयग्राही एवं मर्मस्पर्शी बन पड़ा है। उनकी इस विशेषता को लक्ष्य कर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कहते हैं, "बालसौन्दर्य एवं स्वभाव के चित्रण में जितनी सफलता सूर को मिली है, उतनी अन्य किसी को नहीं। वे अपनी बन्द आँखों से वात्सल्य का कोना–कोना झांक आए हैं।"

बालकों की खींझ, पारस्परिक प्रतिस्पर्द्धा बुद्धि चातुर्य, अपराध को छिपाने की प्रवृति, भोले–भाले तर्क, आदि का विशद चित्रण सूर काव्य में मिलता है। माता यशोदा उन्हें दूध पीने के लिए मनाती हुई यह लालच देती है कि दूध पीने पर तुम्हारी चोटी बढ़ जाएगी। कृष्ण उनकी बात मानकर एक हाथ से चोटी पकड़कर और दूसरे हाथ से दूध का गिलास पकड़कर माता यशोदा से पूछते हैं–

मैया कबहिं बढ़ैगी चोटी ?
किती बार मोहि दूध पिवत भई, यह अजहुं है छोटी।।

सूरदास के इस पद में माता और बेटे के मनुहार का दृश्य देखते ही बनता है। बाल आक्रोश और माता से बड़े भाई की शिकायत का चित्रण भी बड़े ही सुन्दर ढंग से हुआ है। बलदाऊ कृष्ण को चिढ़ाते हैं, कि यशेदा ने कृष्ण को मोल लिया है। श्री कृष्ण जी खीझ जाते हैं और अपने आक्रोश की अभिव्यक्ति इन शब्दों में माता के आगे करते हैं–

मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायो।
मोसों कहत मोल को लीनो, तू जसुमति कब जायो।

उक्त विवेचन के आधार पर कह सकते हैं कि सूरदास का वात्सल्य वर्णन अत्यन्त हृदयस्पर्शी, मार्मिक एवं स्वाभविक है। निश्चय ही सूरदास वात्सल्य के सम्राट है और उनका वात्सल्य वर्णन हिन्दी साहित्य की ऐसी अपूर्व निधि है जिस पर गर्व कर सकते हैं। रामचन्द्र शुक्ल ने सूरदास के वात्सल्य वर्णन की प्रशंसा करते हुए लिखा है "आगे होने वाले कवितयों की शृंगार और वात्सल्य की उक्तियां सूर की जूठी सी जान पड़ती हैं।"

प्रश्न) बाल–मनोविज्ञान क्या है? पठित पदों से बाल–मनोविज्ञसिक तथ्यों को रेखांकित कीजिए।

उत्तर) सूरदास ने कृष्ण की बाल लीलाओं के चित्रण में अद्वितीय रूप दिखाया है। उनका अनुभव प्रत्येक पद में साकार हो उठा है। हिन्दी साहित्य में वात्सल्य रस का ऐसा सुन्दर चित्रण अत्यन्त दुर्लभ है। इस कौशल के कारण ही आलोचक उन्हें वात्सल्य रस का एकमात्र आचार्य और बाल मनोविज्ञान का मर्मज्ञ मानते हैं। वास्तव में सूर का सम्पूर्ण बाल–साहित्य ही बाल–मनोविज्ञान के प्रति उनकी गहरी पहचान का परिचायक है। वात्सल्य स्नेह मानवमात्र की एक सहज प्रवृत्ति है। बाल–मनोविज्ञान के अन्तर्गत सूर ने बालकों के हृदयस्थ मनोभावों, बुद्धि–चातुर्य, स्पर्धा खीझ, प्रतिद्वन्द्विा अपराध करके उसे छिपाने एवं उसके बारे में कुशलता के साथ सफाई देने की प्रवृति आदि के बड़े ही हृदयहारी चित्र अंकित किए हैं। कृष्ण को तो मक्खन अच्छा लगता है, किन्तु माता यशोदा उन्हें दूध पिलाना चाहती है। बच्चे प्रायः दूध–पीने में आनाकानी किया करते हैं और माताएँ उन्हें फुसलाकर या बहाना बनाकर दूध पिलाया करती हैं। यहाँ पर भी कृष्ण को बहला–फुसला कर यशोदा उन्हें दूध पिलाने का यत्न करती है–

कजरी को पय पियहु लला तेरी चोटी बढ़ै।
सब लरिकन मैं सुन सुंक्षर सुत तौ श्री अधिक चढ़े।।

यहाँ माता यशोदा ने कृष्ण को यह कहकर फुसलाया है कि काली आँखों वाली गाय का दूध पीने से तुम्हारी चोटी तो बढ़ जाएगी, मुख की कांति, शोभा भी बढ़ेगी तथा तुम सारे लड़कों में सुन्दर दिखाई दोगे। वह उसे यह भी कहती है कि अगर तुम दूध पियोगे तो तुम्हारी चोटी लम्बी होकर बलराम की तरह लम्बी होकर भूमि पर लोटने लगेगी। इसी समय कृष्ण की स्पर्द्धामिश्रित बाल सुलभ कुशलता द्रष्टव्य है क्योंकि वे एक हाथ में दूध का कटोरा लिए हुए हैं, दूसरा हाथ अपनी चोटी पर रखे हुए हैं और देखते जा रहे हैं कि दूध पीते ही चोटी बढ़ रही है या नहीं जब चोटी बढ़ती नहीं दिखाई देती तब माता यशोदा से पूछ बैठते हैं–

मैया कबहिं बढ़ैगी चोटी।
कितनी बार मोहिं दूध पिवत भई, यह अजहूँ है छोटी।।
तू जो कहति बल की बैनी, ज्यों है लाँबी मोटी।
काचो दूध पियावत पचि–पचि, देत न माखन रोटी।।

उपर्युक्त पंक्तियों में एक छोटे बच्चे के मनोविद्वान का दृश्य अद्वितीय बन पड़ा है। सूरदास बाल मनोविज्ञान के भी अद्वितीय ज्ञाता थे। बलराम श्री कृष्ण के बड़े भाई थे। गौरवर्ण बलराम श्रीकृष्ण के श्याम रंग पर यदा–कदा उन्हें चिढ़ाया करते कि तुम माँ यशोदा के अपने पुत्र नहीं हो क्योंकि तुम तो श्यामवर्ण हो, तुम्हें माँ यशोद ने मोल लिया है। इस पर श्रीकृष्ण चिढ़ जाते हैं और बड़े भाई की बात सच मान लेते हैं। यहाँ पर श्री कृष्ण की बाल सुलभ जिज्ञासा देखते ही बनती है वे माँ यशोदा से पूछ बैठते हैं कि क्या सचमुच मुझे मोल लिया गया है ? क्या सच्ची मेंमैं आपका पुत्र नहीं हूँ ? क्या इसीलिए मेरा रंग काला है। यदि मैं आपका पुत्र होता तो मेरा रंग भी गोरा होता। क्य करू माँ सारे बच्चे मुझे चिढ़ाते हैं इसीलिए मैं बाहर खेलने नहीं जाता। बाल सुलभ मन का आक्रोश सूरदास जी ने ब़ेडही सुन्दर ढंग से चित्रित किया है। निम्नलिखित पद में श्रीकृष्ण के इसी बाल सुलभ मन का चित्रण हुआ है–

मैया मोहि दाऊ बहुत खिझायो।
मोसों कहत मोल को लीनो, तू जसूमति कब जायो।
कहा कहौं यहि रिस के मारे, खेलन हौं नहिं जातु।
पुनि–पुनि कहत कौन है माता, को है तुम्हरो तातु
गोरे नन्द जसोदा गोरी, तुम कल स्याम सरीर।
चुटकी दै–दै हँसत बाल सब, सिखै देत बलवीर।

इन पंक्तियों में सूर ने बच्चों के अन्दर पायी जाने वाली स्वाभाविक खीझ, चिढ़ का चित्रण किया है। छोटी–छोटी बातें भी जो उनके मन को लगती हैं उन्हें सहन नहीं कर पाते विशेषकर अपने माता–पिता सम्बन्धित।

इस प्रकार पठित पदों में सूर ने ऐसे सहज स्वाभाविक बाल मनोविज्ञान का चित्रण किया है जो प्रत्येक बच्चों में पाया जाता है। इसमें बाल–जीवन की एक उल्लास एवं उमंग भरी शाश्वत झाँकी अंकित है इसी कारण सूर वात्सल्य के सम्राट कहलाते हैं, बाल मनोविज्ञान के पारखी कहे जाते हैं और बाल प्रकृति एवं बाल–मनोवृतियों के कुशल चितेरे के रूप में प्रसिद्ध हैं।

प्रश्न) भ्रमर गीत के स्वरूप पर चर्चा कीजिए।

उत्तर) 'भ्रमर' शब्द का अर्थ लक्षणा से 'कृष्ण' है। आगे चलकर यह पति का पर्याय होकर 'भँवर जी' बन गया। यही शब्द भ्रमर गीत का मूल है। इसकी भमिका अथवा प्रस्तावना में तीन प्रसंग हैं– उद्धव को ब्रज जाने की कृष्ण द्वारा प्रेरणा, उद्धव का ब्रज पहुँचना और अवसर पाकर गोपियों से कृष्ण का संदेश कहना। विषय प्रवेश के अन्तर्गत भ्रमर का आना है और उसके परिपाक के अन्तर्गत ये तीन बातें हैं–

1) गोपियों का भ्रमर को संबोधन कर अपने उद्‌गार व्यक्त करना
2) संदेश पर अपना मत देना।
3) भावोत्कर्ष में कृष्णमयता की अवस्था प्राप्त करना।

भ्रमरगीत का मूल स्त्रोत श्रीमद्‌भागवत दशम स्कन्ध के पूर्वार्द्ध में 47वाँ अध्याय है जिसमें गोपियाँ कृष्ण के प्रिय सखा–दूत उद्धव के समक्ष कृष्ण चर्चा सुनने में मग्न हो जाती हैं। इसी अवसर पर एक भँवरा उड़ता हुआ आता है और एक गोपी के निकट गुनगुनाने लगता है। उद्धव के ज्ञान संदेश के प्रति अपनी खीझ प्रकट करने के लिए गोपियों ने उसी भ्रमर के माध्यम से कृष्ण और उद्धव को उपालम्भ सुझाए। क्रूरता आदि की उदाहरण सहित टीका–टिप्पणी प्रस्तुत करते हुए उद्धव के मन पर सगुण भक्ति की छाप डाली। भ्रमरगीत में गोपियों की तीव्र विरानुभूति भ्रमर के प्रति अन्योक्ति के रूप में अभिव्यक्त हुई है, जो अत्यन्त ललित, हृदयावर्जक एवं संगीतमय पदों में पर्णित है और अधिक प्रभावशाली है। सूरदास का भ्रमर गीत इस दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ है।

प्रश्न) भ्रमर परम्परा पर संक्षेप से चर्चा करते हुए सूरदास के भ्रमर गीत भी विशेषताएँ बताइए।

उत्तर) जिस काव्य में उद्धव–गोपी संवाद के माध्यम से ज्ञान–योग का खण्डन तथा प्रेम–भक्ति का समर्थन किया जाता है, उसे भ्रमरगीत कहते हैं। गोपियों ने भ्रमर के माध्यम से उद्धव को खरी–खोटी सुनाई, कृष्ण की भ्रमत्वृत्ति पर आक्षेप किए इसलिए इसे भ्रमरगीत कहा गया। यह उपालम्भ काव्य है जिसमें नायक की निष्ठुरता एवं लम्पटता के साथ–साथ नायिका की मूक व्यथा, विरह वेदना का मार्मिक चित्रण मिलता है।

हिन्दी काव्य में भ्रमरगीत परम्परा का मूल स्त्रोत श्रीमद्भागवत पुराण है जिसके दशम स्कन्ध के 46वें तथा 47वें अध्याय में भ्रमरगीत प्रसंग है। श्री कृष्ण ने अपने अभिन्न मित्र उद्धव को ब्रज में गोपियों के पास संदेश लेकर भेजा। गोपियों को उन्होंने ज्ञान–योग का सन्देश दिया पर गोपियां कृष्ण के प्रति अपने प्रेम एवं भक्ति को छोड़ने के लिए तैयार नहीं हैं। जहाँ उद्धव–गोपी वार्तालाप हो रहा था। वहीं एक भ्रमर उड़ता हुआ आ गया। गोपियों ने उस भ्रमर को प्रतीक बनाकर अन्योक्ति के माध्यम से उद्धव और कृष्ण पर व्यंग्य किए, उन्हें उपालम्भ दिए, उसी को भ्रमरगीत नाम दिया गया। ब्रजभाषा में भ्रमरगीत परम्परा के कई ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं यथा सूरदास का भ्रमर गीत, नंददास का भंवरगीत, सत्यनारायण जग–नाथ दास 'रत्नाकर' का उद्धव–शतक और अयोध्या सिंह 'हरिऔध' का प्रिय प्रवास।

भ्रमरगीत परम्परा में सूरदास का महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें एक ओर तो निर्गुण का खण्डन और सगुण का मण्डन है तो दूसरी ओर ज्ञान योग की पराजय तथा प्रेमभक्ति की विजय का प्रतिपादन किया गया है। गोपियों की वचनवक्रता, तर्कशीलता एवं भावुकता दर्शनीय है। कृष्ण के प्रति अनन्यता के साथ–साथ उनकी विरह वेदना का भी मार्मिक चित्रण सूरदास जी ने किया है। अन्त में उद्धव की परिवर्तित दशा का चित्रण भी सूर ने किया है जिसमें वे प्रेम और भक्ति में सराबोर दिखाए गए हैं।

प्रश्न) पाठ्यक्रम में निर्धारित भ्रमरगीत के पदों के आधार पर सूर के विरह वर्णन पर चर्चा कीजिए।

उत्तर) सूरदास का भ्रमरगीत गोपियों के विरह की मार्मिक–अभिव्यक्ति है। इसीलिए सूरदास भ्रमर गीत परम्परा के सबसे सशक्त कवि माने जाते हैं। श्री कृष्ण के मथुरा चले जाने पर गोपियाँ विरह वेदन से अत्यन्त व्याकुल हो उठती है। श्री कृष्ण अपने सखा उद्धव को ब्रज में भेजते हैं। उन्होंने गोपियों को ज्ञान और योग का उपदेश दिया किन्तु गोपियां उस उपदेश को सुनने एवं ग्रहण करने को तैयार नहीं हैं। वे प्रेम और भक्ति को छोड़कर ज्ञान और योगको अंगीकार नहीं करना चाहती। साहित्य में उद्धव गोपी संवाद के इस प्रसंग को 'भ्रमर गीत प्रसंग' कहा जा सकता है।

भ्रमर गीत में गोपियों की विरह वेदना का सूरदास ने अत्यन्त ही मार्मिक रूप से चित्रण किया है। कृष्ण के वियोग में गोपियों को कुछ अच्छा नहीं लगता। भ्रमर गीत में निर्गुण की अपेक्षा सगुण ब्रह्म को अधिक महत्व प्रदान किया

गया है। ज्ञानी उद्धव गोपियों के लिए जो ज्ञान का संदेश लेकर जाते हैं उसे गोपियां कदापि स्वीकार नहीं करती। अपितु वे उद्धव को खरी–खोटी सुनाती हैं वे कहती हैं कि हे उद्धव! किसी को मन से ही स्वीकार किया जाता हैऔर हमारा मन तो एक ही है जो कृष्ण जी को समर्पित है और वे अपने साथ मथुरा ले गए हैं–

ऊधो ! मन नाहीं दस बीस।
एक हुतो सो गयो स्याम संग, को आराधै ईस ?
भइँ अति सिथिल सबै माधव बिनु जथा देह बिनु सीस।
स्वासा अटकि रहे आसा लगि, जीवहिं कोटि बरीस।।

गोपियों को वेदना ने इतना अधीर, व्याकुल एवं आतुर बना दिया है कि उन्हें अपने तन–मन की होश नहीं है। विरह–वेदना से व्यथित होकर वे मर जाना पसन्द करती हैं। जब से कृष्ण मथुरा गए हैं तब से गोपियों की आँखों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही है। गोपियों की इस विरहजन्य दशा का निरूपण इन पंक्तियों में सूरदास जी ने अत्यन्त मार्मिकता से किया है।

निसदिन बरसत नैन हमारे
सदा रहत पावस ऋतु हम पै जब तै स्याम सिधारे।।
अंजन धिर न रहत अंखियन में, कर कपोल भये कारे।
कंचुकि पट सूखत नहिं कबहूं, उर बिच बहत पनारे।।

यह पद विरह वेदना की उद्‌भुत अभिव्यक्ति करता है। राग मल्हार में संकलित इस पद में सूरदास जी ने कृष्ण से विलग हुई गोपियों की विरह वेदना का सजीव चित्र खींचा है।

गोपियाँ श्री कृष्ण के विरह में इतनी विदग्ध हैं कि वे उद्धव के निर्गुण ज्ञान को न सुनकर उद्धव से कृष्ण मिलन का उपाय पूछती हैं। वे उद्धव से कहती हैं कि हमारी आँखें कृष्ण के विरह में दिन–रात रोती हैं और पल भर के लिए भी पलक नहीं झपकती। बिना वर्षा ऋतु आए ही वर्षा विद्यमान रहती है। वे बार–बार उद्धव से कहती हैं कि हमारी ऐसी विषम दुखी दशा देखकर तुम्हें हमारे ऊपर दया क्यों नहीं आ रही है। व्यथित होकर कहती हैं कि तुम उनके अर्थात् श्री कृष्ण के परम सखा हो कोई ऐसा उपाय करो कि हमारा और श्री कृष्ण का मिलन शीघ्र ही हो–

ऊओ! अँखियाँ अति अनुरागी।
इकटक मग जोवतिं अरू रोवतिं, भूलेहुँ पलक न लागी।
बिनु पावस पावस करि राखी, देखत हौ बिदमान।
अब धौं कहा कियो चाहत हौं, छाँड़हु नीरगुन ज्ञान।
तुम हौ सखा स्याम सुन्दर के, जानत सकल सुभाइ।
जैसे मिलैं सूर के स्वामी, सोई करहु उपाइ।

उपर्युक्त पद में स्पष्ट होता है कि उद्धव को खरी खोटी सुनाने वाली गोपियां अत्यन्त कातर बन कृष्ण से मिलने की खुशामद कर रही है। उनकी यह कातरता, व्यथा हृदयद्रावक है। अन्तिम पंक्तियों में तो उनकी प्रेम–क्रिशता अत्यन्त मार्मिक हो उठी है।

अतः कह सकते हैं कि सूर का विरह–वर्णन, उनकी भावमयता के कारण समूचे हिन्दी साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। गोपियों के विरह–वर्णन में सूरदास ने उनके भीतर की वेदना के सूक्ष्म तारों को चित्रित क्रिया है और उनकी मानसिक अवस्थाओं को व्यक्त किया है।

3.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न) पठित विनय और भक्ति पदों के आधार पर सूरदास की भक्ति भावना पर डालिए।

....

....

....

....

प्रश्न) सूरदास वारसल्य वर्णन के सम्राट कहे जाते हैं, इस कथन से आप कहाँ तक सहमत हैं।

....

....

....

....

प्रश्न) बाल–कृष्ण ने यशोदा माता से कौन–सी शिकायतें की हैं।

....

....

....

प्रश्न) बाल मनो–विज्ञान का अभिप्राय बताते हुए पठित पदों से बाल मनोवैज्ञानिक तथ्यों को रेखांकित करें।

....

....

....

प्रश्न) भ्रमर गीत परम्परा पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डालिए।

....

....

....

प्रश्न) पठित पदों के आधार पर गोपियों के विरह वर्णन पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

3.6 पठनीय पुस्तकें

1. काव्य सुमन– सं. महेन्द्र कुलश्रेष्ठ
2. हिन्दी के प्राचीन प्रतिविधि कवि– डॉ. द्वारिका प्रसाद
3. सूर सौरभ– डॉ. जगननाथ तिवारी।

***

सूरदास का व्यक्तित्व एवं साहित्यिक विशेषताएँ

4.0 रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 सूरदास का व्यक्तित्व

4.4 सूरदास की साहित्यिक विशेषताएँ

4.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.6 पठनीय पुस्तकें

4.1 उद्देश्य

1. प्रस्तुत अध्याय के अध्ययनोपरांत आप सूरदास के जन्मस्थान, समय एवं व्यक्तित्व के बारे में जान सकेंगे।

2. सूरदास किस विचारधारा के कवि हैं ? यह भी जानेंगे।

3. सूरदास की कृतियों के बारे में जानेंगे।

4. सूरदास की साहित्यिक विशेषताओं के अन्तर्गत आप सूरदास की भक्ति भावना, सूरदास का वात्सल्य वर्णन एवं सूरदास के काव्य सौष्ठव को जान पायेंगे।

4.2 प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत कृष्ण काव्य–धारा को प्रवाहित करने वाले प्रथम कवि मैथिल–कौकिल विद्यापति हैं, किन्तु विद्यापति से हिन्दी में कृष्ण–काव्य धारा का श्रीगणेश हुआ और विद्यापीत के उपरान्त हिन्दी में कृष्ण काव्य

धारा को भारतव्यापी बनाने का श्रेय महात्मा सूरदास को प्राप्त है। सूरदास की भावनाओं का स्रोत कृष्ण भक्ति ही है। उन्होंने न केवल भाव और भाषा की दृष्टि से साहित्य को सुसज्जित किया अपितु कृष्ण काव्य की विशिष्ट परम्परा को भी जन्म दिया।

4.3 सूरदास का व्यक्तित्व

4.3.1 जन्म स्थान

हिन्दी साहित्य में सूर्य के समान देदीप्यमान भक्त कवि सूरदास भक्तिकाल की कृष्ण–काव्य धारा के अनमोल रत्न हैं। अन्य कवियों की भांति ही इनके जन्म स्थान आदि के सम्बन्ध में मतभेद है। सरूदास के जीवनवृत के लिए बहिर्साक्ष्य के रूप में भक्तमाल (नाभादास), चौरासी वैष्णवन की वार्ता (गोकुलनाथ) और बल्लभ दिग्विजय (यदुनाथ) का आधारा लिया गया है। चौरासी वैष्णव वार्ता के अनुसार वे दिल्ली के निकट 'सीही' के सारस्वत ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न हुए थे। वार्ताग्रन्थों के अनुसार सूरदास से महाप्रभु बल्लभाचार्य की भेंट 1509–10 ई. में हुई थी और तब से वे बल्लभाचार्य के शिष्य बनकर पारसोली गांव में रहने लगे थे। इनका जन्म 1478 ई. तथा निधन 1583 ई. में माना जाता है। इनके पिता का नाम रामदास था जो अकबर के दरबारी गायक थे।

4.3.2 व्यक्तित्व

सूर नेत्रविहीन थे यह तो निर्विवाद है। जन्मान्ध थे या बाद में हुए यह भी विवादास्पद है। इस सम्बन्ध में लोगों में किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं पर आचार्य शुक्ल और डॉ. श्यामसुन्दरदास इनके काव्य की उत्कृष्टता के आधार पर इन्हें जन्मान्ध नहीं मानते। जन्मजात प्रतिभा पूर्व संस्कार गुणियों के सत्संग और निजी अभ्यास के कारण छोटी आयु में ही सूरदास विभिन्न विधाओं के ज्ञाता हो गए। इनकी ख्याति गायक और महात्मा के रूप में खूब फैली। कहा जाता है कि इनके व्यक्तित्व से ही प्रभावित होकर अकबर ने मथुरा में इनसे भेंट की।

इनके आरम्भिक जीवन के विषय में केवल इतना ही ज्ञात है कि वल्लभाचार्य से दीक्षित होने से पूर्व यह सन्यासियों के साथ गऊ गाट पर रहते थे और कृष्णभक्ति में विनय के पद गाते थे। वल्लभाचार्य के कहने पर सूर ने बड़ी ही लग्न से 'प्रभु हौ सब पतितन कौ टीकौ' गाया जिसे सुनकर आचार्य जी ने कहा, ''जो सूर है के ऐसेघिघियात हो, कछु लीला को पद गाओ'' वल्लाचार्य ने इन्हें अपने सम्प्रदाय में दीक्षित कर लिया। तत्पश्चात् सूरदास आचार्य जी की आज्ञा से श्रीनाथ जी के मन्दिर में भजन–कीर्तन करने लगे। यहाँ की गायक मण्डली में आठ भक्त गायक थे, जो

'अष्टछाप' के नाम से प्रसिद्ध थे। इनमें सूर का स्थान सर्वोपरि है। पुष्टिमार्ग की उपासना और सेवा–प्रणालीका अनुसरण करते हुए सूर ने जीवन–पर्यन्त पद रचना की।

4.3.3 कृतित्व

सूरदास जी द्वारा लिखे गए तीन ग्रन्थ ही उल्लेखनीय हैं–

(1) सूरसारावली (2) साहित्यलहरी (3) सूरसागर

'सूरसागर' सूरदास की लोकप्रियता का आधार–स्तम्भ है। इस सागर में प्रेम, कविता, भक्ति और संगीत की नदियाँ आकर एकत्रित हुई हैं। इसकी रचना भागवत की पद्धति पर द्वादश स्कन्धों में हुई है। यह एक गेयमुक्तक काव्य है जिसमें सूरदास ने पर्याप्त मौलिकता से काम लिया है। 'भ्रमरगीत' की कल्पना कृष्णभक्ति काव्य को इनकी एकमौलिक देन है। पुष्टिमार्ग के अनुयायी होने के कारण इनके काव्य में वात्सल्य, सख्य रूप, कान्ता आदि भावों का समावेश हुआ है। इन्हें वात्सल्य का सम्राट भी कहा जाता है और वात्सल्य के क्षेत्र में कोई भी कवि उनके समक्ष नहीं टिक पया है।

4.3.4 विचारधारा

सूरदास जी भक्तिकाल की सगुण भक्तिधारा की कृष्णधारा के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। इन्होंने कृष्ण की सखा भाव से उपासना की है। पुष्टिमार्गीय भक्ति में विश्वास रखकर इन्होंने कृष्ण कृपा को ही सर्वोपरि माना और कृष्ण के लोकरंजक रूप का वर्णन किया।

4.4 सूरदास की साहित्यिक विशेषताएँ

4.4.1 सूरदास की भक्तिभावना

सूरदास की भक्ति का मेरूदण्ड पुष्टि मार्ग का सिद्धान्त भगवदनुग्रह है। इसी को अधार मानकर वह वात्सल्य, सख्य और माधुर्य भाव की नानापद्धतियों में भाव व्यंजना में लीन रहे। उनके पद कुछ ऐसे भी हैं जिनमें निर्गुण साधना पद्धति के संकेत मिलते हैं। क्योंकि वल्लभाचार्य से दीक्षित होने से पूर्व सूर भारतवर्ष में प्रचलित अन्य भक्ति पद्धतियों एवं उपासना प्रणालियों से प्रभावित थे। इसलिए उनके कुछ पद हठयोग एवं शैव–साधना से प्रभावित जान पड़े हैं।

नैनन निरखि स्याम स्वरूप।

रह्यो घट–घट व्यापि ज्योति रूप अनुप।

सूरसागर के ऐसे पदों में सूर ने ब्रह्मज्ञानियों के समान माया का वर्णन किया है। वैष्णव भक्ति परम्परा मेंविनय भक्ति भावना में सात भूमिकाएँ– दीनता, मान मर्षता, भयदर्शन, भर्त्सना, आश्वासन, मनोराज्य और विचारणा स्वीकार की गई है। सूरदास ने दीनता का अच्छा परिचय दिया है। वल्लभाचार्य के पृष्टिमार्ग में दीक्षित होने से पहले सूर एक सन्त महात्मा थे जिन पर किसी विशेष भक्ति सम्प्रदाय का प्रभाव न था ,अपितु जो सभी उपासना–पद्धतियों, भक्ति–प्रणालियों एवं भगवद्जन सम्बन्धी मान्यताओं को समान दशष्टि से देखते थे। वल्लभाचार्य के सम्पर्क में आते ही सूर पुष्टीमार्गीय भक्त हो गये। वल्लभ सम्प्रदाय के अनुयायी होने के पश्चात् सूर ने विनय भाव और दास्य भक्ति को छोड़ सख्य भाव की भक्ति को अपनाया। सूर साहित्य में नारद–भक्ति की ग्यारह आसक्तियों का वर्णन है। भ्रमर गीत में विरह शक्ति का अत्यन्त आकृष्ट रूप देखा जा सकता है।

4.4.2 सूरदास की भक्ति

सूरदास की भक्ति का मेरुदण्ड पुष्टि मार्ग है। सूरदास भक्ति के क्षेत्र में बहुत आगे निकल गये। वे पहले भक्त हैं और फिर कवि। सूरदास लीलावादी कवि हैं। कला–कला के लिए समझते हैं। उसी प्रकार सूरदास का काव्य स्वांतः सुखाय है। लीला का प्रयोजन इनके साहित्य में लीला ही है। सूर में तुलसी की भाँति लोक संग्रह की भावना नहीं मिलती है। जैसे कोई खिलाड़ी विजय और पराजय के बारे में किसी प्रकार का सरोकार नहीं रखता उन्हें तो प्रेम की सकरी गली में कृष्ण के लीलानन्द का खेल खेलना है। सूर और तुलसी का युग एक ही है। तुलसी के साहित्य में उस युग की राजनीतिक छाप स्पष्ट दिखाई देती है। किन्तु सूरदास पर राजनीति का प्रभाव नहीं है। माधुर्य भाव की उपासिका गोपियां समाज सम्बन्ध तोड़कर कृष्ण लीला में सम्मिलित होती हैं। सूरदास ने सखाभाव की भक्ति अपनाते हुए यशोदा–नंद के वात्सल्य, राधा एवं गोपियों के माधुर्य भाव एवं दाम्पत्य प्रेम की सुन्दर अभिव्यंजना की है।

4.4.3 सूर का काव्य और समाज

सूरदास के साहित्य में समाज का चित्रण नहीं पाया जाता है। सूरदास की एक ही अभिलाषा उनके साहित्य में विद्यमान है 'कृष्ण लीला गान'। इस भक्ति में मर्यादा–नियम, विधि–विधाना एवं आदर्श की अपेक्षा नहीं। उनके साहित्य में कृष्ण ही मातृ पुरुष है। शेष सभी जीवात्माएँ हैं। सूरदास ने यशोदा और नन्द के स्वस्थ गृहस्थी जीवन का चित्र भी खींचा है।

4.4.4 सूरदास की काव्य साधना

सूरदास हिन्दी के रससिद्ध कवि हैं। उनके काव्य में गेयता का तत्व विद्यमान है। गीति काव्य के लिए आवश्यक उपादान गेयता, कोमलकान्त मधुर पदावली, सरल पदविन्यास, मधुर भाव व्यंजना सूर के साथ में उपलब्ध हो जाते हैं। राधा कृष्ण की प्रेमलीला के मधुर चित्रों का अंकन सूर अत्यन्त तन्मयता के साथ अपने पदों में करते हैं। मनकी तरल अनुभूतियों का मनमोहक और आकर्षक चित्र वे अपने पदों में अभिव्यक्त करते हैं– यथा

बूझत स्याम कौन तू गोरी ?
कहां रहति काकी है बेटी नहिं देखी कबहूं ब्रजखोरी।।

सूरदास का वात्सल्य वर्णन भी हिन्दी साहित्य की अनुपम निधि है। श्रीकृष्ण के बाल सौन्दर्य की झांकी के साथ–साथ बाल मनोविज्ञान का जैसा चित्रण सूरकाव्य में उपलब्ध होता है, वैसा अत्यन्त नहीं मिलता। वात्सल्य के दोनों पक्षों– संयोग एवं वियोग का चित्रण सूरकाव्य में उपलब्ध होता है। सूर के शृंगार और वात्सल्य वर्णन के सम्बन्ध में श्री रामचन्द्र शुक्ल कहते हैं, "आगे होने वाले कवियों की शृंगार और वात्सल्य की उक्तियां सूर की झूठी–सी जान पड़ती हैं।" शृंगार और वात्सल्य के क्षेत्र में उनकी दृष्टि जहाँ तक पहुंची वहाँ तक और किसी कवि की नहीं।

सूर ने विविध भावमयी ब्रजभाषा का प्रयोग करते हुए अपने सरस काव्य की सृष्टि की है। सूर के काव्य में वैसे अनेक भावों एवं रसों का वर्णन है परन्तु वात्सल्य और शृंगार का ही प्रधान्य है और यह दोनों भाव भी भक्ति रस के अंग बनकर आए हैं। इस तरह सूर का काव्य भक्ति रस का भण्डार है। इसमें सख्य, दाम्पत्य, वात्सल्य भावों के द्वारा अनन्य प्रेममयी भक्ति का प्रतिपादन हुआ है और विविध सुर एवं तालों द्वारा विलक्षण संगीत की सृष्टि हुई है।

4.4.5 वात्सल्य वर्णन

विद्वान कहते हैं कि सूरदास ही वात्सल्य है और वात्सल्य ही सूरदास हैं। सूरदास से पहले इस प्रकार वात्सल्य के बारे में वर्णन करने वाला कोई नहीं मिलता। उन्होंने बाल जीवन की साधारण से साधारण घटनाओं और चेष्टाओं का अत्यन्त मनोंवैज्ञानिक और कलात्मक वर्णन किया है। सूरदास माता–पिता के हृदय की गहरायी को और बालकों के मन की कोमलता को खूब पहचानते हैं। माखन चुराना, दूध और दहीं लुड़काना, गाय चराना, झूलना, गाना, मुरली बजाना, सखाओं से खेलना, बलराम और कृष्ण की छेड़–छाड़ न जाने कितनी नई–नई उद्‌भावनाएँ उनके काव्य में दिखाई पड़ती हैं, जो बहुत सुन्दर हैं। नन्द और यशोदा को कृष्ण के प्रति अतिशय स्नेह है। कृष्ण साहित्य में राधा प्रेम रूपिणि है तो यशोदा वात्सल्य रस वर्षिणी है। उठते–बैठते, सोते–जागते, खाते–पीते चौबीसों घंटे उन्हें कृष्ण का हीध्यान है।

4.4.6 शृंगार वर्णन

शृंगार के संयोग और वियोग दोनों पक्षों पर सूर का समान अधिकार है। शुक्ल के अनुसार "शृंगार के संयोग और वियोग दानों पक्षों का इतना प्रचुर विस्तार और किसी कवि में नहीं मिलता।" सूरदास ने शृंगार रस को स्वीकार करके एक नया रूप प्रदान किया। सूरदास की गोपियों में प्रेम के संस्कार पक्के हैं। उनके प्रेम में टूटापन नहीं है। राधा हर जगह दिखाई पड़ती है। घर में, वन में, घाट पर, कदम्ब के तले इन्डोले पर जहाँ कहीं भी इसका प्रकाश हुआ है वहीं पर राधा आ जाती है। सरूदास ने आलम्बन विभाव के रूप में कृष्ण के सौन्दर्य का विस्तृत चित्रण किया है। गोपिकाओं में कहीं पर लोक–लाज प्रेम की विफलता आदि गुण दिखाई नहीं पड़ते हैं। पनघट वर्णन, यमुनासना, धानलीला और रस के प्रसंगों में गोपियों का प्रेम उज्ज्वलतम है। राधा और कृष्ण की युगल लीलाओं केवर्णन में सूरदास ने समस्त प्रतिभा और सफल काव्य कौशल का उपयोग किया है।

जिस कौशल और पूर्णता से संयोग का चित्रण किया है उससे अधिक मार्मिकता से वियोग का चित्रण किया है। क्योंकि प्रेम की साधना वस्तुतः विरह की साधना है। सरूदास ने स्वयं कहा है कि विरह प्रेम को पुष्ट करता है। उदाहरणताः

(1) "ऊधौ, विरही प्रेम करै"

(2) "पिया बिनु नागिनी काली रात।"

(3) "उर में माखनचोर गड़े।"

इनमें गोपियों के अनन्य प्रेम, राधिका की विरह वेदना के मार्मिक चित्र दिखाई पड़ते हैं। प्रेम की प्रगाढ़ता से ऐसा विरह उत्पन्न होता है, जिसका अनुभव भी कोई संवेदनशील रसमग्न हृदय ही कर सकता है।

4.4.7 सूर के काव्य में प्रकृति चित्रण

सूर के काव्य में प्रकृति के सुरम्य एंव भयानक दोनों रूपों की मनोरम झाँकियां मिलती हैं, सूर के प्रकृतिचित्रण की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि सूर के अराध्यदेव निरन्तर प्रकृति में ही रमण करते हैं, वन–विहार करते है वन में ही महारास रचाते हैं, वृन्दावन में गौएँ चराते हैं, गोवर्द्धन धारण करते हैं तथा कुंजों में विहार करते हैं। इसी प्रकार सूर के सभी पात्र प्रकृतिमय हो गए हैं और प्रकृति सतत साहचर्य के कारण प्रकृति और सूर के पात्रों में पूर्ण तादात्म्य

हो गया है। सूर ने शास्त्रीय दृष्टि से प्रकृति के उद्धीपन रूप को ही अधिक अपनाया है। सूर के पदों में सर्वत्र प्रकृति सूर के पात्रों के मनोभावों को उद्यीप्त करती दिखाई देती है। सूर का प्रकृति–वर्णन विविधता एवं सौन्दर्यप्रियता के लिए प्रसिद्ध है, इसमें कल्पना एवं भावना को सजग करने की अपूर्व क्षमता है तथा कठोर से कठोर हृदय को भी आकृष्ट करके अपने रूप–सौन्दर्य में रमा लेने की अद्‌भुत शक्ति है।

4.4.8 सूरदास की भाषा

सूरदास की काव्य भाषा ब्रज है। उनका साहित्यिक रूप बहुत सुन्दर दिखाई पड़ता है। उनकी भाषा समृद्ध, सुडौल, परिमार्जित प्रगल्भ एवं काव्यांगपूर्ण है। कहीं–कहीं पर लिंग और वाक्य व्यवस्था की गड़बड़ है परन्तुभाषा प्रवाह खटकता नहीं है। शब्दों के चुनाव में जिन शब्दों को उन्होंने उपयुक्त समझा उनका प्रयोग किया। इनकी भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्द, खड़ी बोली, पूर्वी हिन्दी, बुन्देलखंडी, राजस्थानी, गुजराती, पंजाबी, अरबी और फ़ारसी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। लोकोक्तियों, मुहावरों और अलंकारों के सफल प्रयोग से अर्थ में सौन्दर्य एवं गांभीर्य गुणों का समावेश हुआ है। सूर के काव्य में भक्ति, कविता और संगीत की सुन्दर त्रवेणी है। उनके काव्य को पढ़ते समय ऐसा लगता है कि स्वर्ग के किसी पवित्र भाग में मंदाकिनी की हिलती लहरों का स्पर्शानुभव कर रहे हैं। सूरदास तो उत्कृष्ठ गायनाचार्य थे। इस कारण उन्होंने जितने भी पद लिखे हैं उन सबमें संगीत भरा पड़ा है। सूर के काव्य सहृदयों और संगीत रसिकों दोनों के लिए गले के हार हैं। भले ही उन्होंने कृष्ण के रंजनकारी रूप को चित्रित किया है। उनके काव्य मे श्रीकृष्ण का और गोपियों का मनोरम चित्र पाया जाता है। सूरदास के साहित्य में कलात्मक पक्ष का सुन्दर समन्वय हुआ है।

सूरदास की साहित्यिक विशेषताओं के सन्दर्भ में इतना ही कहा जा सकता है कि उनका साहित्य सदा के लिए सबको रंजित करते हुए अमर रहेगा।

4.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) सूरदास के व्यक्तित्व पर संक्षिप्त नोट लिखें।

....

....

....

....

प्र2) सूरदास की भाषा पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

प्र3) सूरदास की साहित्यिक विशेषताएँ बताइए।

....

....

....

प्र4) सूरदास किस विचारधारा के कवि हैं ? स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

प्र5) सूरदास के शृंगार वर्णन पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

4.6 पठनीय पुस्तकें

1. काव्य सुमन – सं. महेन्द्र कुलश्रेष्ठ
2. सूर सौरभ– पं. जगन्नाथ तिवारी
3. हिन्दी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि– डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना

***

जयशंकर प्रसाद की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याएँ तथा पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न

5.0 रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 जयशंकर प्रसाद की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याएँ

5.4 पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न

5.5 निष्कर्ष

5.6 कठिन शब्द

5.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

5.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.9 पठनीय पुस्तकें

5.1 उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख को पढ़ने के उपरान्त आप

– जयशंकर प्रसाद की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याओं से परिचित हो सकेंगे।

– जयशंकर प्रसाद की कविताओं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

– जयशंकर प्रसाद की पठित कविताओं पर आधारित प्रश्नों से अवगत हो सकेंगे।

5.2 प्रस्तावना

जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रतिनिधि कवि हैं। आलोचकों ने छायावाद को प्रकृति, प्रेम एवं सौन्दर्य का कव्य माना है। अतः प्रसाद जी के काव्य में भी सौंन्दर्य चेतना, विविध रूपों में व्याप्त है। प्रकृति सौन्दर्य एवं भाव सौन्दर्य की पावन त्रिवेणी प्रसाद के काव्य में प्रवाहित हो रही है। प्रकृति के माध्यम से ही प्रसाद जी ने प्रेम का सुन्दर वर्णन अपनी कविताओं में किया है।

5.3 जयशंकर प्रसाद की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याएँ

सप्रसंग व्याख्या

'किरण'

किरण। तुम क्यों बिखरी हो आज,
रंगी हो तुम किसके अनुराग,
स्वर्ण सरसिज किंजल्क समान,
उड़ाती हो परमाणु पराग।
धरा पर झुकी प्रार्थना सदृश
मधुर मुरली सी फिर भी मौन–
किसी अज्ञान विश्व की विकल–
वेदना–दूती सी तुम कौन?

शब्दार्थ :– बिखरी = फैली हुई। अनुराग = प्रेम। स्वर्ण = सोना। सरसिज = कमल का फूल। किंजल्क = कमल का केसर, पराग। धरा = धरती। सदृष = समान। मौन = शांत। विकल = व्याकुल। वेदना = दुःख। दुती = संदेश देने वाली।

प्रसंग :– प्रस्तुत पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद जी की रचना 'किरण' से ली गई हैं। इसे हमारी पाठ्य पुस्तक काव्य सुमन में संकलित किया गया है। कवि ने प्रकृति के आंचल में फैलने वाली किरण को संबोधित किया है और प्रश्न किया है कि वह किसके लिए बिखरती हुई सुनहरी रंग फैला रही है।

व्याख्या :– कवि सूर्य किरण को संबोधित कर पूछ रहे हैं कि वह किसके लिए प्रकाशित हो स्वर्ण रंग फैला रही है। स्वर्ण कमल के पराग उड़ते हैं तो किरण का रंग ले रहे हैं। कवि पूछते हैं कि तुम धरती पर प्रार्थना की तरह झुकी हुई मधुर मुरली–सा राग गा रही हो। पर फिर भी शांत हो जैसे किसी अनजान संसार की व्याकुल वेदना की दूत की तरह, तुम कौन हो?

विशेष :– कविता प्रकृति प्रधान है। प्रकृति के संकेतों में जो कि कोई अर्थ नहीं रखते, उनमें भाव पिरो दिए गए हैं। अलंकारों का प्रयोग हुआ है जैसे अनुप्रास, उपमा। तत्सम प्रधान भाषा है तथा पदावली कोमलकांत है।

अरूण शिशु के मुख पर सविलास
सुनहरी लट घुँघराली कान्त,
नौचती हो, जैसे तुम कौन?
उषा के चंचल में अश्रान्त।
भला उस भोले मुख को छोड़,
और चूमोगी किसका भाल,
मनोहर यह कैसा है नृत्य,
कौन देता है सम पर ताल?

शब्दार्थ :– अरुण = नया, सुबह का। सविलास = विलास सहित। सुनहली = सोने का रंग। कान्त = सुन्दर। अश्रान्त = बिना थके। भाल = माथा। सम पर ताल = गति और लय।

प्रसंग :– प्रस्तुत पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद की रचना 'किरण' से ली गई हैं। इन्हें पाठ्य पुस्तक काव्य सुमन में संकलित किया गया है। कवि ने प्रातःकाल के दृश्य का चित्रण किया है।

व्याख्या :– कवि कह रहे हैं कि किरण तुम कौन हो जो प्रातःकाल के सूर्य जो कि शिशु की भांति है, मुख पर सुनहरी, घुंघराले बालों की तरह लहरा रही हो और तुम उषा के आंचल में बिना थके नाच रही हो। तुम भला सूर्य के चेहरे को छोड़ किसी और का माथा क्यों चूमोगी। तुम्हारा यह नृत्य कितना अद्भुत, मनमोहक है। इस नृत्य को गति और ताल कौन प्रदान करता है।

विशेष :– कवि कुछ रहस्यवादी प्रतीत हो रहे हैं। अलंकारों जैसे की अनुप्रास, उत्प्रेक्षा का सुंदर प्रयोग किया है। तत्सम भाषा का प्रयोग है। कवि ने सुबह के सूर्य को बालावस्था के मुख से आलंकृत किया है वह अद्‌भुत है।

कोकनद मधु धरा सी तरल,
विश्व में बहती हो किस ओर?
प्रकृति को देती परमानन्द?
उठाकर सुन्दर सरल हिलोर।
स्वर्ग के सूत्र सदृश तुम कौन,
मिलाती हो उससे भूलोक?
जोड़ती हो कैसा संबन्ध
बना दोगी क्या विरज विशोक।

शब्दार्थ :– कोकनद = महानदी। तरल = पतली धारा। परमानन्द = अधीन आनंद। हिलोर = लहर। सूत्र सदृश = कही समान। भूलोक = पृथ्वी। विरज विशोक = शोक से रहित।

प्रसंग :– प्रस्तुत पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद की रचना 'किरण' से ली गई हैं। इन्हें पाठ्य पुस्तक काव्य सुमन में संकलित किया गया है। कवि ने किरण का विभिन्न तरीकों से संबोधन किया है।

व्याख्या :– कवि किरण से संबोध कर पूछ रहे हैं कि तुम महानदी की मुक्त धारा की तरह किस तरफ बहती जा रही हो। तुम प्रकृति को तरल लहरों से परमआनंद देती प्रतीत हो रही हो। तुम स्वर्ग को पृथ्वी से मिलाने वाला सूत्र कोन हो? तुम कौन हो जो स्वर्ग तथा पृथ्वी का संबंध जोड़ती हो? क्या तुम संसार को पूर्ण रूप से शोकरहित कर देना चाहती हो?

विशेष :– अलंकारों जैसे की उपमा, अनुप्रास का भरपूर प्रयोग हुआ है। कवि किरण को औषधी के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं जो संसार के सभी शोक हटा दें। कवि की आध्यात्मिकता झलकती है जो प्राकृतिक लीलाओं से दिखाई पड़ती है। तत्सम प्रधान भाषा का प्रयोग हुआ है।

सुदिनमणि–वलय विभूषित उषा–
सुन्दरी के कर का संकेत–

कर रही हो तुम किसको मधुर,
किसे दिखलाती प्रेम–निकेत?
चपल! ठहरो कुछ लो विश्राम?
चल चुकी हो पथ शून्य अनन्त?
सुमनमन्दिर के खोलो द्वार,
जगे फिर सोया वहाँ वसन्त।

शब्दार्थ :– सुदिनमणि = शुभ दिन पर मणियों से बना हुआ आभूषण। प्रेमनिकेत = प्रेम का स्थान। चपल = चंचल। अनन्त = जिसका अंत न हो। सुमन मंदिर = फूलों का मंदिर। बसन्त = फूलों की बहार।

प्रसंग :– प्रस्तुत पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद की रचना 'किरण' से ली गई हैं। इन्हें पाठ्य पुस्तक काव्य सुमन में संकलित किया गया है। कवि ने प्रातःकालीन किरणों का विभिन्न उपमाओं तथा अलंकारों से वर्णन किया है।

व्याख्या :– कवि किरण से प्रश्न करते हैं कि किरण तुम आज उषा की कलई पर मणियों से युक्त आभूषण पहनकर किसको संकेत कर रही हो? किसको प्रेम का स्थान दिखा रही हो? तुम किसे प्रेम से मधुर कर देना चाहती हो? कवि कहते हैं कि चंचल किरण तुम अथाह शून्य में चल–चलकर थक गई होगी? थोड़ा विश्राम कर लो। तुम जब विश्राम करोगी तब फूलों का मंदिर खोल लेना ताकि सोया हुआ बसंत फिर जाग जाए और सब ओर फूलों के रंग चमकउठे और खुशबू फैल जाए।

विशेष :– तत्सम प्रधान भाषा का उपयोग करते हुए कवि ने अलंकारों का प्रयोग भी किया है, जैसे रूपक व अनुप्रास। कवि ने प्राकृतिक सौंदर्य के मनमोहक दृश्य की परिकल्पना बहुत ही अद्‌भुत तरीकों से की है। कवि ने प्रकृति से ही अध्यात्मिकता को सीख लिया है।

सप्रसंग व्याख्या

'पुकार'

चित तृषित कंठ से तृप्त–विधुर
वह कौन अकिंचन अति आतुर
अत्यन्त तिरस्कृत अर्थ सदृश

ध्वनि कम्पित करना बार–बार
धीरे से वह उठता पुकार–
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

शब्दार्थ :– चिर = बहुत समय से। तृषित = प्यार से व्याकुल। कंठ = माला। तृप्त–विधुर = दुखों से पूर्ण। अंकिचन = कंगाल। तिरस्कृत = दुत्कारा गया। कम्पित = कांपती हुई।

प्रसंग :– प्रस्तुत पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद की रचना 'पुकार' से ली गई हैं। इन पंक्तियों को कविता 'पुकार' के अंतर्गत पाठ्यपुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित किया गया है। कवि प्रेमी विरह की दशा बता रहे हैं।

व्याख्या :– कवि कहते हैं कि प्रेमी प्रेम में ठुकराया हुआ, बहुत समय से प्रेम नहीं मिलने से प्यासा और दुख से व्याकुल कांपते हुए स्वर में पुकार उठता है कि मुझे कभी प्रेम नहीं मिला। प्रेम के बिना प्रेमी भिखारी की तरह प्रतीत हो रहा है जिसका जीवन तिरस्कृत तथा अर्थहीन है।

विशेष :– इसमें प्रेमी की मनोदशा का बहुत ही मार्मिक चित्रण किया गया है। असफल प्रेमी की मनोदशा बिगड़ी हुई है। प्रेमी जो कि ठुकराया हुआ है लगता है कि उसका अस्तित्व ही दुख से पूर्ण हो गया है। तत्सम भाषा का उपयोग है। अलंकारों का प्रयोग हुआ है।

सागर लहरों सा आलिंगन
निष्फल उठकर गिरता प्रतिदिन
जल वैभव है सीमा विहीन
वह रहा एक कन को निहार
धीरे से वह उठता पुकार–
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

शब्दार्थ :– आलिंगन = गले मिलना। निष्फल = व्यर्थ। वैभव = ऐश्वर्य। विहीन = रहित।

प्रसंग :– प्रस्तुत पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद की रचना 'पुकार' से ली गई हैं। इन्हें पाठ्य पुस्तक 'काव्य सुमन' में संकलित किया गया है। कवि ने असफल प्रेमी के दुख का मार्मिक चित्रण किया है और इसी दुख के कारण उसका मन विचलित हो रहा है।

व्याख्या :– कवि कहते हैं कि सागर से जो लहरें उठती हैं वह आकाश को प्रेमपूर्वक छू लेना चाहती हैं लेकिन निराश होकर लौट आती हैं। वह कभी भी आकाश के गले नहीं मिल पाती। सागर में अनंत प्रेम है परन्तु लहरें उसका प्रेम प्राप्त नहीं कर पाती, उसी तरह प्रेमी को भी विशेष प्रेम चाहिए जो नहीं मिल रहा। वह असफल प्रेमी पुकार उठता है कि मुझे कभी प्यार नहीं मिला।

विशेष :– कवि ने प्रेमी हृदय की अतृप्ति को सागर की लहरों की अतृप्ति के समान बताया है, जो चाहकर भी सागर का आलिंगन नहीं कर पातीं। उपमा अलंकार का सहज प्रयोग है। भाषा तत्सम प्रधान, गेयता एवं कोमलकांत पदावली है।

अकरुण वसुधा से एक झलक
वह स्मृत मिलने को रहा ललक
जिसके प्रकाश में सकल कर्म
बनते कोमल उज्ज्वल उदार,
धीरे से वह उठता पुकार–
मुझको न मिला रे कभी प्यार

शब्दार्थ :– अकरुण = दया से रहित। वसुधा = धरती, पृथ्वी। स्मृत = याद किया हुआ। ललक = इच्छा, कामना।

प्रसंग :– प्रस्तुत पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित कविता 'पुकार' से ली गई हैं। जिसमें कवि ने असफल प्रेमी की दशा का वर्णन किया है जो प्रेम के लिए तरस रहा है।

व्याख्या :– कवि कहता है कि प्रेम में असफल प्रेमी निष्ठुर संसार से अपने प्रिय की उस मधुर मुस्कान की एक झलक प्राप्त करने के लिए आतुर हो रहा है, जिसके प्रकाश से प्रेरणा प्राप्त कर उससे समस्त कर्म उज्ज्वल तथा उदार हो जाएंगे। उसमें एक विशेष प्रकार की कार्यशीलता तथा जागरुकता आ जाएगी, परन्तु यह संसार इतना निर्दयी है कि उसकी यह छोटी–सी इच्छा भी पूरी नहीं हो पाती और वह अशांति तथा विषाद से भरकर धीरे से पुकार उठता है कि मुझे जीवन–भर प्रेम प्राप्त नहीं हुआ।

विशेष :– कवि ने असफल प्रेमी की प्रेमिका की मुस्कान की एक झलक पाने की स्वाभाविक इच्छा का यथार्थ निरूपण किया है। प्रेमी युगल के मिलन में निर्दयी संसार की परंपराएं बाधक बन जाती हैं। भाषा तत्सम प्रधान, गेयता एवं कोमलकांत पदावली है।

फैलाती है जब उषा राग
जग कहता है उसका विराग
वंचकता, पीड़ा, घृणा, मोह
मिलकर बिखेरते अंधकार,
धीरे से वह उठता पुकार–
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

शब्दार्थ :– उषा = प्रभात का समय। राग = प्रेम, अनुराग, प्रकाश, उजाला। विराग = उदासनीता। वंचकता = ठगनी, धोखा देना। घृणा = नफरत।

प्रसंग :– प्रस्तुत पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित 'पुकार' से ली गई हैं। जिसमें कवि ने एक असफल प्रेमी की मानसिक दशा का वर्णन किया है।

व्याख्या :– कवि कहता है कि प्रभावकालीन वातावरण में जब चारों ओर उषा–सुंदरी स्वर्णिम आभा फैला देती है तो समस्त जड़–चेतन प्रकाशित हो जाते हैं, उस समय भी असफल प्रेमी के ह्रदय में उदासीनता छा जाती है। उसे संसार के सभी आकर्षण व्यर्थ लगते हैं। उसे याद आ जाता है अपने प्रिय द्वारा धोखा देना, उसे पीड़ा पहुँचाना,उससे घृणा करना तथा उसका उसके प्रति मोह तो उसकी चेतना जड़ हो जाती है। ऐसी स्थिति में वह धीरे से पुकार उठता है कि 'मुझको न मिला रे कभी प्यार।'

विशेष :– प्रिय पात्र से प्रेम का प्रतिदान न पाकर प्रेमी को प्रकृति के आकर्षक दृश्य भी आनन्दित नहीं करते अपितु वह अतीत को स्मरण कर और अधिक दुःखी हो जाता है। असफल प्रेमी की दशा का मार्मिक चित्रण किया गया है। भाषा तत्सम, प्रधान कोमलकांत पदावली तथा गेयता का गुण है।

ढल विरल डालियाँ भरी मुकुल
झुकती सौरभ रस लिए अतुल
अपने विषाद विष में मूर्च्छित
काँटों से बिंध कर बार–बार,
धीरे से वह उठता पुकार–
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

शब्दार्थ :– ढल = झुकना। विरल = पतली। मुकुल = कली। सौरभ = सुगंध। अतुल = जिसकी तुलना न हो सके, अनुपम। विषाद = दुःख, उदासीनता।

प्रसंग :– प्रस्तुत पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित कविता 'पुकार' से ली गई हैं, जिसमें कवि ने एक असफल प्रेमी की दयनीय दशा का वर्णन किया है।

व्याख्या :– कवि कहता है कि प्रेम में असफल प्रेमी अत्यंत दुःखी है। उसे उद्यान के हरे–भरे वृक्ष, सुगंधित कलियों से परिपूर्ण लताएं तथा रस भरे पुष्प भी उसके दुःख को हल्का नहीं कर पाते। कलियों के भार से लदकर केमल–कोमल डालियाँ नीचे की ओर झुक रही हैं किन्तु वह प्रिय–वियोग में व्यथित है। विषाद रूपी काँटों की चुभन ने उसकी चेतना को इस प्रकार मूर्छित कर दिया है मानो उस पर उन कांटों के विष का प्रभाव पड़ गया हो। इस कारण वह अपनी चेतना खो बैठता है और संसार के सुखों का तनिक भी उपयोग नहीं कर पाता। ऐसी दशा में वह धीरे से पुकार उठता है कि 'मुझे कभी प्यार नहीं मिला।'

विशेष :– प्रेम में असफल प्रेमी को प्राकृतिक सौंदर्य भी दुखदायी लगता है। मानवीकरण, अनुप्रास, रूपक और पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार प्रयुक्त हुए हैं। भाषा तत्सम प्रधान, कोमलकांत पदावली तथा गेयता का गुण है।

जीवन रजनी का अमल इन्दु
न मिला स्वाती का एक बिन्दु
जो हृदय सीप में मोती बन
पूरा कर देता लक्षहार,
धीरे से वह उठता पुकार–
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

शब्दार्थ :– रजनी = रात। अमल = निर्मल। इन्दु = चंद्रमा। स्वाती = स्वाती नक्षत्र। लक्षहार = लाखों का हार।

प्रसंग :– प्रस्तुत पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित कविता 'पुकार' से ली गई हैं। जिसमें कवि ने विषादपूर्ण प्रेमी का मार्मिक वर्णन किया है।

व्याख्या :– कवि असफल प्रेमी की दयनीय दशा का वर्णन करते हुए कहता है कि उसे अतीत की स्मृतियां बार–बार रुलाती हैं। उसे केवल यही अभाव खटकता है कि वह जीवन भर अपने प्रिय को प्राप्त नहीं कर सकता। उसका प्रिय उसके जीवन के समस्त दुःखों एवं निराशाओं का उसी प्रकार अन्त कर सकता है जिस प्रकार चन्द्र अपनी विमल ज्योत्स्ना द्वारा रात्रि की अन्धकार–राशि का। जिस प्रकार स्वाति नक्षत्र में बरसे हुए जल का एक कण भी सीप के उदर में जाकर उसे मोती का बहुमूल्य रूप दे देता है। उसी प्रकार यदि उसे अपने प्रिय के प्रेमरस का एक कण भी प्राप्त हो जाता है तो वह उसकी हृदय रूपी सीप में जाकर ऐसा बहुमूल्य मोती बन जाता जिसकी आभा के समक्ष लक्षहार की अनूठी आभा भी फीकी पड़ जाती, किन्तु दुःख तो इस बात का है कि उसे प्रेम–रस का एक कण भी प्राप्त न हुआ इसीलिए वह दुःखी हृदय से धीरे से पुकार उठता है कि मुझे जीवन भर कभी प्यार नहीं मिला है।

विशेष :– प्रिय से प्रेम का प्रतिदान नहीं मिलने से असफल प्रेमी की दशा का अत्यंत सफल चित्रण किया गया है। इसमें रूपक अलंकार का प्रयोग हुआ है। भाषा तत्सम प्रधान, कोमलकांत पदावली तथा गेयता का गुण है।

पागल रे! वह मिलता है कब
उसको तो देते ही है सब
आँसू के कन कन से गिनकर
यह विश्व लिए है ऋण उधार,
तू क्यों फिर उठता है पुकार?
मुझको न मिला रे कभी प्यार।

शब्दार्थ :– ऋण = उधार।

प्रसंग :– प्रस्तुत पंक्तियां जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित कविता 'पुकार' से ली गई हैं। जिसमें कवि ने एक असफल प्रेमी की दयनीय दशा का चित्रण करते हुए प्रेम के उज्ज्वल स्वरूप की ओर संकेत किया है।

व्याख्या :– कवि कहता है कि असफल प्रेमी प्रेम के वास्तविक स्वरूप को पहचानने के बाद स्वयं को पागल कहकर सांत्वना देता है कि प्रिय भला कब प्राप्त होता है? उसे तो सब आत्मदान ही देते हैं। प्रेम में पाने के स्थन पर देना ही श्रेष्ठ होता है। उसके आँसुओं का कण–कण प्राप्त कर विश्व उसका श्रणी हो जाएगा। इसलिए कवि उसे समझाता है कि प्रेम में प्रतिदान की आशा नहीं करनी चाहिए तो वह क्यों फिर पुकार उठता है कि उसे कभी प्यार नहीं मिला है।

विशेष :– कवि ने स्पष्ट किया है कि आत्मदान ही सच्चा प्रेम होता है। प्रेम में देना होता है, लेना नहीं। जो जितना अधिक देता है, वह उतना ही श्रेष्ठ प्रेमी होती है। पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है। भाषा तत्सम प्रधान, कोमलकांत पदावली तथा गेयता का गुण है।

5.4 पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न

प्र1) 'किरण' कविता का सार लिखिए।

उत्तर) जयशंकर प्रसाद किरण को प्रकृति के आंगन में विचरते हुए देखकर कहते हैं कि सूर्य की किरण किसके प्रेम में रंगकर हर तरफ बिखरी हुई है और स्वर्ण कमलों पर पराग उड़ा रही है। वह कहते हैं कि ऐसा लगता है कि मानो किरण प्रार्थना की तरह झुकी हुई, मधुर मुरली के समान स्वर पैदा करते हुए भी शांति से किसी अनजान संसार की दूत हो। किरण कोई आकाश यानि की आकाशमार्ग से कोई दिव्य ही है जो कि अद्‌भुत होते हुए संसार की व्याधियों को मिटाने का स्रोत हैं यहाँ कवि अज्ञात–सत्ता के बारे में कहने की कोशिश कर रहा है जो कि आध्यात्मिक है और कभी न समाप्त होने वाली उर्जा है। कवि ने प्रकृति के माध्यम से ही आध्यात्मिक उर्जा की प्रवाह बताने की कोशिश की है। वह कहते हैं कि महानदी की बहती धारा की तरह किरण किस तरफ बहती जा रही है। मानो ऐसा प्रतीत होता है कि किरण स्वर्ग को धरती से जोड़ने की कड़ी बन रही है। कवि किरण को ही आध्यात्मिक उर्जा का स्रोत बताते हुए कह रहे हैं कि वह सभी दुःख समाप्त कर सकती है। निरन्तर चलने वाली किरण अर्थात् कभी न थकने वाली किरण से कवि कहता है कि वह थोड़ा विश्राम कर लें और पुष्प मंदिर में जाकर विराजे जहाँ फिर बसन्त आ जाए और सारा वातावरण सुगंध से भर जाए।

प्र2) कवि ने 'किरण' से क्या प्रश्न पूछे हैं?

उत्तर) कवि ने 'किरण' से निम्नलिखित प्रश्न पूछे हैं। कवि किरण से पूछते हैं कि वह किसके प्रेम में रंगकर हर तरफ फैली हुई स्वर्ण फूलों के पराग के कणों को उड़ा रही है।

तुम कौन सी दूत हो जो प्रार्थना की तरह झुकी हुई मधुर मुरली की तरह शांति स्वरुप मौन होकर किसी अनजान संसार की वेदना बताती हो?

तुम प्रातः कालीन सूर्य के कोमल मुख पर विलास करते हुए बिना थके नाचती हुई कौन हो? महानदी सी निरंतर किस तरफ बढ़ती जा रही हो? स्वर्ण को पृथ्वी के साथ जोड़ती तुम कौन हो? क्या तुम इस संसार को शोक रहित कर देना चाहती हो? तुम मणियों का हार कलई पर पहनकर किसे प्रेम निकेतन हार दिखा रही हो?

प्र3) 'पुकार' कविता का सार लिखिए।

उत्तर) इस कविता में कवि ने प्रेम से वंचित जिसने प्रेमी को भावनाओं को दर्शाया है, प्रेमिका से बहुत प्रेम किया, किन्तु उसके प्रेम को स्वीकार करने की अपेक्षा ठुकरा दिया गया। इस कविता के माध्यम से कवि प्रेमी की दुर्दशा की तरह बार–बार इसी बात को दोहरा रहा है कि उसे कभी प्यार नहीं मिला। प्रेम में असफल रहने के कारण प्रेमी की दशा अभाव और निराशा से जूझ रही है। कवि कहता है जिस प्रकार सागर से उठती लहरें आकाश को छू लेने के लिए आतुर रहती हैं लेकिन प्रति–उत्तर में निराशा ही हाथ लगती है उसी तरह निराश प्रेमी भी अपने प्रिय को पाने के लिए प्रत्येक प्रयास कर रहा है परन्तु उसे तिरस्कार और उपहास का ही सामना करना पड़ता है। वह प्रेमिका की मधुर मुस्कान के लिए तरस रहा है जिससे प्रेरणा लेकर वह जीने की कामना करने लगे ताकि उसके समस्त कर्म उज्ज्वल तथा उदार हो जाएंगे। कवि कहता है कि प्रेम में असफल प्रेमी अत्यन्त दुःखी है। उसे उद्यान के हरे–भरे वृक्ष, सुगंधित कलियाँ, रस भरे पुष्प यानि प्रकृति से जुड़ी हर चीज़ उसके दुख को कम नहीं कर पा रही है। वह प्रिय–वियोग में व्यथित है। ऐसा लगता है कि मानो विषाद रूप कांटों की चुभन ने उसकी चेतना को मूर्च्छित कर दिया है। उन कांटों के विष का प्रभाव उसके जीवन में इस तरह पड़ गया है कि वह संसार के प्रत्येक सुखों का तनिक भी उपभोग नहीं कर पा रहा। वह अपने जीवन रूपी रात्रि में चन्द्रमा से उत्पन्न रोशनी का इंतजार कर रहा है वह स्वाति नक्षत्र के एक बूंद के लिए तरसता है जो सीप में गिरकर मोती बन जाए अर्थात् उसका प्रेम पूरा हो जाए। अंततः प्रेमी प्रेम के वास्तविक स्वरुप को पहचानने के पश्चात् उसे ज्ञात होता है कि प्रेम में पाने के स्थान पर देना ही श्रेष्ठ होता है। कवि कहता है कि प्रेम में तो देना ही चाहिए। अतः यह नहीं कहना चाहिए कि मुझे प्रेम नहीं मिला। प्रेम के आंसुओं से समस्त संसार उसका ऋणी हो जाएगा और प्रेम कभी भी खाली नहीं जाएगा।

प्र4) प्रेम का शांतिमय सुखद ढंग क्या है?

उत्तर) प्रेम का शांतिमय सुखद ढंग यह है कि यदि आपने किसी से प्रेम किया है तो प्रेम में पाने के स्थान पर देने की अपेक्षा रखे। प्रेमी प्रेम को मोह का रूप न देकर श्रद्धा भाव से पूर्ण समर्पित होकर निभाए।

जो प्रेम करता है उसे प्रेमी की आशा या उम्मीद आवश्यक रहती है। एक तरफा प्रेम सच्चा प्रेम कहलाता है और ऐसे में यदि उसे प्रेमी मिल जाए तो भाग्य उत्तम कहलाता है।

जो प्रेमी प्रेम करता है वह सबसे प्रेम करता है। वह जड़–चेतन सभी से प्रेम करता है ऐसा प्रेम अमर कहलाता है। प्रेम में खोई वस्तु चाहे मिले या न मिले प्रेमी को कोई फर्क नहीं पड़ता क्योंकि वह तो प्रेम कोनिभाने में ही आनंद पाता है। ऐसा प्रेम अति दुर्लभ है पर ऐसा प्रेम तो दोष रहित है।

अंततः कहा जा सकता है कि प्रेम व्यक्ति को सार्थक बना देता है। प्रेम की उम्मीद प्रत्येक व्यक्ति को होती है। जिसके मिलने से प्रेमी का जीवन सफल हो जाता है और न मिलने पर उसे सारा वातावरण दुख–सा प्रतीत होता है। उसे संसार की प्रत्येक चीज निरर्थक लगने लगती है और वह प्रिय के वियोग में व्याकुल होकर इधर–उधर भटकता रहता है। प्रेमी की ऐसी स्थिति को देखकर कवि उसे समझाना चाहता है कि प्रेम में प्रतिदान की आशा नहीं करनी चाहिए क्योंकि आत्मदान ही सच्चा प्रेम होता है। जो जितना अधिक देता है, वह उतना ही श्रेष्ठ प्रेमी होता है।

5.5 निष्कर्ष

अंततः कहा जा सकता है कि प्रसाद जी का काव्य सौन्दर्य से परिपूर्ण है। सौन्दर्यानुभूति अत्यन्त उदात्त एवं पावन है। सौन्दर्य की जिस पावनता का उल्लेख इन्होंने किया है, उससे उनकी सौन्दर्य चेतना में और भी उत्कर्ष आ गया है।

5.6 कठिन शब्द

1. आलोचक
2. त्रिवेणी
3. विचरते
4. आध्यात्मिक
5. निरन्तर
6. उद्यान
7. विषाद
8. सार्थक
9. उदात्त
10. सांत्वना

5.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र1) कवि जयशंकर प्रसाद ने किरण से क्या पूछा?

उत्तर) कवि ने किरण से यह पूछा कि वह बिखरी हुई क्यों है।

प्र2) किरण ने क्या उड़ाया है?

उत्तर) किरण स्वर्ण पराग उड़ा रही है।

प्र3) किरण किसकी तरह मौन है?

उत्तर) किरण मूरती की तरह मौन है।

प्र4) किरण कहाँ नाचती है?

उत्तर) किरण उषा के आंचल में नाचती है।

प्र5) कवि किरण को क्या कह रहा है?

उत्तर) कवि किरण को विश्राम करने के लिए कह रहा है।

प्र6) कवि किरण को कहाँ विश्राम करने को कह रहा है?

उत्तर) कवि किरण को सुमन मंदिर में विश्राम करने को कह रहा है।

प्र7) कवि ने प्रेम का कौन–सा रूप दिया है?

उत्तर) कवि ने प्रेम को समर्पण का रूप दिया है।

प्र8) 'पुकार' कविता का प्रेमी निराश क्यों है?

उत्तर) प्रेमी की निराशा का कारण प्रेमिका का प्रेम न मिलना है।

5.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) कवि ने 'किरण' कविता का चित्रण कैसे किया है?

उत्तर) ....

....

....

....

प्र2) 'पुकार' कविता के माध्यम से कवि क्या कहना चाहता है?

उत्तर) ....

....

....

....

5.9 पठनीय पुस्तकें

1. काव्य सुमन – संपादक महेन्द्र कुलश्रेष्ठ
2. जयशंकर प्रसाद – रमेशचन्द्र शाह
3. हिन्दी का गद्य–साहित्य – डॉ. रामचन्द्र तिवारी
4. अनन्त – वेद राही

***

प्रसाद का व्यक्तित्व एवं साहित्यिक विशेषताएँ

6.0 रूपरेखा

61 उद्देश्य

6.2 प्रस्तावना

6.3 'जयशंकर प्रसाद' का व्यक्तित्व

6.4 जयशंकर प्रसाद की साहित्यिक विशेषताएँ

6.5 निष्कर्ष

6.6 कठिन शब्द

6.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.8 पाठनीय पुस्तकें

6.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन उपरान्त आप छायावाद के प्रतिनिधि कवि जयशंकर प्रसाद की भूमिका को समझते हुए उनकी साहित्यिक विशेषताओं से अवगत होंगे।

6.2 प्रस्तावना

जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत तथा सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, छायावाद की बृहत्त्रयी हैं। प्रसाद यदि छायावादी युग के ब्रह्मा, पंत विष्णु तो निराला जी उसके शिवशंकर हैं। महादेवी वर्मा, रामकुमार वर्मा एवं मखनलाल

चतुर्वेदी छायावाद की लघुत्रयी के अन्तर्गत आते हैं। हिन्दी–गद्य के परिष्कार के पश्चात् उसमें संयम और गाम्भीर्य का समावेश हो चुका था। इसके साथ ही छायावादी युग में अलंकार, सूक्ष्मता, काव्यात्मकता तथा तरल प्रवाह का सन्निवेश भी उसमें हुआ और 'प्रसाद' ने इस युग का प्रतिनिधित्व किया। निस्सन्देह 'प्रसाद' अपने युग के महान चिंतक, प्रयोक्ता और सर्वश्रेष्ठ सर्जनात्मक प्रतिभा के कवि कहे जाते हैं।

6.3 'जयशंकर प्रसाद' का व्यक्तित्व

जयशंकर प्रसाद छायावादी काव्य के श्रीगणेशकर्त्ता माने जाते हैं। प्रसाद को छायावाद (स्वच्छन्दतावादी काव्य) का प्रवर्तक कहना कवि के प्रति अंधश्रद्धा का सूचक है। प्रसाद, निराला, पंत ने लगभग एक समय में लिखना प्रारंभ किया था। किसी कवि के थोड़ा पहले जन्म लेने मात्र से उसे किसी काव्यान्दोलन का प्रवर्तक नहीं ठहराया जा सकत। इसे विशिष्ट काल–खंड का उत्पादन मानना चाहिए। आधुनिक काल के विकास–क्रम की दृष्टि से देखा जाये तो यह नवजागरण की फलश्रुति है। प्रसाद का 'आँसू' जो उनकी पहली छायावादी कृति है, सन् 1925 में प्रकाशित हुई।इसके पहले 'निराला' की 'अनामिका' (प्रथम) सन् 1923 में छपी। पंत के 'पल्लव' का प्रकाशन सन् 1926 में हुआ।

जयशंकर प्रसाद के काव्य–विकास में जो मंदता दिखाई पड़ती है उसके मूल में उनकी अपनी पारिवारिक स्थिति और काशी का साहित्यिक परिवेश था। इनका जन्म 30 जनवरी 1889 ई. में वाराणसी उत्तर प्रदेश में हुआ था। इनके पितामह श्री शिवरत्न जी तथा पिता देवी प्रसाद जी काशी में तम्बाकू, सुंघनी तथा सुर्ती के मुख्य विक्रेता थे। प्रसाद जी की माता का नाम श्रीमती मुन्नी देवी था। इनका परिवार काशी में सुंघनी साहु के नाम से प्रसिद्ध था। प्रसाद जी जब सातवीं कक्षा में पढ़ते थे तो इनके पिता का देहान्त हो गया। जिसके चलते परिवार को चलाने का दायित्व इनके बड़े भाई शम्भु रत्न पर आ गया। प्रसाद जी की प्रारंभिक शिक्षा काशी के क्वींस कालेज में हुई और बाद में घर पर इनकी शिक्षा का व्यापक प्रबंध किया गया। घर बैठकर ही इन्होंने संस्कृत, हिन्दी, उर्दू तथा फारसी का अध्ययन किया। प्रसाद जी का मन दुकानदारी में नहीं लगता था। यहां तक कि उन्हें भाई की डांट भी सहनी पड़ती है फिर भी उन्हें कोई असर नहीं होता। जयशंकर प्रसाद को विभिन्न बाधाओं का सामना करना पड़ता है। पढ़ाई के प्रति उनकी लगन को देखकर बड़ा भाई उन्हें कविता लिखने की छूट देता है क्योंकि दुकान में काम करते वक्त कविता की तरह ध्यान नहीं दे पाते थे। कुछ समय पश्चात् भाई की भी मृत्यु हो जाती है। किशोरावस्था के पूर्व ही माता और बड़े भाई का देहावसान होने के कारण प्रसाद जी पर आपदाओं या विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ा, जिसके चलते परिवार की ज़िम्मेदारी इन पर आ गई। पिता की मृत्यु पश्चात् परिवार ऋणग्रस्त हो गया था। ऋणमुक्ति होने के लिए प्रसाद को श्रमपूर्वक

पैतृक व्यापार में लगना पड़ता है। वह एक ओर विपरीत परिस्थितियों से जूझते रहे, दूसरी ओर अध्ययन–मनन और लेखन से। इनकी दुकान से थोड़ी ही दूर पर पारसी रंगमंच के प्रसिद्ध नाटककार आगा हश्र कश्मीरी रहते थे। जिनसे प्रसाद का कभी साक्षात्कार नहीं हुआ, थोड़ा और आगे प्रेमचन्द रहते थे। प्रातःकाल टहलते समय उनका नित्य मिलना होता था। इनके बीच प्रसाद जी एक नया मार्ग खोज रहे थे जिसमें वह सफल भी रहते हैं। वह एक कुशल कवि, नाटककार, कहानीकार, उपन्यासकार होने के अतिरिक्त बाग–बगीचे और शतरंज के खिलाड़ी भी थे। वह नियमित व्यायाम करने वाले व्यक्ति थे। साथ ही सात्विक खान–पान एवं गंभीर प्रकृति के व्यक्ति थे।

जयशंकर प्रसाद ने विपुल मात्रा में साहित्य की रचना की। इन्होंने पद्य एवं गद्य दोनों ही क्षेत्रों में अनुपम रचनाएँ प्रस्तुत की हैं जो निम्नलिखित हैं–

काव्य :– चित्राधार, कानन–कुसुम (1913), झरना (1918), लहर(1933), माहाराणा का महत्व (1914), प्रेम–पथिक (1913), आँसू (1925), कामायनी (1935)।

कहानी :– छाया (1912), प्रतिध्वनि (1926), इन्द्रजाल (1936), आकाशद्वीप (1929), आंधी (1929)।

उपन्यास :– कंकाल (1929), तितली (1934), इरावती (अपूर्ण)।

नाटक :– चंद्रगुप्त (1931), स्कंदगुप्त (1928), अजातशत्रु (1922), जनमेजय का नागयज्ञ (1924), ध्रुवस्वामिनी (1933), करुणालय (1913), कामना (1927), कल्याणी, परिणय (1912), प्रायश्चित (1912), सज्जन (1910), राज्यश्री (1918), विशाखा (1921) और एक घूंट (1930)।

निबन्ध :– काव्यकला और अन्य निबन्ध

प्रसाद जी की भाषा संस्कृत प्रधान भाषा है। इन्होंने प्रबन्ध और मुक्तक दोनों भाषाओं में लिखा।इनकी शैली भावात्मक तथा दार्शनिक है।

जयशंकर प्रसाद जी अत्यन्त उदार, सरल, मृदुभाषी, साहसी एवं स्पष्ट वक्ता थे। उन्हें साहित्य पर जो भी पुरस्कार मिले, उन्होंने वह सभी दान कर दिये। वह एकान्तप्रिय तथा भीड़–भाड़ से बचने वाले व्यक्ति थे। 15 नवम्बर 1937 को इनका देहान्त हो गया। अल्पायु में ही उनकी मृत्यु हो गई। हिन्दी जगत को प्रसाद जी ने अमूल्य साहित्य रत्न दिए।

6.4 जयशंकर प्रसाद की साहित्यिक विशेषताएँ

जयशंकार प्रसाद जी ने हिन्दी साहित्य को एक नई दिशा दी और हिन्दी की प्रत्येक विधा को समृद्ध किया। प्रसाद जी द्वारा रचित साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. **सौंदर्य चित्रण** :– जयशंकर प्रसाद जी प्रेम और सौंदर्य के कवि हैं इसीलिए उनका काव्य प्रेम व सौंदर्य से परिपूर्ण है। सौंदर्य के विविध रूप प्रसाद जी के काव्य में व्याप्त हैं। नारी सौन्दर्य, प्रकृति सौन्दर्य एवं भाव सौन्दर्य का सुन्दर चित्रण इनके काव्य में मिलता है। सौन्दर्य को वे परमात्मा के द्वारा दिया गया सात्विक वरदान मानते हैं–

उज्ज्वल वरदान चेतना का,
सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं।
जिसमें अनन्त अभिलाषा के,
सपने सब जगते रहते हैं।।

प्रसाद जी सौन्दर्य को एक उदात्त एवं पवित्र भावना मानते हैं, जिसमें वासना का लेश नहीं है। 'आँसू' में नायिका के पावन तन की शोभा निरूपित करते हुए वे कहते हैं–

चंचला स्नान कर आवे,
चन्द्रिका पर्व में जैसी।
उस पावन तन की शोभा,
आलोक मधुर थी ऐसी।।

चाँदनी में स्नात विद्युत की जो कल्पना की जाए, वही उस नायिका के पवित्र शरीर की आभा थी। कवि ने आलंकारिक शैली में नायिका के अंग–प्रत्यंग की शोभा का वर्णन 'आँसू' में किया है।

प्रसाद जी प्रकृति के भी उपासक रहे हैं और प्रकृति के प्रति उनका अगाध आकर्षण गीतों में फूटा है। प्रसाद का काव्य प्रकृति के मनोरम दृश्यों एवं पदार्थों की रंगीन चित्रशाला है। इन्होंने प्रकृति के कोमल तथा कठोर रूपों का अंकन समान रूप से किया है। 'कामायनी' में प्राकृतिक सौंदर्य के चित्र अंकित किए गए हैं। 'उषा' का सौन्दर्य द्रष्टव्य है–

'उषा सुनहले, तीर बरसती, जय लक्ष्मी–थी
उपित हुई।
नव कोमल आलोक बिखरता, हिम संसृति
पर भर अनुराग
सित सरोज पर क्रीड़ा करता, जैसे मधुमय पिंग पराग।''

2. **देश–प्रेम :–** 'प्रसाद' के नाटक उनके देश–प्रेम के अमर प्रतीक हैं। 'प्रसाद' के हृदय में देश के प्रति प्रगाढ़ प्रेम था। इसी प्रेम ने उन्हें संस्कृति, धर्म और दर्शन के अध्ययन की ओर प्रेरित किया था। देश–प्रेम की प्रधानता के कारण ही इतिहास के उज्ज्वल रत्नों को 'प्रसाद' ने नाटकों में संजोया है। व्यास, गौतम, चाणक्य, दाण्डयायन, स्कन्द, चन्द्रगुप्त आदि का देश–प्रेम 'प्रसाद' के ही देश–प्रेम का आधार लेकर खड़ा हुआ है। 'प्रसाद' का यह देश–प्रेम न तो जातीयता को तिरस्कृत करता है और न विश्व प्रेम का विरोध ही उपस्थित करता है। वह बड़ी ही उदात्त भावना के आधार पर मूर्त हुआ है।

3. **प्रेम और त्याग भावना का वर्णन :–** जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में प्रेम और त्याग–भावना का भी चित्रण हुआ है। इसका सुंदर उदाहरण 'आकाशद्वीप' कहानी में मिलता है। चम्पा और बुद्धगुप्त में अत्याधिक प्रेम है लेकिन जब बुद्धगुप्त उससे द्वीप को छोड़कर भारत चलने का आग्रह करता है तो वह अपने द्वीपवासियों के साथ रहने कीइच्छा प्रकट करती है। इन दोनों का आत्मिक प्रेम है जो वासना पर आधारित न होकर त्याग की भावना को वर्णन करता है।

4. **सांस्कृतिक वातावरण :–** 'जयशंकर प्रसाद' ने केवल इतिहास का ही उद्वार नहीं किया है, भारतीय संस्कृति के उदात्त–अनुदात्त स्वरूप का उद्घाटन भी किया है। महाभारत–युग के अन्त से लेकर हर्षवर्द्धन के उद्भव तक का सम्पूर्ण सांस्कृतिक वातावरण उनके नाटकों में बिम्बित हो उठा है। आर्यों और नागों का संघर्ष,ब्राह्मणों और क्षत्रियों की प्रतिस्पर्धा, सम्राटों का शौर्य, विलासिता, देशभक्ति और अपराजित, स्वाभिमान, सामाजिक संगठन का प्रयत्न, जनता की धर्मभीरुता तथा वीर–पूजा की प्रवृत्ति आदि भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल और अनुज्ज्वल पक्ष उनके नाटकों में साकार हो गये हैं।

5. **मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा :–** जयशंकर प्रसाद जी ने सदा मानव का मूल्यांकन गुणों और चरित्र के आधार पर किया है। प्रसाद के अनुसार ऊँच–नीच, जाति–पाति सभी मनुष्य द्वारा निर्मित संकीर्ण प्रवृत्तियां समाजमें कोई

स्थान नहीं रखती। वह मनुष्य के द्वारा मनुष्य के शोषण के सदैव विरोधी हैं। उनकी कहानियों में राजा–रानियों से लेकर दीन–दुखियों तक को स्थान मिला है। उनके लिए मानवता ही सर्वोपरि धर्म है।

6. **ईश्वर प्रेम :–** छायावादी कवि रहस्यवादी भी हैं और प्रकृति से प्रभु के दर्शन करते हैं। प्रसाद जी के काव्य में रहस्यवादी तत्व पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। जिज्ञासा, प्रेम, विरह तथा मिलन के सोपानों से गुज़रनेवाली ईश्वर प्रेम की भावना का कवि ने वर्णन किया है। कवि, ईश्वर के अस्तित्व के विषय में जिज्ञासा व्यक्त करता हुआ कहता है–

> ***'हे अनंत रमणीय! कौन तुम?***
> ***यह मैं कैसे कह सकता।***
> ***कैसे हो? क्या हो? इसका तो***
> ***भार विचार न सह सकता?***

7. **भाषा और शैली :–** 'प्रसाद' की भाषा में उनकी चेतना का पूर्ण प्रतिबिम्ब देखा जा सकता है। जब वे विचार एवं चिन्तन की गहराइयों में पैठकर 'साहित्य', 'कला' तथा दार्शनिक विषयों को अभिव्यक्ति देते हैं, तब भाषा का स्वरूप संयमित, गम्भीर एवं संस्कृतनिष्ठ हो जाता है। जब ऐतिहासिक तथ्यों को अतीत के अंधकार से निकालकर प्रकाश में ले आते हैं, तो भाषा में तार्किकता, सूत्र–शैली तथा विश्वास–जनित दृढ़ता झलकती है। इसी प्रकार जब वे उपन्यासों और कहानियों में वर्तमान युग की यथार्थता को स्पर्श करते हैं तो उनकी भाषा में जीवन की वस्तुस्थिति सिमट आती है। वाक्य छोटे–छोटे हो जाते हैं। अलंकरण की प्रवृत्ति दब जाती है। अतीत के खंडहरों में विचरण करतेसमय उनकी भाषा, कल्पना की विभूति से भर जाती है।

8. **छंद विधान :–** छंद विधान की दृष्टि से प्रसाद जी की प्रारंभिक रचनाएँ घनाक्षरी, छंद में थीं। प्रेम–पथिक में उन्होंने अतुकांत छंदों को ही अपनाया है। 'आँसू' में उन्होंने लोकप्रिय छंद का प्रयोग किया है। कामायनी में ताटंक, पादकुलक, रूपमाला सार तथा रोला आदि छंदों का प्रयोग किया है। अंग्रेज़ी के सॉनेट तथा बंगला के त्रिपदीऔर पयार जैसे छन्दों का प्रयोग भी उन्होंने किया है।

9. **रस–योजना :–** जयशंकर प्रसाद जी ने काव्य में रस–योजना का सुंदर वर्णन किया है। 'आँसू' इनका सफल विरह–काव्य है। इसमें कवि ने आलंबन, उद्दीपन, अनुभव और संचारी भावों की सुंदर योजना प्रस्तुत की है जिसका स्पष्ट उदाहरण 'आँसू' में मिलता है–

(क) **स्थायी भाव :–**

मादक थी मोहमयी थी, मन बहलाने की
क्रीड़ा।
अब हृदय हिला देती है, वह मधुर प्रेम
की पीड़ा।।

(ख) **उद्दीपन :–**

जो घनीभूत पीड़ा थी, मस्तक में स्मृति–सी
छाई
दुर्दिन में आँसू बनकर, वह आज बरसने
आई।

इनके काव्य में भयानक, अद्‌भुत, वात्सल्य, रौद्र और करुण रस का भी संदर वर्णन हुआ है।

10. **अलंकार योजना :–** प्रसाद के काव्य में अलंकारों का सहज स्वाभाविक प्रयोग हआ है। उनके काव्य में शब्दालंकारों और अर्थालंकारों का प्रयोग मिलता है। उन्होंने श्लेष, रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा, विशेषण–विपर्यय, मानवीकरण आदि अलंकारों का सफल प्रयोग किया है।

उदाहरण :–

अनुप्रास :– *कोमल कपोल पाली में*
सीधी सादी कोमल रेखा

उत्प्रेक्षा :– *खिला हो ज्यों बिजली का फूल,*
मेघवन बीच गुलाबी रंग।

11. **संगीतात्मकता :–** संगीतात्मकता उनके काव्य का प्रमुख स्वर है। संगीत की स्वर लहरी पद–पद में झलकती है। 'कामायनी', 'आँसू', 'लहर', 'झरना' सभी कविताएँ गेय हैं।

12. **आधुनिकता की झलक :–** 'प्रसाद' के नाटकों में आधुनिक समाज की झांकी भी मिल जाती है। 'अजातशत्रु' में बिम्बसार का अजातशत्रु की अयोग्यता की आड़ में राजसत्ता न सौंपने का बहाना आधुनिक साम्राज्यवादी मनोवृत्ति का सूचक है। 'स्कन्दगुप्त' में देश–भक्ति के क्षेत्र में स्त्रियों का पूर्ण सहयोग, आधुनिक नारी–जागरण का परिचायक है। साथ ही 'देवसेना' द्वारा गाना गाकर भीख माँगते समय युवकों की मनोवृत्ति का चित्रण आज के युवकों के सामने ला देता है। 'ध्रुवस्वामिनी' में तो नारी के अनमेल विवाह की स्पष्ट समस्या उठायी गयी है।

वस्तुतः इनके साहित्य में सर्वतोन्मुखी प्रतिभा की झलक दिखाई देती है।

6.5 निष्कर्ष

जयशंकर प्रसाद जी के काव्य में विषय–नवीनता, भाव–जगत का संस्कार, नवीन कल्पनाओं की सृष्टि, मानवीय सौन्दर्य का चित्रण, प्राकृतिक सौन्दर्य, रहस्यात्मकता और छायावाद की सभी विशेषताएँ उपलब्ध होती हैं। भले ही इनके नाटक अभिनेय न हों, भले ही इन्होंने यथार्थ को महत्व न दिया हो, भले ही इनका दृष्टिकोण रूमानी हो, भले ही इनका साहित्य दार्शनिक समाधान प्रस्तुत करने वाला हो, इससे उनकी अमरता पर कोई आँच नहीं आ सकती। प्रसाद एक मानवतावादी युगान्तकारी महाकवि हैं, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं–

''सदियों तक साहित्य नहीं यह समझ सकेगा।

तुम मानव थे या मानवता के महाकाव्य थे।''

6.6 कठिन शब्द

1. प्रतिनिधित्व
2. प्रयोक्ता
3. फलश्रुति
4. उत्पादन
5. विपुल

6. लेश

7. सात्विक

8. आग्रह

9. संकीर्ण

10. रहस्यात्मकता

6.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) 'जयशंकर प्रसाद' के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालें।

उत्तर) ....

....

....

....

प्र2) 'जयशंकर प्रसाद' की साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालें।

उत्तर) ....

....

....

....

6.8 पाठनीय पुस्तकें

1. काव्य सुमन – संपादक महेन्द्र कुलश्रेष्ठ
2. हिन्दी का गद्य–साहित्य – डॉ. रामचन्द्र तिवारी
3. अनन्त – वेद राही
4. हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ – डॉ. शिव कुमार शर्मा

***

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याएँ तथा पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न

7.0 रूपरेखा

7.1 उद्देश्य

7.2 प्रस्तावना

7.3 सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याएँ

7.4 पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न

7.5 निष्कर्ष

7.6 कठिन शब्द

7.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

7.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.9 पठनीय पुस्तकें

7.1 उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख को पढ़ने के उपरान्त आप सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याओं तथ कविताओं पर आधारित प्रश्नों से अवगत हो सकेंगे।

7.2 प्रस्तावना

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविताओं में नवजागरण का सन्देश दिया गया है। इनके काव्य में प्रगतिशील चेतना और राष्ट्रीयता का स्वर विद्यमान है। मानव की पीड़ा, परतन्त्रता के प्रति तीव्र आक्रोश इनकी कविताओं मेदिखाई देता है। इन्होंने कविताओं के माध्यम से एक गरीब व्यक्ति की त्रासदी को दर्शाया है। साथ ही भारतवासियों के भीतर देश प्रेम की भावना को उजागर किया है।

7.3 सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की कविताओं की सप्रसंग व्याख्याएँ

<u>सप्रसंग व्याख्या</u>

'भिक्षुक'

1. *वह आता–*

दो टूक कलेजे के करता, पछताता पथ पर आता।

पेट–पीठ दोनों मिलकर हैं एक

चल रहा लकुटिया टेक,

मुट्ठी भर दाने को भूख मिटाने को

मुँहफटी पुरानी झोली को फैलाता।

दो टूक कलेजे के करता, पछताता पथ पर आता।

शब्दार्थ :– वह = भिखारी। दो टुक = दो टुकड़े। पछताता = दुःखी होता। पेट–पीठ मिलाकर = बहुत शिथिल, कमजोर। लकुटिया टेक = लाठी के सहारे।

प्रसंग :– यह पद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक काव्य सुमन में संकलित कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की कविता 'भिक्षुक' में से लिया गया है। कवि ने भिक्षुक की अवस्था तथा दुख का मार्मिक चित्रण किया है। कवि ने बहुत ही दया से भिक्षुक की वेदना को जानने की चेष्टा की है।

व्याख्या :– कवि भिखारी की हालत को बहुत ही दया तथा सहानुभूति से देख रहे हैं कि भिखारी कमजोर व अत्यंत दुखी होकर बिलखते हुए अपने भाग्य की कमज़ोरी पर रो रहा है और बलहीन, कुपोषण से ग्रस्त होकर लाठि के सहारे गिर–गिरकर चल रहा है। साथ ही हर किसी से मुट्ठी भर दाना अनाज पाने के लिए अपनी फटी पुरानी झोली का मुँह खोल रहा है। बार–बार तिरस्कृत हो रहा है और इसी बात से अत्यंत दुःखी होकर अपने पूर्व कर्मों को कोस रहा है और रो रोकर बार–बार रास्ते पर आ रहा है।

विशेष :– भिखारी का ऐसा हाल कर्मों के कारण है। कवि कर्मों के सिद्धांत को मानते हुए कह रहे हैं कि बुरे का बुरा नतीजा होता है। अतः भिखारी के कर्म ठीक नहीं रहे होंगे। कवि बहुत ही दया से भिखारी को देख रहे है। कवि थोड़े आध्यात्मिक भी प्रतीत हो रहे हैं। कविता मुक्तछंद में लिखी गई है।

2. *साथ दो बच्चे भी हैं सदा हाथ फैलाये,*
बायें से वे मलते हुए पेट को चलते,
और दाहिना दया–दृष्टि पाने की ओर बढ़ाये।
भूख से सूख ओंठ जब जाते,
दाता भाग्यविधाता से क्या पाते?
घूँट आसुओं के पीकर रह जाते।
चाट रहे जूठी पत्तल वे कभी सड़क पर खड़े हुए,
और झपट लेने को उनसे कुत्ते भी हैं अड़े हुए।
ठहरो, अहो मेरे हृदय में है अमृत,
मैं सींच दूँगा,
अभिमन्यु जैसे हो सकोगे तुम,
तुम्हारे दुख मैं अपने हृदय में खींच लूँगा।

शब्दार्थ :– बाएँ से वह मलते = पेट को मलते भूख का ईशारा देते हुए। सूखे ओंठ = भूख–प्यास से होंठ सूखते। भाग्य विधाता = भगवान। घूंट आंसूओं के = दुःख के आँसु।

प्रसंग :– यह पद्यांश हमारी पाठ्यपुस्तक काव्य सुमन में संकलित कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की कविता 'भिक्षुक' में से लिया गया है। कवि भिखारी की दयनीय स्थिति का वर्णन कर रहे हैं और भिखारी की दशा को सुधारने के लिए तत्पर हैं।

व्याख्या :– कवि कह रहे हैं कि भिक्षुक क्षीण होकर लाठी के सहारे चलता है और दो उसके बच्चे भी हैं वह भी भूख के कारण हाथ फैला रहे हैं। वह एक हाथ से पेट को मलते हुए इशारा कर रहे हैं कि वह भूखे हैंऔर दूसरे हाथ से किसी की दया दृष्टि मिले इसके लिए बार–बार हाथ आगे बढ़ा रहे हैं। इनके होंठ भूख प्यास से सूखे हुए हैं पर इनको कोई भी दया दृष्टि से नहीं देख रहा है। ऐसा लगता है मानो इनको विधाता की तरफ से कोई बुरे कर्मों का दंड मिला है। वह भूख से बिलखते रहते हैं किसी से भिक्षा न मिलने पर वह अपने आँसुओं के घूंट पीकर रह जाते हैं। कोई इनके दर्द को नहीं समझता। वह अपना दर्द दिल में छुपा लेते है। भूख से बिलखते हुए बच्चों को जब कोई अनाज की जूठी पत्तलें दिखाई देती हैं वह अपनी भूख मिटाने के लिए पतलों से खाना उठाते हैं और वह कुत्तों से भी संघर्ष करते नज़र आते हैं। कवि उनकी दशा देखकर बहुत दुखी होते हैं। वह कहते हैं कि मैं तुम्हें इसदशा में निकालने का यत्न करूंगा। मैं तुम्हें अभिमन्यु जैसी दक्षता दूंगा ताकि तुम अपनी हर परिस्थिति से लड़ पाओ। इस तरह से तुम्हारे दुख का अंत कर दूँगा।

विशेष :– कवि ने भिखारी की स्थिति का बहुत ही मार्मिक ढंग से निरीक्षण कर यह कविता लिखी है। कवि ने गरीबों के प्रति सहानुभूति दिखाई है। कवि ने भिखारी की स्थिति के लिए कर्मों को दोषी ठहराया है जबकि गरीबी किसी राष्ट्र की कमजोरी है वह इसलिए कि राष्ट्र के पास पर्याप्त योजनाएं नहीं हैं गरीबी से बचने के लिए। गरीबी अज्ञान के कारण है। गरीब को पढ़ना जरूरी है। शिक्षा से वह अपनी गरीबी निश्चय ही दूर कर लेगा। कवि भी इसी तरह का प्रयास करना चाहते हैं । कविता मुक्त छंद में लिखी है। मुहावरों तथा तत्सम, तत्भव शब्दों का प्रयोग हुआ है।

सप्रसंग व्याख्या

'जागो फिर एक बार'

1. *जागो फिर एक बार।*
प्यारे जगाते हुए हारे सब तारे तुम्हें
अरूण–पंख तरूण–किरण

खड़ी खोलती है द्वार
जागो फिर एक बार!

शब्दार्थ :– अरूण पंख = नए, लाल पंख, प्रातःकाल की लाली। तरूण = नया।

प्रसंग :– प्रस्तुत पद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक काव्य सुमन में संकलित कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की कविता 'जागो फिर एक बार' में से लिया गया है। कवि भारतवासियों को प्रेरणा दे रहे हैं।

व्याख्या :– कवि जागृति का संदेश देते हुए कहते हैं कि भारतवासियों जागो। संकल्प करो। तुम्हें जगाने के प्रयास सब हारे हैं। संसार की घटनाओं से तुमने कोई भी सीख नहीं ली है। कोई दिशा अपनी निर्धारित नहींकी है। प्रातः काल का नया सूर्य तुम्हें जगा रहा है, नयी सोच नयी दिशा लक्ष्य की मांग करते हुए तुम्हें जगाने का प्रयास कर रहे हैं। अतः तुम अब जाग जाओ।

विशेष :– भारतवासी मानसिक तौर पर सोए हैं। उन्हें मानसिक तौर पर जगाने का प्रयास किया है। भारतवासियों को संदेश देकर जागृत होने के लिए प्रेरित कर रहे हैं। तत्सम प्रधान भाषा, मुक्त छंदावली है।

2. *आँखें अलियों–सी*
किस मधु की गलियों में फँसी,
बन्द कर पाँखें
पी रही हैं मधु मौन
या सोयी कमल–कोरकों में–
बन्द हो रहा गुंजार–
जागो फिर एक बार!

शब्दार्थ :– अलियों = भवरों। मधु = रस, बसंत। पांखे = पंख। कमल कारकों = कमल की कलियां। गुंजार = स्वर।

प्रसंग :– प्रस्तुत पद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक काव्य सुमन में संकलित कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की कविता 'जागो फिर एक बार' में से लिया गया है। कवि भारतवासियों को अपना सुख त्यागकर जागृत होने का संदेश दे रहे हैं।

व्याख्या :– कवि भारतवासियों को संदेश देते हुए कहते हैं कि तुम्हारी आँखें भौरों के समान हैं। वह न जाने कहाँ कौन–सी गलियों में भटक रही हैं और बंद आँखों से कौन से रस का पान कर चुपचाप बैठी हैं। इन्हें परतंत्रता क्यों नहीं सताती। नींद में बंद तुम्हारी आँखें न जाने क्या सपने बुनकर उनका आनन्द उठा रही हैं। कौन से कमल के फूलों का रस पी रही हैं कि तुम बेहोश होकर अपना कर्त्तव्य भूल गए हो। इसीलिए आज़ादी के लिए तुम जागो।

विशेष :– कवि देश की युवा पीढ़ी को मानसिक रूप से जागने का संदेश दे रहे हैं। तत्सम प्रधान भाषा तथा मुक्त छंद हैं।

3. *अस्ताचल ढले रवि,*
शशि–छवि विभावरी में
चित्रित हुई है देख
यामिनी गन्धा जगी,
एकटक चकोर–कोर दर्शन–प्रिय
आशाओं–भरी मौन भाषा बहु भावमयी
घेर रहा चन्द्र को चाव से
शिशिर–भार व्याकुल कुल
खुले फूल झुके हुए,
आया कलियों में मधुर
मद–उर योवन–उभार
जागो फिर एक बार!

शब्दार्थ :– अस्ताचल = पश्चिम दिशा। रवि = सूर्य। शशि = चन्द्रमा। छवि = शोभा। विभावरी = रात की। यामिनी गन्धा = रजनीगंधा। चकोर कोर = चकोर की टकटकी। मंद उर = मस्त ह्रदय। शिशिर = पतझड़ ऋतु। यौवन उभार = जवानी का बढ़ना।

प्रसंग :– प्रस्तुत पद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक काव्य सुमन में संकलित कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की कविता 'जागो फिर एक बार' में से लिया गया है। कवि भारत की युवा पीढ़ी को संदेश दे रहे हैं।

व्याख्या :– कवि कहते हैं कि सूर्य पश्चिम दिशा में ढल चुका है। रात की चाँद की चाँदनी में रजनीगंधा के फूल खिलकर खुशबू बिखेर रहे हैं। चकोर अनेक प्रकार की आशाओं को लेकर चाँद की तरफ देख रहा है। पतझड़ ऋतु से धरती व्याकुल हो उठी है। अतः खिले हुए फूलों से डालियाँ झुक गई हैं। कलियों के मधुर खुशबू से फिर से येवन खिल आया है। ऐसे खिले हुए परिवेश को देखकर तुम प्रेरणा लो और जागो।

विशेष :– कवि का भाव है कि अब भारत नव चेतना, विद्या के कारण जाग उठे और स्वतंत्रता के लिए आगे बढ़े। कवि ने नई विद्या, वातावरण के बदलने को प्रकृति की सहायता से बताया है। कवि ने तत्सम भाषा तथा मुक्त छ्दों का उपयोग किया है।

4. पिउ–रब पपीहे प्रिय बोल रहे,
सेज पर विरह–विदग्धा वधू
याद कर बीती बातें, रात मन–मिलन की
मूँद रही पलके चारू
नयन–जल ढल गये,
लघुतर का व्यथा–भार–
जागो फिर एक बार!

शब्दार्थ :– पिउ–रव = पपीहे का शोर। विरह–विदग्धा = वियोग की पीड़िता। पलकें = आँखों का उपरी भाग। पारू = पवित्र, सुंदर। लघुतर = कम। व्यथा–भार = दुख का भार।

प्रस्तुत :– प्रस्तुत पद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक काव्य सुमन में संकलित कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की कविता 'जागो फिर एक बार' में से लिया गया है। कवि भारतवासियों को आज़ादी के लिए प्रेरणा दे रहे हैं।

व्याकरण :– कवि संदेश दे रहे हैं कि पपीहे अपनी भाषा में शोर करते हुए गा रहे हैं अर्थात आज़ादी के क्रांतिकारि आज़ादी के लिए प्रेरणा दे रहे हैं और आवाज़ उठा रहे हैं। अपने प्रिय के वियोग से अर्थात अपने आज़ाद मुल्क के लिए प्रिय मिलन की आस को लेकर अपने आँखों का बोझ तुम घटा दो। तुम एक बार जाग जाओ और आज़ादी की तरफ अग्रसर हो जाओ।

विशेष :– कवि भारत की युवा पीढ़ी को संदेश देते हुए जागृत होकर आज़ादी के लिए लड़ने को कह रहे हैं। तत्सम भाषा का उपयोग है तथा मुक्तछंद का उपयोग है।

5. *सहृदय समीर जैसे*
पोंछी प्रिय, नयन–नीर
शयन–शिथिल–बाहें
भर स्वप्लित आवेश में
आतुर उर वसन–मुक्त कर दो,
सब सुप्ति सुखोन्माद हो,
छूट–छूट अलस
फैले जाने दो पीठ पर
कल्पना से कोमल
ऋजु–कुटिल प्रसार–कामी केश–गुच्छ।
तन–मन थक जायँ,
मृदु सुरभि–सी समीर में
बुद्धि–बुद्धि में हो लीन,
मन में मन, जी जी में
एक अनुभव बहता रहे,
अभय आत्माओं में,
कब से मैं रही पुकार–
जागो फिर एक बार।

शब्दार्थ :– सहृदय = संजीदा, दयाल। समीर = हवा। शयन–शिथिल = सुस्त। स्वप्लिन–आवेश = कल्पना का वेग। आतुर = व्याकुल। उर = हृदय। वसन–मुक्त = वस्त्ररहित। सुप्ति = नींद। अलस = आलस। प्रसार = फैलना। केश = बाल। उभय = दोनों।

प्रसंग :– प्रस्तुत पद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक काव्य सुमन में संकलित कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की कविता 'जागो फिर एक बार' में से लिया गया है। कवि भारतवासियों को संदेश दे रहे हैं कि वह सब काम त्यागकर आज़ादी के एक ही लक्ष्य के लिए लड़ें।

व्याख्या :– कवि कहते हैं कि जैसे पवन, पानी सुखा देती है तुम भी अपने आँसू पोंछ डालो और सुस्त उत्साहहीन बाहों जो कि सपनों में रहने के कारण सुस्त हैं। ऊपर से वस्त्र और आलस उठा दो, जिससे आलस उन्माद में बदल जाए और कोमल कल्पनाओं की तरह रहने वाले घुंघराले बालों को खोलकर फैल जाने दो ताकि रोद्र रूप आ जाए।

तन–मन थक जाने दो कार्य से, मेहनत से जिससे बुद्धि में लीन हो, मन में एक ही लक्ष्य का प्रवाह हो। हर भारतवासी में भारत माता पुकार रही है कि तुम सब एक बार जागो और आज़ादी के लिए संघर्ष करो।

विशेष :– कवि भारत के युवाओं को आलस तथा हीन भावना छोड़ने को कहता है। आज़ादी के लिए लड़ने पर आज़ादी मिलेगी, बैठकर कल्पना करने से नहीं। उपमा, अनुप्रास अलंकारों का प्रयोग हुआ है। तत्सम भाषा का उपयोग हुआ है तथा मुक्त छंद का उपयोग हुआ है।

6. ***उगे अरूणाचल में रवि***
आयी भारती–रति कवि–कंठ में,
क्षण–क्षण में परिवर्तित
होते रहे प्रकृति–पट,
गया दिन, आयी रात
गयी, रात, खुला दिन,
एक ही संसार के बीते दिन, पक्ष, मास,
वर्ष कितने ही हज़ार–
जागो फिर एक बार।

शब्दार्थ :– उगे = निकले। अरूणाचल = पूर्व दिशा। आरती–रति = देवी की आरती। पक्ष = जैसे कृष्ण, शुक्ल पक्ष।

प्रसंग :– प्रस्तुत पद्यांश हमारी पाठ्य–पुस्तक काव्य सुमन में संकलित कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला की कविता 'जागो फिर एक बार' में से लिया गया है। कवि भारतवासियों को जागृत होने का संदेश दे रहे हैं।

व्याख्या :– कवि कहते हैं कि सूर्य के पूर्व दिशा में उदय होते ही कवि के कंठ में सरस्वती का वास हो जाता है और वह गाकर यह प्रेरणा देते हैं कि प्रकृति का स्वरूप परिवर्तित होता जा रहा है। दिन–रात में और रात–दिन में परिवर्तित होता जा रहा है। दिन, महीने और साल बीतते जो रहे हैं और ऐसे ही अनेक वर्ष बीत गए हैं और आज़ादी नहीं मिली है। अतः तुम जाग जाओ।

विशेष :– कवि देशवासियों के बुझे हुए मन को जगाने की चेष्टा कर रहे हैं। तत्सम भाषा और मुक्त छंद का उपयोग है। अलंकारों का प्रयोग है– जैसे अनुप्रास, रूपक।

7.4 पठित कविताओं पर आधारित प्रश्न

प्र1) 'भिक्षुक' कविता का सार लिखिए।

उत्तर) इस कविता के माध्यम से कवि ने भिखारी की दुर्दशा को बताया है कि वह किस तरह भूख से बिलख कर इधर–उधर भटक रहे हैं ताकि उन्हें कही से एक आशा की किरण दिखे। भिखारी दुःखी होकर कलेजे के दो टुकड़े करता हुआ, कुपोषण ग्रस्त कमज़ोर होकर लाठी का सहारा लिए भटक रहा है।

वह मुट्ठी भर दाने के लिए अपनी फटी झोली का मुँह खोकर सबके आगे फैला रहा है। वह अकेला नहीं बल्कि उसके दो बच्चे भी हैं। वह भी हाथ फैलाकर भीख मांग रहे हैं। वह बाएँ हाथ से अपने पेट को मलकर इशारा कर रहे हैं कि उन्हें भूख लगी है वहीं दाएँ हाथ से कही से कृपा हो इसका इशारा करते जा रहे हैं। भूख से उनके होंठ सूखते जा रहे हैं। वह मांगते–मांगते थक गए हैं पर विधाता की करनी देखो कि उन्हें कोई भी भीख नहीं देता। वह रोते हैं पर उनकी कोई नहीं सुन रहा। दुर्भाग्यवश वह अपना दुःख दिल में ही दबाए रखते हैं। जब कहीं भोज होता है तो लोगों की झूठी पत्तलों को चाटने लगते हैं तो वहाँ पर भी कुत्ते आ जाते हैं और वह पतलों को छीन कर चाटने लगते हैं। कवि उनकी दुर्दशा देखकर कहते हैं कि वह अब ऐसा और नहीं होने देगा। मैं इन्हें अभिमन्यु की तरह दक्ष बनाकर शिक्षा दूंगा ताकि वह हर परिस्थिति से लड़ सकें।

प्र2) 'भिक्षुक' कविता में कवि भिक्षुकों का दुख कैसे दूर करना चाहता है ?

उत्तर) कवि 'भिक्षुक' कविता में भिखारी की हालत देखकर दुखी हो रहा है। उनकी दशा को देखकर वह कहता है कि इन पर किसी को भी दया नहीं आ रही परन्तु मैं दया के अमृत से तुम्हारे दुखी जीवन को सींच दूंगा और तुम्हारे जीवन से गरीबी को दूर करूंगा।

इतना ही नहीं वह कहता है कि तुम्हें अभिमन्यु जैसा बना दूंगा जिस तरह वह अपनी माँ के गर्भ में ही चक्रव्यूह भेदने की विधि सीख लेता है उसकी तरह मैं भी तुम्हें गरीबी के चक्र से मुक्त करने का प्रयत्न करूंगा।

कवि का कहना है गरीबी का मूल कारण शिक्षा तथा कौशल का अभाव है। वह भिखारी बच्चों को शिक्षा देगा ताकि वह स्वाभिमान की ज़िन्दगी जी सके। इस तरह उनके जीवन से गरीबी समाप्त होगी क्योंकि शिक्षा ही उन्हें इस त्रासदी से मुक्त कर सकती है। इसी के साथ कवि कर्मों पर भी विश्वास करता है। वह कहता है कि अच्छे और सही कर्मों से दुष्कर्मों का कुचक्र तोड़ा जा सकता है।

प्र3) 'जागो फिर एक बार' कविता का सार लिखिए।

उत्तर) यह भारत को संदेश देने वाली कविता मनोविज्ञानिक ढंग से लिखी गई है। इस कविता के माध्यम से कवि संसार को नवजागृत वातावरण से परिचित करवाना चाहता है। कवि का कहना है कि भारतवासी भवरों की तरह सुख में लिप्त होकर अपना मार्ग तो भूल गए हैं साथ ही लक्ष्य भी भूल चुके हैं। वह कहते हैं कि सूर्य के अस्त होने के पश्चात् रात की चाँदनी में रजनी गंधा के फूलों से गंध फैलाकर नवचेतना प्रवाहित कर रही है उसी तरह तुम भी नवचेतना को ग्रहण करके आज़ादी के लिए उठो। भारत वर्षों से गुलाम है। वह पपीहे की तरह पुकार रहा है। भारत के क्रंतिकारी पपीहे जागो और इस गुलामी को तोड़कर आज़ादी के लिए लड़ो। उनका कहना है कि कल्पनाओं से बाहर निकलकर वास्तविक जीवन में जीयो और मन, बुद्धि में एक ही लक्ष्य रखो कि हमें आज़ादी के लिए लड़ना है। तभी हमारा सपना साकार होगा। हर दिन सूर्य उदय और अस्त होता है ऐसा प्रकृति का नियम है और यही चलता आ रहा है। तुम परतंत्र होकर जीए जा रहे हो। अब तुम इस परतंत्रता को तोड़कर भारत को स्वतंत्र कराने के लिए जागृत हो जाओ।

प्र4) कविता 'जागो फिर एक बार' सौंदर्य प्रेम व्यक्त करती है। स्पष्ट कीजिए ।

उत्तर) इस कविता में निराला जी ने प्रकृति का बहुत ही सुंदर वर्णन किया है। अनेकों दृश्यों को उजागर कर उन्होंने कविता के सौंदर्य को बढ़ाया है। जैसे :–

''अरूण पंख तरूण किरण
खड़ी खोलती है द्वार–''

अर्थात् नई किरण पंखों को बिछाकर आ रही है और पंख फैलाकर द्वार खोलती है। इस प्रकार कवि ने लिख है–

आँखें अलियों सी अर्थात् भवरों की तरह काली आँखें या सुंदर आँखें यहाँ अलंकारों का प्रयोग किया है। वह कहना चाहते हैं कि आँखें काम से भरी हैं–

"सोई कमल कोरकों में
बन्द हो रहा गुंजार"

अर्थात् गीतों का आनंद लेते हुए खोने को आनंद लेती हुई आँखें कवि ने अलंकारों के माध्यम से कविता की शोभा बढ़ाई है।

7.5 निष्कर्ष

स्पष्ट है कि निराला जी के काव्य में सामाजिक विषमता के प्रति आक्रोश दिखाई देता है। इनकी कविताएँ जहाँ गरीबी के प्रति सहानुभूति से भरी हुई हैं वहीं भारत की परतन्त्रता के प्रति वे जनता को जागरूक करना अपना परम कर्त्तव्य मानते हैं।

7.6 कठिन शब्द

1. ग्रस्त
2. दुर्दशा
3. कुपोषण
4. परतंत्रता
5. विषमता
6. चेतना
7. त्रासदी

8. कुचक्र

9. सहानुभूति

10. कर्त्तव्य

7.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र1) भिक्षुक पथ पर कैसे आता है?

उत्तर) भिक्षुक पथ पर लाठी के सहारे आता है।

प्र2) भिक्षुक क्यों दुखी है?

उत्तर) भिक्षुक इसलिए दुखी है क्योंकि वह तिरस्कृत है।

प्र3) भिक्षुक के पास क्या है?

उत्तर) भिक्षुक के पास फटी पुरानी झोली है।

प्र4) कवि क्या प्रण करता है?

उत्तर) कवि भिक्षुक का दुख दूर करना चाहता है।

प्र5) 'जागो फिर एक बार' का क्या संदेश है?

उत्तर) जन जागृति का संदेश दिया है।

प्र6) भारतवासियों को किसने घेरा है?

उत्तर) भारतवासियों को निद्रा एवं सुख ने घेरा है।

प्र7) चांदनी रात को क्या महक उठा है?

उत्तर) चांदनी रात को रजनीगंधा महक उठती है।

7.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) 'भिक्षुक' कविता में कवि ने किसकी त्रासदी का वर्णन किया है?

उत्तर) ....

....

....

....

प्र2) 'जागो फिर एक बार' कविता में कवि भारवासियों को क्या संदेश देना चाहता है?

उत्तर) ....

....

....

....

7.9 पठनीय पुस्तकें

1. काव्य सुमन – संपादक महेन्द्र कुलश्रेष्ठ
2. हिन्दी का गद्य–साहित्य – डॉ. रामचन्द्र तिवारी
3. अनन्त – वेद राही

***

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का व्यक्तित्व एवं साहित्यिक विशेषताएँ

8.0 रूपरेखा

8.1 उद्देश्य

8.2 प्रस्तावना

8.3 सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का व्यक्तित्व

8.4 सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की साहित्यिक विशेषताएँ

8.5 निष्कर्ष

8.6 कठिन शब्द

8.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.8 पाठनीय पुस्तकें

8.1 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन उपरान्त आप सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के जीवन पर प्रकाश डालते हुए उनकी साहित्यिक विशेषताओं से रू–ब–रू होंगे।

8.2 प्रस्तावना

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' हिन्दी के युगान्तरकारी कवि हैं तथा छायावादी कवि चतुष्टय में उनका महत्वपूर्ण स्थान है। उनकी कविता में नवजागरण का सन्देश है, प्रगतिशील चेतना है तथा राष्ट्रीयता का स्वर विद्यमान है।इनकी कविताओं में राष्ट्रभक्ति, अन्याय एवं असमानता के प्रति आक्रोश भी देखने को मिलता है।

8.3 सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का व्यक्तित्व

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म 1896 में बंगाल के महिषादल राज्य में हुआ। इनका जन्म मंगलवार हुआ। इनके पिता पंडित रामसहाय त्रिपाठी उन्नाव के रहने वाले थे और महिषादल में सिपाही की नौकरी करते थे। इनकी माता का देहान्त बचपन में ही हो गया था। इनकी शिक्षा बंगाल में हुई। इन्हें बंगला, संस्कृत, अंग्रेज़ी, हिन्दी भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। इनका विवाह मनोहरा से हुआ जो एक कन्या तथा पुत्र को जन्म देकर अधिक देर तक जीवित नहीं रही। पत्नी की मृत्यु पश्चात् निराला को गहरी ठेस पहुंचती है। अपने जीवन के बारे में इन्होंने स्वयं लिखा है– 'दुख ही जीवन की कथा रही'। सन् 1921 में वे महिषादल से अपने गाँव गढ़ाकोला आ गये। पिता का असामयिक देहावसान हो गया। परिवार का बोझ उठाने के लिए इन्हें पुनः महिषादल जाना पड़ा। सन् 1922 में निराला जी 'समन्वय' के संपादक मंडल में सम्मिलित हो गये और रामकृष्ण मिशन के साधुओं के साथ रहने लगे। यहीं पर इन्होंने अद्वैत दर्शन का गहन अध्ययन किया।

इतना ही नहीं महावीर प्रसाद द्विवेदी जी इनके व्यक्तित्व से प्रभावित हुए और उनकी कृपा से निराला जी 'समन्वय' और 'मतवाला' पत्र के सम्पादक बने। 'मतवाला' में ही इनकी पहली कविता 'जुही की कली' छपी। जिसने साहित्य जगत में एक क्रांतिकारी भावना पैदा कर दी। 'मतवाला' का सम्पादन करने के पश्चात् निराला जी लखनऊ चले आए। आर्थिक समस्या के बीच इनकी पुत्री सरोज स्वर्ग सिधार गई, जिससे वह यह दुख सहन न कर पाए और इन्होंने 'सरोज स्मृति' नामक प्रसिद्ध कविता लिखी जो हिन्दी का अब तक का सर्वश्रेष्ठ शोकगीत माना जाता है।

इनकी पहली रचना के नाम और लेखन–तिथि के बारे में विद्वानों में मतभेद है। स्वयं निराला 'जुही की कली' को अपने प्रथम रचना मानते हैं जो 1916 में लिखी गई थी। रामविलास शर्मा 'भारत माता की वन्दना' (1920) को उनकी पहली प्रकाशित रचना मानते हैं, किन्तु महत्वपूर्ण यह है कि निराला के उस कवि–कर्म को रेखांकित किया गया है जिसमें काव्य–परंपरा से भिन्न एक नयी परंपरा और नये काव्य–कौशल की नींव पड़ती है जो आज भी कविता का प्रेरणस्त्रोत बना हुआ है।

इनके वैयक्तिक जीवन की करुणात्मकता, दयालुता की घटना भी विशिष्ट रूप से उल्लेखनीय है। एक बार वह उपवन में शाल को ओढ़े हुए भ्रमण कर रहे थे। सर्दी से बुरी तरह से ठिठुरते हुए एक भिखारी को देख दया भाव से उन्होंने अपनी शाल ही उसे दे दी। अन्य भिखारी ने इस घटना से प्रेरित व प्रभावित होकर आशाओं को संजोकर उनके पास भवन में पहुंच गए तो निराला ने भवन में प्रयुक्त पर्दों के कपड़ों को ही दे डाला। श्रीमती महादेवी वर्मा के

द्वारा इस कृत्य के बारे में पूछे जाने पर निराला जी ने उत्तर दिया, ''इस दुनिया में मुझसे भी बढ़कर दरिद्र भरे पड़े हैं। मुझ से उनकी करुण अवस्था और दुख नहीं देखे जा सकते हैं।''

निराला जी अभावग्रस्त जीवन और मानव की दयनीय स्थिति को देखकर छायावादी एवं रहस्यवादी कवि 'निराला' जी प्रगतिवादी रचनाएँ लिखने लगे।

15 अक्तूबर सन् 1961 ई. को इनका निधन हो गया।

रचनाएँ (क) खण्ड काव्य – तुलसीदास (1939)

(ख) मुक्त काव्य – अनामिका (1923), परिमल (1930), गीतिका (1936), कुक्करमुत्ता (1942), अणिमा (1943), बेला (1946), नये पत्ते (1946), अर्चना (1950), आराधना (1953), गीत–गुंज (1954), अपरा आदि।

कहानी संग्रह :– लिली (1934), सखी (1935), सुकुल की बीबी (1941) तथा चातुरी चमार (1945), देवी (1948)

उपन्यास :– अप्सरा (1931), अलका (1933), प्रभावती (1936), निरुपमा (1936), उच्शृंखला, चोटी की पकड़ (1946), काले कारनामे (1950) अपूर्ण तथा चमेली (अपूर्ण), इन्दुलेखा (अपूर्ण)।

रेखाचित्र :– कुल्ली भाट, बिल्लेसुर तथा बकरिहा।

आलोचना और निबन्ध :– प्रबन्ध–पद्य, प्रबन्ध–प्रतिभा, प्रबन्ध–परिचय, रविन्द्र।

कविता :– कानन, चाबुक तथा पन्त और पल्लव।

जीवनी साहित्य :– राणा प्रताप, प्रहलाद, ध्रुव, शकुन्तला तथा भीष्म।

अनुवाद :– महाभारत, श्रीरामकृष्ण, वचनामृत, देवी चौधरानी, स्वामी विवेकानन्द के भाषण, विवेकानन्द जी के संग में, आनन्दमठ, चन्द्रशेखर, कृष्णकाँत का वसीयतनामा, दुर्गेषनन्दिनी, रजनीगंधा, राधा–रानी, तुलसीदास द्वारा रचि 'रामचरितमानस की टीका', वात्स्यान कृत 'कामसूत्र' हिन्दी बांगला शिक्षा, 'गोविन्द पदावली' आदि।

8.4 सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की साहित्यिक विशेषताएँ

साहित्य के सम्बन्ध में 'निराला' जी ने कहा है, ''साहित्य दायरे से छूटकर ही साहित्य है, साहित्य वह है जो साथ है, साहित्य लोक से– सीमा से– प्रान्त से– देश से– विश्व से ऊँचा उठा हुआ है, इसलिए वह लोकोत्तरान्त

दे सकता है। लोकोत्तर का अर्थ है 'लोक' जो कुछ देख पड़ता है, उससे और दूर तक पहुँचा हुआ। ऐसा साहित्य मनुष्यमात्र का साहित्य है, भावों से, केवल भाषा का एक देशगत आवरण उस पर रहता है।" निराला जी इसीलिए साहित्यकार को राजनीतिज्ञ, धर्मशास्त्री या समाज सुधारक से बहुत ऊँचा मानते हैं।

1. **प्रकृति प्रेम :–** निराला जी ने प्रकृति प्रेम का सुंदर वर्णन अपने साहित्य में किया है। मुख्य रूप से काव्य में प्रकृति और छायावाद की भावना मुखरित है। प्रकृति सौन्दर्य में कवि ने मानवीय भावों की सुन्दर अभिव्यक्ति की है। प्रकृति की सौन्दर्यमयी शक्ति को इन्होंने सजीव सत्ता रखने वाली नारी के रूप में देखा है। इनके छायावाद और रहस्यवाद में आत्मा की अनुभूति का पूर्ण प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है। इनका छायावाद सरल और सरस भाव को पुष्ट करता है। प्रकृति में मानवता का आरोप करते हुए कवि लिखता है–

दिवसावसान का समय,
मेघमय आसमान से उतर रही,
वह संध्या सुन्दर परी सी,
धीरे! धीरे! धीरे!

2. **देश–प्रेम की भावना :–** निराला जी की रचनाओं में देश–प्रेम की भावना तथा मानव के प्रति संवेदना भी देखने को मिलती है। भारत की परतन्त्रता के प्रति वह जनता को जागरूक करना अपना परम कर्तव्य मानते हैं। उनकी रचनाओं में राष्ट्रीय भावना कूट–कूट के भरी है। 'जागो फिर एक बार' कविता में उन्होंने भारतीय वीरोंको अंग्रेज़ रूपी गीदड़ों का सफाया कर देने का आह्वान इन शब्दों में किया है–

शेरों की मांद में आया है आज स्यार
जागो फिर एक बार।
तुम हो महान तुम सदा ही महान
है नश्वर यह दीन भाव
पदरज भर भी है नहीं पूरा विश्वभार
जागो फिर एक बार

छायावादी – युगीन कवियों ने भी मानवता राष्ट्रप्रेम और न्याय पर अधिक बल दिया है। निराला का मानवीय दृष्टिकोण और सामाजिक चेतना का स्वर प्रौढ़ जान पड़ता है। प्रेम मानव के जीवन को अमर बनाने वाला तत्व है। इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए कवि कहते हैं–

दिव्य देहधारी ही कहते हैं इसमें प्रिय,
पीते हैं प्रेमामृत अमर होते हैं।

3. **बौद्धिकता की प्रधानता :–** इनके काव्य में प्रखर बौद्धिकता और विचारों की स्पष्टता है। सम्पूर्ण काव्य में भावुकता की अपेक्षा बौद्धिकता को अधिक महत्व दिया है क्योंकि उनमें एक ऐसी शब्द शक्ति है जो मानव के हृदय में विचारणीय भाव छोड़ती है। कवि की अति बौद्धिकता, कौशलता तथा क्रांतिकारी विचारों के कारण ही काव्य में एक नयी चेतना भरी है। इसका मुख्यतः स्थायी भाव उत्साह है।

4. **अतीत के प्रति प्रेम :–** निराला जी की कविता में अतीत के प्रति प्रेम बड़ी गहराई से हुआ है। उनका विश्वास है कि अतीत का गान गाने से अतीत लौट सकता है। अतीत गौरव का गान करते हुए उन्होंने जिस राष्ट्रीयता को विकसित किया वह उनकी भारती जय विजय करे, मातृवन्दना, जागो फिर एक बार, छत्रपति शिवाजी का पत्र जैसी कविताओं में मुखरित हुई है। 'मातृवन्दना' नामक कविता में वह स्पष्ट घोषण करते हैं कि हे माता तुझे मुक्त करने के लिए मैं तेरे चरणों पर अपने प्राण न्योछावर कर दूंगा–

क्लेदयुक्त अपना तन दूंगा।
मुक्त करूंगा तुझे अटल।
तेरे चरणों पर देकर बलि,
सकल श्रेय श्रम संचित फल।।

अतीत के प्रति प्रेम के लिए उनकी कविताएं 'यमुना', 'पंचवटी प्रसंग' और 'राम की शक्ति पूजा' उल्लेखनीय हैं। इन कविताओं में कवि ने प्राचीन वैभव और गौरव का विस्तृत वर्णन किया है। 'यमुना' से वह दुःखी होकर पूछता है–

बता कहाँ अब वह बंशीवट?
कहाँ गए नटनागर श्याम।
चल चरणों का व्याकुल पनघट,
कहाँ अब वह वृन्दाधाम?

निराला जी की कविताएँ हिन्दी का गौरव हैं।

5. **विद्रोह की भावना :–** निराला जी की रचनाओं में विद्रोह की भावना भी देखने को मिलती है। अन्याय, अत्याचार एवं असमानता के विरुद्ध वह जीवन भर संघर्ष करते रहे। मानव की पीड़ा ने उनके संवेदनशील हृदय को करुणा प्लावित कर दिया है। उच्च वर्ग की विलासिता एवं निम्न वर्ग की दीनता को देखकर वह अपने हृदय में गहन वेदना, टीस एवं छटपटाहट का अनुभव करते थे। 'बादल राग' कविता के माध्यम से कवि बादल से यह अनुरोध करता है कि वह विश्व के धनिक वर्ग पर अपने प्रचण्ड व्रज घोष से आतंक स्थापित करे और विप्लवकारी गर्जना करे। कृषकों के प्रति भी कवि को सहानुभूति है। बादलों का आवाहन करता हुआ वह कहता है कि हे वीर बादलो! तुम भारत के इन दीन–हीन किसानों की पुकार को सुनकर यहां विप्लव मचाने के लिए अवश्य पधारो। कवि की इन क्रांतिकारी भावना से यह बोध होता है कि कविवर निराला सामाजिक विषमता को दूर करके सामाजिक समता स्थापित करना चाहते थे। पूंजीपतियों को वह आइना दिखाकर कहते हैं कि तुम्हारी यह 'रंगों आब' चमक–दमक गरीबों के शोषण परआधारित है। ऐसे पूंजीपतियों को वह प्रतीकात्मक शैलों में फटकारते हुए कहते हैं–

'अबे सुन बे गुलाब।
भूल मत, जो पाई खुशबू रंगों आब।
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट,
डाल पर इतरा रहा कैपेटलिस्ट।'

निराला की रचनाओं में विद्रोह का स्वर स्पष्ट रूप से झलकता है।

6. **उपेक्षित के प्रति सहानुभूति :–** निराला जी की कविताओं में उपेक्षितों के लिए विशेष सहानुभूति है। 'भिक्षुक', 'वह तोड़ती पत्थर' जैसी कविताएं गरीबों के प्रति सहानुभूति से भरी हैं। उस मजदूरनी की दीन दृष्टि में जो पीड़ा है उसकी अभिव्यक्ति इन पंक्तियों में सहज रूप से हुई है–

'देखते देखा मुझे तो एक बार
उस भवन की ओर देखा छिन्न तार
देख कर कोई नहीं
देखा मुझे उस दृष्टि से जो मार खा रोई नहीं
सजा सहज सितारा।

इनकी 'भिक्षुक' कविता में एक असहाय भिक्षुक की दयनीय दशा का मार्मिक चित्रण है। इस कविता में भिक्षुक को शोचनीय दशा, समाज द्वारा उनका तिरस्कार और निरादर का वर्णन करते हुए कवि का मन करुणा से भर जाता है–

'वह आता–
दो टूक कलेजे के करता पछताता पथ
पर आता।
पेट पीठ दोनों मिलकर हैं एक
चल रहा है लकुटिया टेक।'

'भिक्षुक' कविता में त्रस्त भिखारी की ऐसी स्थिति को देखकर कवि उन्हें इस दुखदायी जीवन से बाहर निकालना चाहते हैं। उनका मानना है यदि इन्हें शिक्षा उपलब्ध करवाई जाए तो वह ऐसे त्रस्त जीवन से मुक्त हो सकेंगे। कवि की पूरी संवेदना उस भिक्षुक के साथ है।

7. **मानवतावादी दृष्टिकोण :–** निराला जी के काव्य में मानवतावादी दृष्टिकोण भी देखने को मिलता है। छायावादी युग की कविताओं में प्रकृति सौन्दर्य के साथ–साथ मानवीय विकास पर भी चर्चा हुई है। निराला की कविताओं में सामान्य जन–मानस के दुख–सुख, शोषित के प्रति सहानुभूति, नारी के प्रति संवेदना और सामाजिक समस्यओं के प्रति एक आत्मीय सोच है। भारतीय समाज में 'विधवा' की स्थिति कितनी दयनीय है, इसकी अभिव्यक्ति उन्होंने अपनी 'विधवा' शीर्षक कविता में की है–

वह इष्टदेव के मन्दिर की पूजा–सी

वह दीप शिखा–सी शान्त भाव में लीन

वह क्रूर काल ताण्डव की स्मृति रेखा–सी

वह टूटे तरु की छुटी लता–सी हीन

दलित भारत की ही विधवा है।

भारत की विधवा नारी अपने आधार तरु से अलग पड़ी सुकुमार लता के समान दीन–हीन एवं दयनीय होती है।

8. **कलापक्ष में विद्रोह :–** कलापक्ष में निराला जी का विद्रोह सबसे अधिक प्रकट हुआ है। इसके लिए उन्होंने हिन्दी में सबसे पहले मुक्तक छंद का प्रयोग कर 'जूही की कली' नामक कविता लिखी। इतना ही नहीं इन्होंने मुक्त छन्द के अनेक प्रयोग किए हैं। 'जुही की कली' में प्रयुक्त मुक्त छन्द, जागो फिर एक बार, बादल राग, शेफालिका, बेला, कुकुरमुत्ता में प्रयुक्त मुक्त छन्द से भिन्न हैं। हिन्दी काव्य में 'मुक्त छन्द' को सफलतापूर्वक काव्य मेंअपनाने वाले कवि निराला जी ही हैं। उन्होंने छन्द के बन्धन से कविता को मुक्त करके उसे पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान कर दी। वहमानते हैं कि 'मुक्त छन्द' की कविता को पढ़ने का ढंग ही एक कला है। वे लय, गति, मात्रा, तुक की कविता का अनिवार्य तत्व नहीं मानते बस उसमें एक प्रवाह होना आवश्यक समझते हैं। 'प्रेयसी' नामक कविता की ये पंक्तियां इस कथन की पुष्टि हेतु उद्धृत हैं–

घेर अंग–अंग को
लहरी तरंग वह प्रथम तारुण्य की,
ज्योतिर्मय लता–सी हुई मैं तत्काल
घेर निज तरु तन।
खिले नव पुष्प जग प्रथम सुगन्ध के
प्रथम बसन्त में गुच्छ–गुच्छ।

निराला ने कविता को छन्द के बन्धन से मुक्त कर स्वच्छन्द वायु में सांस लेने का अवसर दिया। कालान्तर में 'नई कविता' ने तो मुक्त छन्द को ही अपनाया।

9. **कविता में संगीत की विशेषता** :– छन्दों की क्रांति में संगीत ने निराला की बड़ी सहायता की है, गीतिकार के गीतों में इसके उदाहरण मिल जाते हैं जैसे–

मौन रही हार
प्रिय पथ पर चलती सब कहते शृंगार
कण–कण का कंकण मृदु किण–किण रवकिंकिणी
रणन–रणन नूपुर उर लाज और रेकिनी
और मुखर पायल स्वर करें बार–बार
प्रिय पथ पर चलती सब कहते शृंगार।

इसमें कंकण, किंकिणी, नूपुर और पायल के स्वर को व्यक्त करने वाले शब्दों को लेकर भाव व्यक्त किए गए हैं।

10. **भाषा :–** भाषा के ऊपर निराला जी का पूर्ण अधिकार है। इनकी कविताओं में नई उपमाएं हैं, नई कल्पनाएं हैं और नए भाव हैं। निराला जी खड़ी बोली में रचना करते हैं जो नवनिर्मित शब्दों द्वारा सजीवता से भरी होती है। उनमें कहीं–कहीं तो इतना प्रवाह और इतनी कारीगरी है कि उर्दू के अच्छे–अच्छे शायरों से वह टक्कर ले सकते हैं, जैसे 'बेला' में–

'जमाने की रफ्तार में कैसा तूफाँ
मरे जा रहे हैं जिये जा रहे हैं।'

8.5 निष्कर्ष

'निराला' जी एक ऐसे समाज का निर्माण करना चाहते हैं जो शोषण मुक्त हो, जहां अन्याय एवं अत्याचार के लिए कोई स्थान न हो। वह समता, स्वतन्त्रता, न्याय के समर्थक थे और सामाजिक विषमता को हर स्तर पर समप्त

करना चाहते थे। निर्विवाद रूप से यह माना जा सकता है कि निराला ने युग चेतना के अनुरूप ही अपनी सामाजिक–सांस्कृति दृष्टि विकसित की है।

8.6 कठिन शब्द

1. शोषण
2. लोकोत्तरानन्द
3. परतन्त्रता
4. प्रौढ़
5. प्लावित
6. आवाहन
7. पूंजीपतियों
8. त्रस्त
9. शोचनीय
10. निर्विवाद

8.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के जीवन परिचय पर प्रकाश डालें।

उत्तर) ....

....

....

....

प्र2) सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालें।

उत्तर) ....

....

....

....

8.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिन्दी का गद्य–साहित्य – डॉ. रामचन्द्र तिवारी
2. अनन्त – वेद राही
3. हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ – डॉ. शिव कुमार शर्मा,
4. छायावाद – नामवर सिंह

***

मुक्तिबोध की कविता की सप्रसंग व्याख्याएँ तथा पठित कविता पर आधारित प्रश्न

9.0 रुपरेखा

9.1 उद्देश्य

9.2 प्रस्तावना

9.3 मुक्तिबोध की कविता की सप्रसंग व्याख्याएँ

9.4 पठित कविता पर आधारित प्रश्न

9.5 कठिन शब्द

9.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

9.7 पठनीय पुस्तकें

9.1 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययनोपरान्त आप मुक्तिबोध की कविता के अर्थ को समझ सकेंगे, जिससे इस कविता की व्याख्या करने में आपको कोई कठिनाई नहीं होगी। पाठ्यक्रम में निर्धारित मुक्तिबोध की कविता पर किस प्रकार के प्रश्न आपसे पूछे जा सकते हैं इसकी जानकारी भी आपको प्राप्त होगी।

9.2 प्रस्तावना

ज्ञान और संवेदना के संश्लिष्ट स्तर से युगीन प्रभावों को ग्रहण करके प्रौढ़ मानसिक प्रतिक्रियाओं के कारण मुक्तिबोध की कविताएँ विशेष सशक्त हैं। उन्होंने अधिकतर लंबी नाटकीय कविताएँ लिखी हैं जिनमें समसामयिक समाज, उनमें पलने वाले अंतर्द्वंद्वों और इन अंतर्द्वंदों से उत्पन्न भय, संत्रास, आक्रोश, विद्रोह और दुर्दम्य संघर्ष भावना के विविध रूप चित्रित हैं। उनकी कविताओं में संपूर्ण परिवेश के बीच अपने आपको खोजने और पाने को हीनहीं अपितु

अपने आपको बदलने की प्रक्रिया का चित्रण भी मिलता है। इस स्तर पर मुक्तिबोध की कविता आधुनिक जागरूक व्यक्ति के आत्मसंघर्ष की कविता है। उनकी कविताएँ अपने युग और परिवेश की हर सांस, हर धड़कन और हर संदर्भ को उनकी पूर्णता से जीती रहीं हैं।

9.3 मुक्तिबोध की कविता 'जन–जन का चेहरा एक' की सप्रसंग व्याख्या

1) *चाहे जिस देश, प्रान्त पुर का हो*
जन–जन का चेहरा एक !
एशिया की, यूरोप की, अमरीका की
गलियों की धूप एक।
कष्ट–दुख संताप की,
चेहरों पर पड़ी हुई झुर्रियों का रूप एक !
जोश में यों ताकत से बंधी हुई
मुट्ठियों का एक लक्ष्य!

शब्दार्थ :– पुर – गाँव, संताप – पीड़ा

प्रसंग :– प्रस्तुत पद्यांश मुक्तिबोध द्वारा रचित कविता शीर्षक 'जन–जन का चेहरा एक' से लिया गया है। इसके हित शिल्पकार आधुनिक हिन्दी की नई शैली के प्रतिनिधि कवि गजानन माधव मुक्तिबोध हैं। यह कविता कवि की दूर दृष्टि एवं सृजनशीलता की परिचायक है।

संदर्भ :– इसमें कवि मुक्तिबोध ने विश्व के विभिन्न देशों में एकरूपता एवं समानता दर्शायी है।

व्याख्या :– कवि कहते हैं कि कोई व्यक्ति किसी भी देश या प्रान्त का निवासी हो– उसकी मातृभूमि एशिया, यूरोप, अमेरिका अथवा कोई अन्य महादेश हो। उसकी भाषा, संस्कृति एवं जीवन–शैली भिन्न हो सकती है या होती है किन्तु उन सभी के चेहरों में कोई अन्तर नहीं रहता अर्थात् सबमें समानता पाई जाती है। कहने का आशय यह है कि एशिया, यूरोप, अमेरिका आदि विभिन्न महादेशों में भारत की गौरवशाली तथा बहुरंगी परम्परा की धूम है, सर्वत्र भारतवर्ष (हिन्दोस्तान), की सराहना है।

पूरे विश्व के हर क्षेत्र– 'राजपथ हो या गलियाँ' सूर्य अपनी रश्मियाँ समान रूप से उन सभी स्थानों पर बिखेर रहा है। उनके कष्टों, अभावों तथा यातनाओं से पीड़ित उन समस्त देशों के प्राणियों के चेहरों पर विषाद की रेखाएँ जो

झुर्रियों के रूप में हैं, वे एक समान हैं। अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अपने कर्तव्य पालन हेतु जोश में उनकी मुट्ठियाँ एक ही समान बँधी हुई हैं। अर्थात यह अपने उद्देश्य की प्राप्ति हेतु दृढ़ संकल्प की परिचायक है। कवि का कहना है कि भारत विश्वबन्धुत्व, मानवता, सौहार्द, करूणा, सच्चरित्रता आदि मानवोचित गुणों तथा संस्कारों का प्रेणता है। अतः सम्पूर्ण विश्व के निवासी आशा तथा दृढ़ विश्वास के साथ इसकी ओर निहार रहे हैं।

विशेष :–

1. इसमें कवि की विश्वबन्धुत्व के प्रति संवेदनशीलता की स्पष्ट झलक मिलती है।
2. उपरोक्त पंक्तियों में कवि की भावुकता मुखरित हुई है।

2) *पृथ्वी के गोल चारों ओर के धरातल पर*
है जनता का दल एक, एक पक्ष।
जलता हुआ लाल कि भयानक सितारा एक
उद्दीपित उसका विकराल–सा इशारा एक।

शब्दार्थ :– उद्दीपित– प्रकाशित, विकराल– भंयकर, वेदना–दर्द, अकुलाती– बेचैनी।

प्रसंग :– पूर्ववत्।

संदर्भ :– इसमें कवि का कहना है कि जो जनता अपने अधिकारों के प्रति प्रयत्नशील है उसे आशा की मनोहारी किरणें स्वर्ण के आनन्द के समान दृष्टिगोचर होती हैं।

व्याख्या :– विद्वान कवि मुक्तिबोध कहते हैं कि सूर्य की लालिमा तथा प्रकाश की किरणें सब पर समान रूप से बिखेरते हुए एक संकेत देती हैं। उसका यह संकेत अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कवि के कहने का भाव यह है कि पृथ्वी पर निवास करने वाले विश्व के समस्त प्राणी समान हैं, उनकी भावनाएँ समान हैं तथा उनकी समस्याएँ भी समान हैं, उद्दीप्त सूर्य का लाल प्रकाश भी इस ओर संकेत कर रहा है।

विशेष :– इसमें कवि ने विश्व के समस्त प्राणियों को एक समान माना है।

3) *गंगा में, इरावती में, मिनाम में*
अपार अकुलाती हुई,

नील नदी, आमेजन, मिसौरी में वेदना से गाती हुई,
बहती–बहती हुई जिन्दगी की धारा एक;
प्यार का इशारा एक, क्रोध का दुधारा एक।

प्रसंग :– पूर्ववत्।

संदर्भ :– लोकप्रिय कवि मुक्तिबोध ने इसमें नदियों के तट पर निवास करने वाले जन–समुदाय की एक सदृश जीवन धारा का वर्णन किया है।

व्याख्या :– कवि कहते हैं कि गंगा, इरावती, मिनाम, नील, आमेजन, मिसौरी आदि नदियाँ विशाल जलराशि के साथ निरन्तर प्रवाहित हो रही हैं। उनमें वेला है, शक्ति है तथा अपनी जीवनधारा के प्रति छटपटाहट है। प्यार एवंक्रोध का अपूर्व संगम है। उनके प्रवाह की वेगवती धारा में जीवन का वेदनापूर्ण संगीत है। वे निरंतर एक सारगर्भित संदेश प्रदान कर रही हैं।

कवि के कहने का अभिप्राय यह है कि विभिन्न देशों में प्रवाहित होने वाली नदियों में समानता है, उनके जल में कोई मौलिक अंतर नहीं है। उनके वेग, प्रकृति एवं प्रवृत्ति में भी एकरूपता है। मानव जीवन को उनसे एक अभिनव संदेश प्राप्त होता है। उनका निरंतर प्रवाह मानव को अपने कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ने की सतत् प्रेरणा और जीवन को संयमित होने का संकेत देता है। प्यार एवं क्रोध की सहज अभिव्यक्ति का संदेश भी इन नदियों द्वारा मिलताहै। अर्थात् दोनों प्रवृत्तियाँ स्वाभाविक रूप से प्रत्येक व्यक्ति में अन्तर्निहित हैं। मानव जीवन पर इनका गहरा प्रभाव पड़ता है।

विशेष :– कवि ने नदियों के समान ही समस्त विश्व के जन–समुदाय की जीवन धारा को भी एक समान माना है।

4) *पृथ्वी का प्रसार*
अपनी सेनाओं से किए हुए गिरफ्तार,
गहरी काली छायाएं पसारकर,
खड़े हुए शत्रु का काले से पहाड़ पर
काला–काला दुर्ग एक,
जन शोषक शत्रु एक।
आशामयी लाल–लाल किरणों से अंधकार

चीरता का मित्र का स्वर्ग एक;

जन–जन का मित्र एक।

शब्दार्थ :– पसारकर– फैलाकर, दुर्ग – किला।

प्रसंग :– पूर्ववत्।

संदर्भ :– कवि मुक्तिबोध ने इसमें विश्व में व्याप्त अराजकता, अनैतिकता तथा दमन का सशक्त चित्रण प्रस्तुत किया है।

व्याख्या :– यशस्वी कवि मुक्तिबोध का कहना है कि इस संसार में दुर्जन लोग अनेक प्रकार के अनाचार कर रहे हैं। काली–काली छाया के समान सम्पूर्ण पृथ्वी पर इनका प्रसार हो रहा है। यह जनशोषक मानवता के शत्रु हैं,इन्होंने अमानवीय कार्यों तथा शोषण का किला खड़ा कर दिया है अर्थात् धरती के ऊपर दूर–दूर तक अपना पैर पसार रहे हैं लेकिन आशा की लाल किरणें भी इस अन्धकार को चीरकर प्रकट हो रही हैं। प्रकृति की दृष्टि से सब बराबर हैं। वह सबकी मित्र है।

इन पंक्तियों में कवि के कहने का भाव यह है कि पृथ्वी पर शक्तिशाली लोग अनैतिक कार्यों में लिप्त हैं तथा उनके द्वारा दमन तथा आतंक की काली छाया फैल गई है। किन्तु आशा की प्रकाशवान किरणें नई प्रेरणा प्रदान कर रही हैं।

विशेष :– कवि ने सबके कल्याण की कामना की है। सम्पूर्ण विश्व को कवि सुखी एवं सम्पन्न देखना चाहता है।

5) *विराट प्रकाश एक, क्रान्ति की ज्वाला एक,*
धड़कते वक्षों में है सत्य की उजाला एक,
लाख–लाख पैरों की मोच में है वेदना का तार एक
हिये में हिम्मत का सितारा एक।
चाहे जिस देश, प्रान्त, पुर का हो
जन–जन का चेहरा एक।

शब्दार्थ :– विराट– बहुत बड़ा, वक्ष–सीना

प्रसंग :– पूर्ववत।

संदर्भ :– यहाँ कवि ने विश्व के जन–जन की पीड़ा, शोषण तथ समस्याओं का चित्रण किया है।

व्याख्या :– कवि कहते हैं कि प्रकाश का रूप एक है। वह सभी जगह एक प्रकार की ही क्षमता रखता है। क्रान्ति से उत्पन्न ऊर्जा एवं शक्ति का रूप भी सर्वत्र एक समान होता है। प्रत्येक व्यक्ति के हृदय की धड़कन भी एक समान होती है। हृदय के अन्तःस्थल में सत्य का प्रकाश भी सब में एक ही प्रकार का रहा है। विश्व भर के लाखों व्यक्तियों के पैरों में एक ही प्रकार की सोच अनुभव की जा रही है। उनमें परस्पर वेदना की अनुभूति में भी कोई अंतर नहीं है। सबका हृदय पूर्ण रूपेण साहस से एक समान ओत–प्रोत है। व्यक्ति का देश, प्रान्त या नगर भिन्न होने से इसमेंकोई अन्तर नहीं पड़ता। इसका कारण है कि सबका चेहरा एक समान है। वस्तुतः कवि ने इन पंक्तियों में वैश्वीकरण की भावना को विश्व में अभिव्यक्त करते हुए कहा है कि विश्व में ज्ञान एवं चेतना की ज्योति में एकरूपता है तथावह संसार के कण–कण को अपने तीव्र प्रकाश से प्रकाशित कर रही है। उसके द्वारा प्रस्फुटित क्रान्ति की ज्वाला अर्थात् प्रेरणा भी सर्वव्यापी तथा एक समान है। सत्य का उज्ज्वल प्रकाश प्रत्येक व्यक्ति के हृदय की धड़कन बन गया है। अर्थात् सदाचरण की भावना जन–जन के हृदय में व्याप्त है। थकावट तथा वेदना से प्राप्त सबके हृदय में साहस एक समान है क्योंकि नगर, प्रान्त तथा देश भिन्न होते हुए भी प्रत्येक व्यक्ति का चेहरा एक जैसा है।

विशेष :– इसमें कवि द्वारा ''वसुधैव–कुटुम्बकम'' के उच्चादर्श से अवगत कराया गया है।

6) *एशिया के, यूरोप के, अमेरिका के*
भिन्न–भिन्न वास–स्थान;
भौगोलिक, ऐतिहासिक बन्धनों के बावजूद,
सभी ओर हिन्दुस्तान, सभी ओर हिन्दुस्तान।
सभी ओर बहनें हैं, सभी ओर भाई हैं।
सभी ओर कन्हैया ने गायें चरायी हैं।
जिन्दगी की मस्ती का अकुलाता भोर एक
बंसी की धुन सभी ओर एक।

प्रसंग :– पूर्ववत्

सन्दर्भ :– इस कविता में कवि ने अपनी अभूतपूर्व काव्य–रचना का परिचय देते हुए अपनी भारत–भूमि के गौरवशाली अतीत का वर्णन किया है।

व्याख्या :– प्रस्तुत पंक्तियों में कवि कह रहे हैं कि भिन्न–भिन्न संस्कृतियों वाले एशिया, यूरोप तथा अमेरिका जैसे महादेश अपनी भौगोलिक तथा ऐतिहासिक विशिष्टताओं के बावजूद भारतवर्ष की जीवन–शैली से प्रभावित हैं। भारत की संस्कृति में भगवान कृष्ण की छवि अंकित है। प्रत्येक स्थान पर भाइयों तथा बहनों का सा प्रेम–भाव है। कृष्ण ने सभी स्थान पर कभी गायें चराई थीं। सभी ओर वह बंसी की धुन एक समान सुनाई देती है। जीवन की उमंग से भरपूर यह वातावरण है।

कवि के कहने का आशय यह है कि संसार के विभिन्न क्षेत्र अपने भौगोलिक तथा ऐतिहासिक बंधनों में बंधे होते हुए भी भारत की संस्कृति से प्रभावित है। भारत प्राचीन काल से ही विश्व का पथ–प्रदर्शन करतारहा है। भारत की महान परम्परा रही है। यहाँ सभी के साथ भाई–बहन जैसी स्नेह की धारा बहायी गयी है। आज भी कृष्ण के गाय–चराने की स्मृति ताजी है।

विशेष :– इसमें कवि ने विश्वबन्धुत्व की भावना से सम्पूर्ण विश्व को प्रभावित किया है।

7) *दानव दुरात्मा एक,*
मानव की आत्मा एक
शोषक और खूनी और चोर एक
जन–जन के शीर्ष पर,
शोषण का खड्ग अति घोर एक।
दुनिया के हिस्सों में चारों ओर
जन–जन का युद्ध एक।

शब्दार्थ :– खड्ग–तलवार।

प्रसंगः– पूर्ववत्।

संदर्भः– कवि ने इन पंक्तियों में संसार की दारूण एवं अराजक स्थिति का चित्रण किया है।

व्याख्या :– इन पंक्तियों में कवि अपनी संवेदना व्यक्त करते हुए कहते हैं कि आज पूरे विश्व में दानव और दुरात्मा एकजुट हो गए हैं। दोनों एक ही हैं। सम्पूर्ण मानवता की आत्मा एक है। शोषण करने वाले खूनी तथा चोर भी एक हैं। प्रत्येक व्यक्ति के लिए चलने वाली खतरनाक तलवार भी एक प्रकार की है। संसार के सम्पूर्ण क्षेत्र से चारों ओर प्रत्येक व्यक्ति द्वारा छेड़ा गया युद्ध भी एक ही शैली में है।

कवि के कहने का अभिप्राय यह है कि सभी स्थान पर दानव और दुरात्मा आतंक मचाए हैं– दोनों में कोई अंतर नहीं है। जन–समुदाय का शोषण, हत्या तथा चोरी करने वाले भी समान रूप से अपने कार्यों में लिप्त हैं। शोषण की क्रूर तलवार भी एक समान है अर्थात् समान रूप से हर व्यक्ति के सिर पर नाच रही है। सम्पूर्ण विश्व में युद्ध का वातावरण है तथा हर व्यक्ति एक प्रकार से ही युद्ध में लिप्त है किन्तु कवि अनुभव करता है कि दुरात्मा, पुण्यात्मा, सज्जन एवं दुर्जन, सभी की आत्मा एक समान है, पवित्र एवं दोष रहित है।

विशेष :– इसमें कवि ने दानव ओर दुरात्मा प्रवृत्ति के लोगों को समान माना है।

8) *मस्तक की महिमा*
व अन्तर की उष्मा
से उठती है ज्वाला अति कुद्ध एक।
संग्राम का घोष एक,
जीवन–संतोष एक।
क्रांन्ति का, निर्माण का, विजय का सेहरा एक,
चाहे जिस देश, प्रान्त, पुर का हो।
जन–जन का चेहरा एक!

शब्दार्थ :– उष्मा– गर्मी, सेहरा – ताज।

प्रसंग:– पूर्ववत्।

संदर्भ :– इसमें कवि मुक्तिाबोध ने संसार की वर्तमान स्थिति तथा उसमें वास करने वाले लोगों की मानसिकता का वर्णन किया है।

व्याख्या :– इन पंक्तियों में कवि की मान्यता है कि सभी के मस्तिष्क का समान महत्व है। हृदय के अन्दर से उठने वाली अत्यन्त तीव्र ज्वाला की प्रखरता भी एक समान होती है। युद्ध की घोषणा भी एक प्रकार की होती है। इसी प्रकार

जीवन में संतोष की भावना में भी एकरूपता रहती है। क्रान्ति निर्माण तथा विजय – सेहरा का भी रूप एक है। संसार के किसी भी नगर, प्रान्त तथा देश के निवासियों का चेहरा भी एक समान है।

इस प्रकार कवि इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि संसार में अनेकों प्रकार के अत्याचार तथा शोषण समान रूप से अनवरत जारी हैं। उसी प्रकार जनहित के अच्छे कार्य भी समान रूप से हो रहे हैं। किन्तु सभी की आत्मा एक है। सबके अन्दर हृदय एक समान है। इसलिए कवि कहता है– ''संग्राम का घोष एक, जीवन संतोष एक।'' अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति संघर्षरत है– वह चाहे निर्माण कार्य के लिए हो अथवा विनाश के लिए। क्रान्ति का आह्वान प्रत्येक मनुष्य के अन्दर विदयमान रहता है। निर्माण में भी उसकी भूमिका होती है। अपने कार्यों के लिए समान रूप से अनेक मस्तक पर विजय का सेहरा बँधता है। प्रत्येक व्यक्ति वह चाहे जिस नगर, प्रान्त तथा देश अर्थात् क्षेत्र का हो, उसका चेहरा एक है। कवि को ऐसी आशा है कि अन्ततः मानवता की दानवता पर विजय होगी। वह इस दिशा में आश्वस्त दिखता है। कवि सारे विश्व के व्यक्तियों को समान रूप से देखता है।

विशेष :– कवि का मानना है कि देश–काल की विभिन्नता रहते हुए भी सबकी मानसिकता, बाहरी आचरण एक प्रकार का है।

9.4 पठित कविता पर आधारित प्रश्न

प्र1) 'जन–जन का चेहरा एक' से कवि का क्या तात्पर्य है?

उ) 'जन–जन का चेहरा एक' कविता अपने में एक विशिष्ट एवं व्यापक अर्थ समेटे हुए है। कवि पीड़ित संघर्षशील जनता की एकरूपता तथा समान चिन्तशील का वर्णन कर रहा है। कवि की संवेदना, विश्व के तमाम देशों में संघर्षरत जनता के प्रति मुखरित हो गई है, जो अपने मानवोचित अधिकारों के लिए कार्यरत हैं। एशिया, यूरोप, अमेरिका अथवा किसी भी अन्य महादेश या प्रदेश में निवास करने वाले समस्त प्राणियों के शोषणतथा उत्पीड़न के प्रतिकार का स्वरूप एक जैसा है। उनमें एक अदृश्य एवं अप्रत्यक्ष एकता है। उनकी भाषा, संस्कृति एवं जीवन शैली भिन्न हो सकती है, किन्तु उन सभी के चेहरों में कोई अन्तर नहीं दिखता, अर्थात् उनके चेहरे पर हर्ष एवं विषाद, आशा तथा निराशा की प्रतिक्रिया, एक जैसी होती है। समस्याओं से जूझने (संघर्ष करने) का स्वरूप एवं पद्धति भी समान है।

प्र2) कवि के अनुसार बंधी हुई मुट्ठियों का क्या लक्ष्य है ?

उ) विश्व के तमाम देशों में संघर्षरत जनता की संकल्पशीलता ने उसकी मुट्ठियों को जोश में बाँध दिया है। कवि ऐसा अनुभव कर रहा है मानो समस्त जनता अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण ऊर्जा से लबरेज़ अपनी मुट्ठियों द्वारा संघर्षरत है। प्रायः देखा जाता है कि जब कोई व्यक्ति क्रोध की मनोदशा में रहता है, अथवा किसी कार्य को सम्पादित करने की दृढ़ता तथा प्रतिबद्धता का भाव जागृत होता है तो उसकी मुट्ठियाँ बँध जाती हैं। उसकी भुजाओं में नवीन स्फूर्ति का संचार होता है। यहाँ पर ''बँधी हुई मुट्ठियों' का तात्पर्य कार्य के प्रति दृढ़ संकल्पनाशीलता तथा अधीरता (बेताबी) से है।

प्र3) कवि ने सितारे को भयानक क्यों कहा है ? सितारे का इशारा किस ओर है ?

उ) कवि ने अपने विचार को प्रकट करने के लिए काफी हद तक प्रकृति का भी सहारा लिया है। कवि विश्व के जन–जन की पीड़ा, शोषण तथा अन्य समस्याओं का वर्णन करने के क्रम में अनेक दृष्टान्तों का सहारा लेता है। इस क्रम में वह आकाश में भयानक सितारे की ओर इशारा करता है। वह सितारा जलता हुआ है और उसका रंग लाल है। प्रायः कोई वस्तु आग की ज्वाला में जलकर लाल हो जाती है। लाल रंग हिंसा, खून तथा प्रतिशोध का परिचायक है। इसके साथ ही यह उत्पीड़न, दमन, अशांति एवं निरंकुश पाशविकता की ओर भी संकेत करता है।

''जलता हुआ लाल कि भयानक सितारा एक
उद्दीपित उसका विकराल–सा इशारा एक।''

उपरोक्त पंक्तियों में एक लाल तथा भयंकर सितारे द्वारा विकराल–सा इशारा करने की कवि की कल्पना है। आकाश में एक लाल रंग का सितारा प्रायः दृष्टिगोचर होता है, ''मंगल''। संभवतः कवि का संकेत उसी ओर हो क्योंकि उस तारे की प्रकृति भी गर्म है। कवि ने जलता हुआ भयानक, सितारा जो लाल है– इस अभिव्यक्ति द्वारा सांकेतिक भाषा में उत्पीड़न, दमन एवं निरंकुश शोषकों द्वारा जन–जन के कष्टों का वर्णन किया है। इस प्रकार कवि विश्व की वर्तमान विकराल दानवी प्रकृति से संवेदनशील हो गया प्रतीत होता है

प्र4) नदियों की वेदना का क्या कारण है?

उ) नदियों की वेगावती धारा में जिन्दगी की धारा का बहाव, कवि के अन्तःमन की वेदना को प्रतिबिम्बित करता है। कवि को उनके कल–कल करते प्रवाह में वेदना की अनुभूति होती है। गंगा, इरावती, नील, आमेजन नदियों की धारा मानव–मन की वेदना को प्रकट करती है, जो अपने मानवीय अधिकारों के लिए संघर्षरत है। जनता को पीड़ा तथा संघर्ष को जनता से जोड़ते हुए बहती हुई नदियों में वेदना के गीत कवि को सुनाई पड़ते हैं।

प्र5) 'दानव दुरात्मा' से क्या अर्थ है?

उ) पूरे विश्व की स्थिति अत्यन्त भयावह, दारुण तथा अराजक हो गई है। दानव और दुरात्मा का अर्थ है– जो अमानवीय कृत्यों में संलग्न रहते हैं, जिनका आचरण पाशविक होता है उन्हें दानव कहा जाता है। जो दुष्ट प्रकृति के होते हैं तथा दुराचारी प्रवृति के होते हैं उन्हें 'दुरात्मा' कहते हैं। वस्तुतः दोनों में कोई भेद नहीं है, एक ही सिक्के के दो पहलू होते हैं। ये सर्वत्र पाए जाते हैं।

प्र6) समूची दुनिया में जन–जन का युद्ध क्यों चल रहा है?

उ) सम्पूर्ण विश्व में जन–जन का युद्ध जन–मुक्ति के लिए चल रहा है। शोषक, खूनी चोर और अन्य अराजक तत्वों द्वारा सर्वत्र व्याप्त असन्तोष तथा आक्रोश की परिणति जन–जन के युद्ध अर्थात् जनता द्वारा छेड़े गए संघर्ष के रूप में हो रही है।

प्र7) कविता का केन्द्रीय विषय क्या है?

उ) कविता का केन्द्रीय विषय पीड़ित और संघर्षशील जनता है। वह शोषण, उत्पीड़न तथा अनाचार के विरुद्ध संघर्षरत है। अपने मानवोचित अधिकारों तथा दमन की दानवी क्रूरता के विरुद्ध यह उसके युद्ध का उद्घोष है। यह किसी एक देश की जनता नहीं है, दुनिया के तमाम देशों में संघर्षरत जन–समूह है जो अपने संघर्षपूर्ण प्रयास से न्याय, शान्ति, सुरक्षा, बन्धुत्व आदि की दिशा में प्रयासरत है। सम्पूर्ण विश्व की इस जनता में अपूर्व एकता तथा एकरूपता है।

9.5 कठिन शब्द

1. संश्लिष्ट
2. अंतर्द्वंद्व
3. दुर्दम्य
4. आत्मसंघर्ष
5. मानवोचित
6. सारगर्भित
7. दुर्जन
8. विषाद
9. लबरेज़
10. प्रतिबद्धता

9.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) "जन–जन का चेहरा एक" से कवि का क्या तात्पर्य है?

उ॰) ....

....

. ...

....

प्र2) कवि के अनुसार बंधी हुई मुट्ठियों का क्या लक्ष्य है?

उ॰) ....

....

....

....

प्र3) कवि ने सितारे को भयानक क्यों कहा है? सितारे का इशारा किस ओर है?

उ•) ....

....

....

....

प्र4) नदियों की वेदना का क्या कारण है?

उ•) ....

....

....

....

प्र5) 'दानव दुरात्मा' का क्या अर्थ है?

उ•) ....

....

....

....

प्र6) समूची दुनिया में जन–जन का युद्ध क्यों चल रहा है?

उ•) ....

....

....

....

प्र7) कविता का केन्द्रीय विषय क्या है ?

उ•) ....

....

....

....

9.7 पठनीय पुस्तकें

1. काव्य सुमन –सं. महेन्द्र कुलश्रेष्ठ
2. मुक्तिबोध विचार और कविता – डॉ. देवेन्द्र
3. मुक्तिबोध काव्य सौष्ठव – शंकर वसंत मुद्‌गल

***

मुक्तिबोध का व्यक्तित्व और साहित्यिक विशेषताएँ

10.0 रूपरेखा

10.1 उद्देश्य

10.2 प्रस्तावना

10.3 मुक्तिबोध का व्यक्तित्व और साहित्यिक विशेषताएँ

10.4 सारांश

10.5 कठिन शब्द

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.7 पठनीय पुस्तकें

10.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययनोपरान्त आप–

– मुक्तिबोध के जीवन का ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे।

– मुक्तिबोध के काव्य की विशेषताओं से अवगत होंगे।

10.2 प्रस्तावना

तारसप्तक के कवि गजानन माधव 'मुक्तिबोध' अध्यापक, पत्रकार, कवि, कथाकार और समीक्षक भी थे। इनके काव्य में संघर्ष, घुटन, टूटन, और खालीपन का चित्रण है।

10.3 मुक्तिबोध का व्यक्तित्व और साहित्यिक विशेषताएँ

व्यक्तित्व :–

नवलेखन के प्रमुख हस्ताक्षर और बहुमुखी प्रतिभा के धनी गजानन माधव 'मुक्तिबोध' का जन्म 3 नवंबर 1917 में मध्यप्रदेश के ग्वालियर जिले के श्यौंपुर नामक गाँव में हुआ। ये ऋग्वेदी कुलकर्णी ब्राह्मण थे और इनके किसी पूर्वज ने 'मुग्धबोध' या 'मुक्तिबोध' नाम का कोई आध्यात्मिक ग्रन्थ सम्भवतः खिलजी काल में लिखा था। कालान्तर में इसी पर वंश का नाम चलने लगा। इस पूरे नाम में कवि का शुद्ध और वास्तविक नाम 'गजानन' है और 'माधव मुक्तिबोध' इनके पिता का नाम था जो परम्परा से जुड़ा हुआ है। मुक्तिबोध के पिता माधवराय ग्वालियर रियासत के पुलिस विभाग में थे। वे कर्तव्यनिष्ठ और ईमानदार व्यक्ति थे। पिता के व्यक्तित्व के प्रभाव–स्वरूप मुक्तिबोध में ईमानदारी, न्यायप्रियता और दृढ़ इच्छा–शक्ति का प्रतिफलन हुआ। इनकी माता पार्वतीबाई हिन्दी क्षेत्र ईसागढ़ (बुंदेलखंड शिवपुरी) के एक समृद्ध किसान परिवार की कन्या थी। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा उज्जैन में हुई। पिताजी की इच्छा थी कि वे वकील बनें और समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त करें।

सन् 1930 में मुक्तिबोध ग्वालियर बोर्ड की मिडल परीक्षा में बैठे। फिर मैट्रिकूलेशन में सफल होकर 1935 में माधव कॉलेज में ही इंटरमीडिएट की परीक्षा प्राप्त की। इसके पश्चात् इन्होंने इंदौर के होल्कर कॉलेज से 1938 में बी. ए. की परीक्षा द्वितीय श्रेणी में पास की। पिता इन्सपेक्टरी से रिटायर हो चुके थे। घर में गरीबी थी। अतः उन्हें उज्जैन के मॉडर्न स्कूल में अध्यापकी करनी पड़ी। सामाजिक रूढ़ियों के विरोधी होने के कारण उन्होंने प्रेम–विवाह किया। इनकी पत्नी का नाम माधवी राय था जो अक्सर बीमार रहती थीं। प्रभागचन्द्र शर्मा और वीरेन्द्रकुमार जैन इनके अनन्य मित्र थे।

1940 में कवि मुक्तिबोध की नियुक्ति शारदा शिक्षा सदन शुजालपुर में हुई। नवजागरण के आदर्शों से प्रभावित होने पर भी इनका झुकाव भौतिकवाद की ओर था। सन् 1941 में नेमिचन्द्र जैन के सम्पर्क में आने पर मुक्तिबोध मार्क्सवाद से प्रभावित हुए। यूरोप के महान् उपन्यासकार वालजाक, दास्तायवस्की, फ्लाबेयर और गोर्की इनके प्रिय उपन्यासकार थे। 1942 के आन्दोलन के बाद शुजालपुर का ''शारदा शिक्षा सदन'' बन्द हो गया। मुक्तिबोध उज्जैन चले आये जहाँ उन्होंने मध्यभारत प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना की। 1944 में इन्दौर में फॉसिस्ट–विरोधी लेखक कान्फ्रेंस का आयोजन किया जिसकी अध्यक्षता राहुल सांकृत्यायन ने की थी।

मुक्तिबोध जी ने एक लेख 'मेरी माँ ने मुझे प्रेमचन्द का भक्त बनाया' के माध्यम से स्वीकार किया है कि माँ ने उन्हें मानववादी साहित्य की ओर प्रवृत्त किया। यही कारण था कि मुक्तिबोध ने मज़दूरों से वास्तविक सम्पर्क स्थापित किया। कष्ट में पड़े हुए और पीड़ित साथियों की सहायता करने में वे आकाश–पाताल एक कर देते थे। 1945 में त्रिलोचन शास्त्री के साथ वाराणसी में 'हंस' का सम्पादन किया। वहाँ से कलकत्ता गए। योग्य काम न मिलने पर 1946–47 में जबलपुर वापस आए और हितकारिनी हाईस्कूल में अध्यापकी कर ली। उस समय साम्प्रदायिक दंगे ज़ोरों से शुरू हो गये थे और मुक्तिबोध दैनिक 'जय हिन्दी' समाचार–पत्र में आंशिक रूप से काम करने लगे। रात की ड्यूटी देकर कर्फ्यू के सन्नाटे में वह घर लौटते। 1954 में एम.ए. करने के बाद राजनांद गाँव के दिग्विजय कॉलेज में इन्हें अध्यपन का काम मिल गया। इससे उनके जीवन में आर्थिक निश्चिंतता आई। 'ब्रह्मराक्षस', 'औरांग उर्टाग' और 'अंधेरे में' कविताएँ इसी काल की रचनाएँ हैं।

उज्जैन में मुक्तिबोध ने मध्यभारत प्रगतिशील लेखक संघ की बुनियाद डाली। इसकी विशिष्ट मीटिंग में भाग लेने के लिए वे बाहर से डॉ. रामविलास, अमृतराय आदि साहित्यिक विचारकों को बुलाते थे। जबलपुर से मुक्तिबोध 'नागपुर' गये। यहाँ इन्होंने अपनी कुछ सर्वश्रेष्ठ कविताएँ लिखीं। अपने जीवन का सबसे अधिक दारिद्रय और दैन्य का कष्ट भी उन्होंने यहाँ भोगा। नागपुर में उन दिनों कृष्णानन्द 'सोख्ता' एक सनसनीख़ेज़ साप्ताहिक 'नया ख़ून' निकालते थे। मुक्तिबोध उसी में कुछ कॉलम लिखने लगे। यह पत्र बड़ी निर्भीकता से मज़दूरों का पक्ष लेते थे और भ्रष्ट तत्वों का पर्दाफाश करते थे। इसमें मुक्तिबोध ने कई जोरदार स्केच लिखे। इसी काल में उनकी 'कामायनी : एक पुनर्मूल्यांकन' महत्वपूर्ण आलोचनात्मक कृति प्रकाशित हुई।

'एक लेखक की डायरी' भी जबलपुर की 'बसुधा' में धारावाहिक रूप से निकलती रही। नागपुर में एम्प्रेस मिल के मजदूरों पर गोली चली तो रिपोर्टर की हैसियत से वे घटना स्थल पर मौजूद थे। इस घटना से प्रभावित होकर इन्होंने 'अंधेरे में' शीर्षक सशक्त और मार्मिक कविता लिखी। मुक्तिबोध का सारा समय साधारण एवं श्रमशील लोगों के बीच और पत्रकारिता तथा राजनीतिक, साहित्यिक बहसों में बीतता था।

प्रभाकर माचवे ने एक जगह मुक्तिबोध के बारे में कहा है कि उनका स्वभाव कुछ ऐसा था कि उन्हें काँटेदार रास्ते ही पसंद थे। इसमें सच्चाई इतनी है कि एक सीमा के बाद समझौता नहीं कर सकते थे जिसमें परिस्थिति बिगड़ जाती थी और उनका मार्ग कंटकाकीर्ण हो जाता था। इसके चलते उन्हें कई नौकरियाँ छोड़नी पड़ी। 1953 में आकाशवाणी नागपुर में इनकी नियुक्ति हुई। 1956 में जब भाषा के आधार पर राज्यों का पुनर्गठन होने लगा तो मुक्तिबोध का तबादला

आकाशवाणी भोपाल कर दिया गया। 27 अक्तूबर 1956 में आकाशवाणी की नौकरी करते हुए उन्होंने तीन–चार दिन बाद महीने की अंतिम तारीख को इस्तीफा दे दिया।

राजनाँद गाँव मुक्तिबोध का अध्यापन क्षेत्र ही नहीं, अध्ययन क्षेत्र भी था। यहाँ रहते हुए उन्होंने अंग्रेज़ी,फ्रेंच तथा रूसी उपन्यासों के साथ जासूसी उपन्यासों, वैज्ञानिक उपन्यासों, विभिन्न देशों के इतिहास तथा विज्ञान–विषयक साहित्य का गहन अध्ययन किया। इस अध्ययन के फलस्वरूप 1962 में उनकी रचना 'भारत इतिहास और संस्कृति' प्रकाशित हुई। इसके प्रकाशित होते ही तत्कालीन मध्यप्रदेश सरकार उनसे चौकन्नी हो गई और मुक्तिबोध के भीतर तक चोट पहुँचाई। इससे उनके हृदय पर ऐसा गहरा असर हुआ कि अकस्मात् 17 फरवरी 1964 में पक्षाघात ने इन्हें धर दबोचा। लगभग आठ महीने मृत्यु से जूझने के पश्चात् 11 सितम्बर 1964 को मूर्छा में ही रात के समय उनका देहांत हो गया। मुक्तिबोध के जीवन को देखते हुए यह बात बड़ी आसानी से कही जा सकती है कि उनका व्यक्तित्व सदैव उन्मुक्त रहा। घोर श्रमरत होते हुए भी वे निर्द्वन्द्व रहे।

<u>साहित्यिक विशेषताएँ</u> :–

मुक्तिबोध का कवि–व्यक्तित्व जटिल है। ज्ञान और संवेदना के संश्लिष्ट स्तर से युगीन प्रभावों को ग्रहण करके प्रौढ़ मानसिक प्रतिक्रियाओं के कारण उनकी कविताएँ विशेष सशक्त हैं। उन्होंने अधिकतर लंबी नाटकीय कविताएँ लिखी हैं जिनमें समसामयिक समाज, उनमें पलने वाले अंतर्द्वंद्वों और इन अंतर्द्वंदों से उत्पन्न भय, संत्रास, आक्रोश,विद्रोह और दुर्दम्य संघर्ष भावना के विविध रूप चित्रित हैं। उनकी कविताओं में संपूर्ण परिवेश के बीच अपने आपको खोजने और पाने को ही नहीं अपितु अपने आपको बदलने की प्रक्रिया का चित्रण भी मिलता है। इस स्तर पर मुक्तिबोध की कविता आधुनिक जागरूक व्यक्ति के आत्मसंघर्ष की कविता है। उनकी कविताएँ अपने युग और परिवेश की हर सांस, हर धड़कन और हर संदर्भ को उनकी पूर्णता से जीती रहीं। मुक्तिबोध हिन्दी साहित्य के प्रमुख कवि, आलोचक, निबंधकार, कहानीकार तथा उपन्यासकार थे। उन्हें प्रगतिशील कविता और नयी कविता के बीच का एक सेतु भी माना जाता है। उनके साहित्य की अनेक विशेषताएँ उभरकर सामने आती हैं जिनका विवरण निम्नलिखित है–

1) **व्यक्तिपरकता** :– मुक्तिबोध की प्रारम्भिक कविताओं में व्यक्तिपरकता देखने को मिलती है। इनकी व्यक्तिवादिता सामाजिकता की ओर बढ़ने का प्रस्थान बिंदु है। वे एक सांस में व्यक्तिवादिता का आभास देते हैं और दूसरे ही पल समाजोन्मुख हो जाते हैं। इनकी कविताओं में खूलेपन, भटकन, कुहासा के बिंब आए हैं, किन्तु ये सब चित्र

आत्मान्वेषण की प्रक्रिया को पूर्ण बनाने के लिए हैं। वे शक्ति को संकीर्ण परिस्थितियों से निकालने कोआतुर प्रतीत होते हैं। इस संबंध में मुक्तिबोध कहते हैं–

याद रखो
कभी अकेले में मुक्ति नहीं मिलती
यदि वह है तो सब के साथ ही।

2) **समसामयिक परिवेश** :– मुक्तिबोध का काव्य सामाजिक जीवन की सटीक व्याख्या है। उन्होंने अपने युग मानव की पीड़ा, उसकी कमजोरियों और विडंबनाओं को देखा भी था और भोगा भी था। इसलिए उनका क्व्य युग से संघर्ष करते हुए जन–जन के अन्तःकरण और भौतिक एवं मनोवैज्ञानिक द्वंद्व को प्रतिरूपित करता है। वे जन–जीवन को सुखी और खुशहाल देखना चाहते थे। समाज की संस्कृति और परिवेश सजगता के कारण डॉ. रमेश कुंतल मेघ ने उन्हें लोक जीवन का जासूस कहा है–

हाँ वहाँ एक गाँव दहक उठा
गरीबों का गाँव एक बिना ठाँव
खतरनाक लूट पाट, आग डकैतियाँ
चंबल की घाटियाँ।

3) **वर्गहीन समाज का स्वप्न** :– मुक्तिबोध एक वर्गहीन और शोषण रहित समाज की स्थापना के लिए लालायित थे। वे जानते थे कि मानवीय समाज, संस्कृति और जीवनदृष्टि को स्वस्थ जीवन मूल्यों से जोड़ना अनिवार्य है। इसके लिए व्यक्ति को आत्मसाक्षात्कार की गलियों से गुजरना पड़ेगा, अपने 'स्व' का संशोधन–परिशोधन करना पड़ेगा, तभी वर्गहीन और शोषणहीन स्वस्थ समाज का ढाँचा खड़ा हो सकेगा। उन्होंने सुविधा भोगी और अवसरवादियों को इसके लिए बाधा माना है जो पूंजीपति मनोवृत्ति को लेकर जीना चाहते हैं। मुक्तिबोध के अनुसार–

वर्तमान समाज में चल नहीं सकता
पूंजी से जुड़ा हुआ ह्रदय बदल नहीं सकता
स्वतंत्र्य व्यक्ति का वादी
छल नहीं सकता मुक्ति के मन को जन को।

4) **शोषकों के प्रति घृणा** :– मुक्तिबोध जीवन मूल्यों की स्वस्थ परम्परा के कवि थे। वे शोषण और अत्याचार की चक्की में पिसते जन–जीवन के प्रति सहानुभूतिशील थे। उन्होंने ऐसी अवस्था का विरोध किया जो दूसरों के खून पर जी रही हो। यह प्रक्रिया 'तार सप्तक' की पूंजीवादी समाज के प्रति कविता से आरम्भ होती है। कवि ने पूंजीपतियों की मनोवृत्तियों को देखकर स्पष्ट भाषा में कहा है–

छोड़ो हाथ, केवल घृणा और दुर्गंध

तेरी रेशमी वह शब्द संस्कृति अंध

देती क्रोध मुझको खूब जलता क्रोध

तेरे रक्त में भी सत्य का अवरोध

तेरे रक्त से भी घृणा आती तीव्र

तुझको देख मिलती उमड़ आती शीघ्र

'नाश देवता' कविता में यदि मुक्तिबोध पूंजीपतियों को मिटाने की बात करते हैं तो नयी जमीन पर नये जन समाज को प्रतिष्ठित करने के आकांक्षी भी हैं। उनका लगाव साधारण से इतना अधिक है कि वे 'मैं तुम लोगों से दूर हूँ' कविता में लिखते हैं–

मैं तुम लोगों से दूर हूँ

तुम्हारी प्रेरणाओं से मेरी प्रेरणा इतनी भिन्न है

कि जो तुम्हारे लिए विष है, मेरे लिए अन्न है।

5) **शोषितों के प्रति संवेदना** :– कवि मुक्तिबोध सर्वहारा मजदूर वर्ग का अभिषेक सहानुभूति और करूण जल से करते हैं, और इसे ऊँचा भी उठाना चाहते हैं। आर्थिक शोषण से उसे मुक्त करना चाहते हैं। इसी दृष्टिकोण के कारण मुक्तिबोध के काव्य में शोषित मानवों के और उनके जीवन के प्रति सहानुभूति, शिशुओं के प्रति वत्सल दृष्टि, पूंजीपतियों की हवस का शिकार बनी नारी के प्रति स्नेहिल एवं सजल दृष्टि मिलती है। उन्होंने शोषक वृति और उसका शिकार बने समाज के प्रति अपनी संवेदना भी अर्पित की है। 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' कविता में जहाँ श्रमिक वर्ग के शोषण स्थान कारखाने का वातावरण चित्र अंकित किया है वहीं हरिजन गलियों और पुलों के नीचे रहते गंदे नालों के सहारे पड़े

रहने वाले मानवों की बस्ती का संदर्भ भी पूरी सहानुभूति के साथ चित्रित किया है। 'एक भूतपूर्व विद्रोही का आत्मकथन' कविता में नौकरशाही व्यवस्था के माध्यम से शोषित संयुक्त परिवार की एक तस्वीर देखी जा सकती है। जैसे–

अजीब संयुक्त परिवार है
औरतें व नौकर और मेहनतकश
अपने ही वक्ष को
खुरदरा वृक्षधर
मानकर घिसती हैं, घिसते हैं
अपनी ही छाती पर जबर्दस्ती
विष–दंती भावों का सर्प–मुख
वद्रोही भावों का नाग–मुख
रक्तप्लुत होता है।

यही कारण है कि मुक्तिबोध ने अपने काव्य में शोषित, दलित वर्ग के प्रति करूणा और सहानुभूति भी अर्पित की है और उन्हीं के माध्यम से श्रम, कर्तव्य, आस्था और जिजीविषा का मूल मंत्र भी दिया है।

6) **वर्ग–संघर्ष और क्रांति चेतना** :– जन साधारण के हितेच्छु और कट्टर हिमायती मुक्तिबोध ने अपनी अनेक कविताओं में शोषित वर्ग और क्रांतिचेतना को व्यापकवाणी दी है। उनकी कई कविताओं में शोषित वर्गकी संघर्ष प्रियता और क्रांति प्रियता अभिव्यक्त हुई है। 'लकड़ी का बना रावण', 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', 'ओ काव्यात्मन फणिधर', 'चकमक की चिगारियाँ', 'शून्य' और 'चंबल की घाटी में' जैसी महत्वपूर्ण कविताओं में मुक्तिबोध की क्रान्ति चेतना कहीं प्रत्यक्ष और कहीं सांकेतिक शैली में चित्रित होती है। 'चंबल की घाटी' कविता में अंतिम बंद तक पहुँचते–पहुँचतेकवि ने अपेक्षित वर्ग संघर्ष के स्वरूप को निम्न पंक्तियों में स्पष्ट किया है–

अपने ही दर्रों के
लुटेरे इलाकों में जोरदार
आज जो गिरोह है,
छुपे हुए, खुले हुए, उनके
भयानक हमलों से पीड़ित
जन साधारण को उनकी ही टोह है।

'लकड़ी का बना रावण' कविता में एक ऐसे अहंग्रस्ति व्यक्ति का विश्लेषण है जो निस्सार और खोखलेपन का धनी होकर भी अपने को सर्व–तंत्र–स्वतंत्र समझता है। किन्तु जनशक्ति के सामने स्वयं को असहाय और विवश महसूस करता हुआ कहता है–

हाय, हाय

अग्रसर हो रहा चेहरों का समुदाय

और कहीं भाग नहीं पाता मैं

हिल नहीं पाता हूँ

मैं मंत्र–कीलित–सा भूमि–में गड़ा–सा

जब खड़ा हूँ

अब गिरा, तब गिरा

7) **छद्म आधुनिकता और असंगतियाँ :–** वर्तमान समाज में आधुनिकता के दौर से गुज़र रहा है, वह छद्म आधुनिकता का सैलाव मात्र है। मुक्तिबोध इस बात से काफी चुभन महसूस करते थे कि वर्तमान समाज स्वार्थ, आडंबर, अवसरवादिता और कृत्रिमता की बैसाखियों के सहारे जी रहा है। 'भूल गलती', 'अंधेरे में' जैसी कविताओं से प्रभावित होता है कि आज भी ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो आधुनिकता का कवच पहनकर अपने को जन संघर्ष से अलग रखते हैं और समाजव्यापी भीषण गरीबी, भूख, दमन, अन्याय से अपना दामन छुड़ाकर अपने–अपने दायरों में कैद हो गये हैं।

8) **आत्मान्वेषण, आत्मसाक्षात्कार और व्यक्तित्वांतरण :–** मुक्तिबोध काव्य की एक महत्वपूर्ण विशेषता आत्मन्वेषण एवं साक्षात्कार की प्रवृत्ति से जुड़ा रहना है। उनका समग्र काव्य आत्मसाक्षात्कार के संदर्भों को प्रस्तुत करता हुआ व्यक्तित्व के परिष्कार से सम्बन्धित है। मुक्तिबोध का आत्मान्वेषी चरित्र जो उन्हें आत्मसाक्षात्कार के सोपानों तक ले जाता है उनकी प्रायः लम्बी कविता में दिखाई देता है। 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' काव्य संकलन की 'मेरे सहचर मित्र', 'चकमक की चिनगारियाँ', 'अंधेरे में' और 'चंबल की घाटियाँ', 'ब्रह्मराक्षस' आदि कविताओं में आत्मान्वेष्ण के क्षणों में कवि अपनी ओर की भी बेबस जिंदगी को देखता है। कवि अन्वेषक की भांति सोचता है–

जहां सूखे बादलों की कंटीली पांत

भरती है हृदय में धुंध डूबा दुःख

भूखे बालकों के श्याम चेहरों के साथ

मैं भी घूमता है शुष्क।

'ब्रह्मराक्षस' कविता में भी शक्ति की भूमिका पर आत्मसंघर्ष की प्रस्तुति हुई है। ब्रह्मराक्षस व्यक्ति की प्रबुद्ध चेतना का प्रतीक है। यह ऐसी चेतना है जो अपने ज्ञान की पूर्णता के गर्व से मुक्त है तभी तो वह पारम्परिक ज्ञान के निष्कर्षों को नयी व्यवस्था देने का दम भरता है और विविध विचारों की मान्यताओं की व्याख्या में अपनेको निष्णात समझता है, आत्मसंघर्ष में फंस जाता है–

खूब ऊँचा एक जीना साँवला

उसकी अंधेरी सीढ़ियां

वे एक अभ्यंकर निराले लोक की

एक चढ़ना और उतरना

पुनः चढ़ना और लुढ़कना

मोच पैरों में

व छाती पर अनेकों घाव

इसलिए मुक्तिबोध का काव्य आत्मन्वेषण, आत्म परिष्कार से गुजरता हुआ अंततः व्यक्तित्वांरण में जाकर सिमट गया है।

9) **आस्था और जिजीविषा** :– अधूरी और सतही जिंदगी के गर्म रास्तों पर चलते हुए मुक्तिबोध ने प्रायः पैरों के तलवों को काटती आग को, कंधों को दबोचती बोझिल स्थितियों को, मानसिक यातना भोगती जिंदगीको जाना, जिया और भोगा। यही कारण है कि उनके पास एक आस्था, एक जिजीविषा और एक भविष्यधर्मी दृष्टि हमेशा विद्यमान रही। इसी दृष्टि और आस्था के बल पर वे लिखते हैं–

कोशिश करो

कोशिश करो

जीने की

जमीन में गड़कर भी

10) **भाषा और शिल्प** :– मुक्तिबोध हिन्दी साहित्य के ऐसे कवि हैं जिन्होंने छायावाद से काव्य रचनाएं आरम्भ की और प्रगतिवाद, प्रयोगवाद व नई कविता की युगधाराओं से जुड़ते हुए काव्य में ऐसी काव्य भाषा और शिल्प का प्रयोग किया है जो आगामी रचनाकारों के लिए बहुत बड़ा प्रेरणा स्रोत बनीं। मुक्तछन्द की सटीक व कठिन किन्तु सहजग्राह्य भाषा के लिए उन्हें कबीर तथा निराला परम्परा को अग्रसर करने वाला काव्य प्रेरक माना जाता है । मुक्तिबोध के काव्य की भाषा और शिल्प की पहचान उनके अनूठे प्रतीक, बिम्ब, अलंकार, प्रचूर शब्द का विविधतापूर्ण प्रयोग, मुहावरे–लोकोक्तियों के प्रयोग तथा छन्द विधान के सार्थक प्रयोग के फैंटेसी के रूप में हिन्दीसाहित्य में अपनी विशिष्ट पहचान अंकित करती है।

10.4 सारांश

निष्कर्ष रूप से हम कह सकते हैं कि मुक्तिबोध का काव्य अनेक विशेषताओं से भरा हुआ है। उनका काव्य आधुनिक समय के आतंकित करनेवाले सत्य से हमारा साक्षात्कार करता है। विशाल अनुभव का भंडार लिए एवं परिवेश के साथ गहरे रूप से जुड़कर ही कवि मुक्तिबोध ने अपने काव्य का निर्माण किया है। जनवादी काव्य की विशेषताएँ भी प्रभावी रूप से अंकित हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मुक्तिबोध का काव्य पाठक पर गंभीर घाव अंकित करता है। शक्ति और उत्साह से युक्त उनका काव्य हिन्दी कविता में वैशिष्ट्यपूर्ण रचनाधर्मिता के कारण आज भी प्रसंगिक है।

10.5 कठिन शब्द

1. आंशिक
2. दारिद्रय
3. निर्भीकता
4. कंटकाकीर्ण

5. पुनर्गठन
6. निर्द्वन्द्व
7. संश्लिष्ट
8. आत्मान्वेषण
9. जिजीविषा
10. आत्मपरिष्कार

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) मुक्तिबोध के व्यक्तित्व पर चर्चा करें।

उत्तर) ....

....

....

....

प्र2) मुक्तिबोध की साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालें।

उत्तर) ....

....

....

....

10.7 पठनीय पुस्तकें

1. काव्य सुमन– सं. महेन्द्र कुलश्रेष्ठ
2. मुक्तिबोध विचार और कविता – डॉ. देवेन्द्र
3. मुक्तिबोध काव्य सौष्ठव – शंकर वसंत मुद्‌गल

***

अनामिका की कविता की सप्रसंग व्याख्याएँ तथा पठित कविता पर आधारित प्रश्न

11.0 रूपरेखा

11.1 उद्देश्य

11.2 प्रस्तावना

11.3 अनामिका की कविता की सप्रसंग व्याख्याएँ

11.4 पठित कविता पर आधारित प्रश्न

11.5 कठिन शब्द

11.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.7 पठनीय पुस्तकें

1.1 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययनोपरान्त आप अनामिका की कविता के अर्थ को समझ सकेंगे, जिससे इस कविता की व्याख्या करने में आपको कोई कठिनाई नहीं होगी। पाठ्यक्रम में निर्धारित अनामिका की कविता से किस प्रकार के प्रश्न आपसे पूछे जा सकते हैं इसकी जानकारी भी आपको प्राप्त होगी।

1.2 प्रस्तावना

अनामिका मूलतः एक कवयित्री हैं। स्त्री–विमर्श इनके काव्य की पहचान है। इन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से नारी–जीवन की यात्रा में आने वाले सभी पड़ावों तथा स्त्री–अस्मिता की तलाश, स्त्री की पीड़ा–व्यथा, स्त्री का हर्ष–शोक, चिंता, ग्लानि, स्त्री के प्रश्न और चुनौतियों को व्यक्त किया है।

11.3 अनामिका की कविता की सप्रसंग व्याख्याएँ

1) *पढ़ा गया हमको*
जैसे पढ़ा जाता है कागज़
बच्चों की फटी कॉपियों का
चनाजोरगरम के लिफाफे बनाने के पहले!
देखा गया हमको
जैसे कि कुफ्त हो उनींदे
देखी जाती है कलाई घड़ी
अलस्सुबह अलार्म बजने के बाद!
सुना गया हमको
यों ही उड़ते मन से
जैसे सुने जाते हैं फिल्मी गाने
सस्ते कैसेटों पर
ठसाठस्स ठुँसी हुई बस में!

प्रसंग :– प्रस्तुत अवतरण डॉ. अनामिका द्वारा रचित काव्य संग्रह 'खुरदरी हथेलियाँ' में संकलित कविता 'स्त्रियाँ' से अवतरित किया गया है।

संदर्भ :– कवयित्री ने इस पद्यांश के माध्यम से पुरुषवादी समाज में पूंजीवादी एवं सामंतवादी सोच के बीच स्त्री की जो स्थिति है उसको परत दर परत खोला है।

व्याख्या – कवयित्री ने इसमें समाज में रूढ़िगत मान्यताओं से जूझती हुई नारी के जीवन की परिस्थितियों का वर्णन किया है। वे कहती हैं कि समाज व परिवार में उसे मात्र एक उपेक्षित प्राणी समझा जाता है। समाज में स्त्रियों का कोई मान–सम्मान और स्थान नहीं है। उन्हें केवल उन व्यर्थ कागज के टुकड़ों की तरह मूल्यहीन समझा जाता हैजो रद्दी के रूप में दिए जाते हैं या जो उपयोग के बाद तुरंत फेंक दिए जाते हैं। जहाँ स्त्री को एक मूल्यहीन वस्तु की भाँति समझा जाता है। उसे इन्सान तक नहीं समझा जाता। आगे कवयित्री नारी की तुलना घड़ी के उस अलार्म और फिल्मी गानों से करती हुई समाज में व्याप्त पितृसत्तात्मक सोच के यथार्थ को व्याख्यायित करती हुई कहती हैंकि जिस

प्रकार सुबह–सवेरे जब कच्ची नींद में अलार्म की आवाज़ सुनने के बाद सब के द्वारा चिढ़ते हुए अपनी कलाई की घड़ी को देखा जाता है। बस उतना ही नारी का महत्व है। अर्थात् उसी तरह एक स्त्री सुबह–सवेरे उठ कर पूर्ण रूप से अपने दायित्व को निभाती है किन्तु बावजूद इसके वे अपने परिवार में सदैव घृणा का पात्र रही है।

समाज में नारी को मात्र उन फिल्मी गानों की भाँति सुना जाता है जो भीड़ भरी बस में बिना मन के केवल मनोरंजन के लिए सुने जाते हैं। इससे लेखिका का आशय है कि भारतीय समाज में स्त्री को मात्र मनोरंजन के साधन के रूप में देखा सुना जाता है। अर्थात् औरतों को परिवार समाज में इसी तरह से बेमन होकर देखासुना जाता है। भाव है कि उसका अपने घर–परिवार में वास्तव में कोई मान–सम्मान नहीं है।

विशेष :– 1. उपर्युक्त अवतरण में कवयित्री ने पितृसत्तात्मक समाज में स्थित नारी की दशाओं का चित्रण किया है।

2. लेखिका ने आज के युग में भी नारी का सम्मान–इज्जत से दूर माना है।
3. मुक्त छंद का प्रयोग है।
4. अंग्रेजी (अलार्म), उर्दू (अलस्सुबह) देशज शब्दों का सहजता से प्रयोग किया गया है।

2) *भोगा गया हमको*
बहुत दुर के रिश्तेदारों के
दुख की तरह!
एक दिन हमने कहा
हम भी इंसान हैं –
हमें कायदे से पढ़ो एक–एक अक्षर
जैसे पढ़ा होगा बीए के बाद
जैसे कि ठिठुरते हुए देखी जाती है
बहुत दूर जलती हुई आग!
सुनो हमें अनहद की तरह
और समझो जैसे समझी जाती है
नई–नई सीखी हुई भाषा!

प्रसंग :– प्रस्तुत अवतरण डॉ. अनामिका द्वारा रचित काव्य संग्रह 'खुरदरी हथेलियाँ' में संकलित कविता 'स्त्रियाँ' से अवतरित किया गया है।

संदर्भ :– प्राचीन समय से लेकर आज तक के सभ्य और वैज्ञानिक युग में भी नारी को समाज में उस सम्मान की प्राप्ति नहीं हो सकी है जो होनी चाहिए थी। आज भी नारी को दोयम दर्जे का स्थान दिया जाता है जिसका विरोध करते हुए समस्त नारी जाति की ओर से कवयित्री इन पंक्तियों के माध्यम से बड़े ही सहज ढंग से नारी के महत्व को समझने की मनोकामना का प्रस्ताव पुरुष वर्ग के समक्ष रखती है। अनामिका स्त्रियों को एक मानव होने के नाते मानवीय गरिमा दिलाने हेतु प्रयासरत है।

व्याख्या :– प्रस्तुत अवतरण में कवयित्री स्त्रियों की पारिवारिक स्थिति और उनकी मनोकामना का वर्णन करती हुई कहती है कि स्त्रियों को अब भी उचित स्थान नहीं दिया जाता। अपने ही घर के परिवार में उसकी स्थिति उस दूर के रिश्तेदार की तरह होती है जिनके किसी दुख में वे शामिल तक नहीं होना चाहते। अर्थात आज भी स्त्री को बहुत दूर के रिश्तेदारों के जीवन में आए दुख की तरह समझा जाता है। अर्थात् स्त्रियाँ एक ही घर में रहते हुए भी पुरुषों के समान मान–अधिकार, प्रेम और अपनत्व को प्राप्त नहीं कर पाती वे जिस अधिकार की अधिकारिणी है उसे प्राप्त नहीं कर सकती। उनकी भावनाओं को न समझकर अपने ही परिवार में उन्हें हाशिए पर जीवन व्यतीत करने के लिए विवश किया जाता है। इसलिए वे पुरुष वर्ग से कामना करती हुई अपने इन्सान होने का महत्व समझाती है। वह स्त्रियों के अस्तित्व और संघर्ष की पड़ताल करते हुए उन्हें सचेत करना चाहती है कि पुरुषवादी समाज को स्त्रियों को बारीकी/सूक्ष्मता से समझना होगा। जिस प्रकार उच्चतर शिक्षा के लिए, ज्ञान प्राप्त करने के लिए बारीकी से पढ़ा जाता है। उसे अनाहत नाद की तरह पुरुष वर्ग को सुनना होगा और जिस प्रकार एक नई भाषा सिखने के लिए गौरवऔर उत्साह होता है उसी भाँति यदि तुम स्त्रियों को सुनोंगे, जानोंगे, उसे उसके अधिकार दोगे तब ही उनका महत्व/महत्ता जान पाओगे। उनके भीतर दिये भावों, उनकी ज्ञानता, उनकी योग्यता को समझ सकोगे।

विशेष :–

1. नारी विमर्श की बात की है।
2. ख़ड़ी बोली का प्रयोग किया गया है।
3. तद्‌भव, तत्सम और उर्दू शब्दावली का स्वाभाविक प्रयोग किया गया है।

4. छंद रहित काव्य योजना है।

5. पुनरूक्ति प्रकाश, उदाहरण और अनुप्रास अलंकारों का प्रयोग स्वाभाविक रूप से किया गया है।

3) *इतना सुनना था कि अधर में लटकती हुई*
एक अदृश्य टहनी से
टिड्डियाँ उड़ी और रंगीन अफवाहें
चीखती हुई चीं–चीं
दुश्चरित्र महिलाएँ, दुश्चरित्र
महिलाएँ –
किन्हीं सरपरस्तों के दम पर फूली–फैली
अगरधत्त जंगली लताएँ!
खाती–पीती, सुख से ऊबी
और बेकार बेचैन, आवारा महिलाओं
का ही
शगल हैं ये कहानियाँ और कविताएँ।
फिर ये उन्होंने थोड़े ही लिखी हैं
(कनखियाँ, इशारे, फिर कनखी)
बाकी कहानी बस कनखी है।
हे परमपिताओ,
परमपुरुषो –
बख्शो, बख्शो, अब हमें बख्शो!

प्रसंग :– प्रस्तुत अवतरण डॉ. अनामिका द्वारा रचित काव्य संग्रह 'खुरदरी हथेलियाँ' में संकलित कविता 'स्त्रियाँ' से अवतरित किया गया है।

संदर्भ :– प्रस्तुत पद्यांश में वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आत्मनिर्भर नारी के प्रति पुरुष वर्ग की ओछी मानसिकता का यथार्थ चित्रण कवयित्री ने बेबाकी से किया है।

व्याख्या :– इस अवतरण में कवयित्री ने स्त्री की उस स्थिति को चित्रित किया है जिसमें वे अपनी उपेक्षा से आहत है और हैरान भी। इन पंक्तियों के माध्यम से लेखिका बताती है कि स्त्रियों ने जब भी अपने अधिकारों की बात की, जब भी उसने दर्शाया कि वे किन्हीं मायनों में पुरुषों से कम नहीं है तो पुरुष वर्ग को यह स्वीकार्य नहीं हुआ उसने स्त्री की चुनौती को स्वीकार न करके उनका अनेक रूपों से अपमान, अनादर करने की कोशिश की और उन पर अनेक प्रकार के आरोप लगाए। आज स्त्री आत्मनिर्भर बनकर अपनी उपयोगिता को सिद्ध करने का प्रयत्न कर रही है। अपनी अस्मिता के लिए आवाज़ उठा रही है जो पुरुष वर्ग के वर्चस्व की नींव को हिलाती हुई नज़र आ रही है, जो इनको बर्दाश्त नहीं इसलिए इनके पास एक ही हथियार बच जाता है स्त्री का चरित्र हनन। अपना वर्चस्व बनाए रखने के लिए ऐसी नारियों के लिए चरित्रहीन, आवारा महिलाएं जैसे शब्दों का प्रयोग करके उन्हें आगे बढ़ने से रोकने के अनवरत प्रयास करते हैं। कवयित्री कहती है जब स्त्री ने अपनी लेखनी के माध्यम से अपनी संवेदनाओं को, अपनी पीड़ा को, अपने देखे हुए अनुभवों को, झेले हुए यथार्थ को प्रकट करना आरंभ किया तो इस पुरुष वर्ग ने उनके लेखन की योग्यता पर भी शंकित दृष्टि डाली, कि ये लेखन उन्होंने स्वयं नहीं बल्कि किसी पुरुष लेखक के सहारे लिखा होगा।और स्त्री को केवल उस जंगली लता की भाँति बताया जो किसी पेड़ के सहारे ऊपर बढ़ती है और अनेक प्रकार के लांछन उस पर लगाए जाते हैं।

अंत की पंक्तियों के माध्यम से कवयित्री पुरुष वर्ग पर व्यंग्य करती हुई कहती है हे महान पुरुष अब हमें बख्श दो। अर्थात बस अब हमें क्षमा कर दो। अब युगों–युगों से अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़ती स्त्री परम्परागत छवि से बाहर निकलना चाहती है। अब तक तो पुरुषसत्तात्मक समाज ने स्त्री को अपनी जकड़न में रखा अब उस जकड़न से स्वतंत्र होने का समय आ गया है। अब वह उनके वर्चस्व व धारणाओं का खण्डन करने और उन्हें अस्वीकार करने को तैयार हैं।

विशेष :–

1. अपने अस्तित्व के प्रति नारी में आक्रोश के स्वर देखने को मिलते हैं।
2. पुरुष मानसिकता पर व्यंग्य।
3. लाक्षणिकता का प्रयोग।

11.4 पठित कविता पर आधारित प्रश्न

प्र1) अनामिका के काव्य में स्त्री–विमर्श के विविध रूप पर विचार करें।

उत्तर) अनामिका मूलतः एक कवयित्री हैं। स्त्री–विमर्श इनके काव्य की पहचान है। इन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से नारी–जीवन की यात्रा में आने वाले सभी पड़ावों तथा स्त्री–अस्मिता की तलाश, स्त्री की पीड़ा–व्यथा, स्त्री का हर्ष–शोक, चिंता, ग्लानि, स्त्री के प्रश्न और चुनौतियों को व्यक्त किया है। अतः आज भी नारी को दोयम दर्जे का स्थान दिया जाता है और उसे मात्र भोग की वस्तु समझा जाता है। कवित्री अनामिका स्त्रियों को मानवीय दर्जा दिलाने हेतु प्रयासरत है।

प्र2) अनामिका के काव्य में चित्रित पितृसत्तात्मक समाज में नारी की स्थिति का वर्णन कीजिए।

उत्तर) कवयित्री अनामिका ने पितृसत्तात्मक समाज में नारी की दशा का स्पष्ट चित्रण किया है। समाज में नारी को मात्र मनोरंजन का साधन समझा जाता है और उसे एक मूल्यहीन वस्तु की भांति माना जाता है। पुरुषवादी समाज में उनका कोई मान–सम्मान व स्थान नहीं है। एक स्त्री अपने समाज तथा घर–परिवार के प्रति अपना पूर्ण दायित्व निभाने के बावजूद घृणा का पात्र बनी रहती है। पुरुष वर्चस्व सदा उस पर हावी रहता है। अपने घर परिवार में भी वास्तव में उसे कोई मान–सम्मान नहीं मिलता। अतः एक स्त्री सदैव हर तरफ से पीड़ित तथा प्रताड़ित ही रहती है। पुरुषवादी मानसिकता उसे कभी आगे नहीं बढ़ने देती।

प्र3) कवयित्री अनामिका के काव्य में चित्रित स्त्री की पारिवारिक स्थिति का चित्रण करें।

उत्तर) समाज में स्त्रियों की स्थिति आज भी शोचनीय है। अपने ही घर–परिवार में उनकी स्थिति दयनीय है। आज भी स्त्री को बहुत दूर के रिश्तेदारों के जीवन में आए दुख की तरह समझा जाता है अर्थात् स्त्रियाँ एक ही घर में रहते हुए भी पुरुषों के समान मान–अधिकार ,प्रेम और अपनत्व को प्राप्त नहीं कर पाती। उनकी भावनाओं को न समझकर अपने ही परिवार में उन्हें हाशिये पर जीवन व्यतीत करने के लिए विवश किया जाता है। अतः कवत्रियी अनामिका स्त्रियों के अस्तित्व और संघर्ष की बात करते हुए समाज व घर–परिवार में उन्हें उचित स्थान दिलाने की बात करती है।

प्र4) अनामिका के काव्य में व्यक्त आत्मनिर्भर नारी के प्रति पुरुष वर्ग की मानसिकता पर विचार करें।

उत्तर) पुरुषवादी समाज में नारी सदैव उपेक्षा का पात्र बनी रही। स्त्रियों ने जब भी अपने अधिकारों की बात की और यह दर्शाया कि वे किन्हीं मायनों में पुरुष से कम नहीं तो पुरुष वर्ग को यह स्वीकार्य नहीं हुआ और उसने उनकी (स्त्रियों) चुनौती को स्वीकार न करके उन्हें आरोपित और अपमानित किया। आज जब स्त्री आत्मनिर्भर होकर अपनी उपयोगिता को सिद्ध करने का प्रयत्न कर रही है, अपने अस्तित्व के लिए आवाज़ उठा रही है तो पुरुषसत्तात्मक समाज इस बात को बर्दाश्त न कर स्त्री पर चरित्रहीनता का आरोप लगाकर उसे दबाने का प्रयत्न करता है। अतः इस तरह से अभद्र शब्दों का प्रयोग कर पुरुष उन्हें (स्त्रियों) आगे बढ़ने से रोकने के अनबूरत प्रयास करते हैं। पुरुष ने स्त्री–लेखन की योग्यता पर भी शंकित दृष्टि डाली अर्थात् उन्होंने यह माना कि उनका (स्त्रियों) यह लेखन भी किसी पुरुष लेखक के सहारे लिखा गया है। अतः पुरुषसत्तात्मक समाज ने आत्मनिर्भर स्त्री को हर प्रकार से जकड़ कर रखा और उसे लांछित तथा प्रताड़ित करने का प्रयास किया।

11.5 कठिन शब्द

1. अस्मिता
2. पूंजीवादी
3. सामंतवादी
4. हाशिए
5. अस्तित्व
6. अनाहत नाद
7. वर्चस्व
8. पुरुषसत्ता
9. लाक्षणिकता
10. शोचनीय

11.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) 'स्त्रियाँ' कविता में चित्रित पितृसत्तात्मक समाज में नारी की स्थिति का वर्णन कीजिए।

उ•)..

....

....

प्र2) 'स्त्रियाँ' कविता में चित्रित स्त्री की पारिवारिक स्थिति का चित्रण करें।

उ•)..

....

....

प्र3) अनामिका की कविता 'स्त्रियाँ' में व्यक्त आत्मनिर्भर नारी के प्रति पुरुष वर्ग की मानसिकता पर विचार करें।

उ•) ....

....

....

प्र4) निम्नलिखित पंक्तियों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए –

सुना गया हमको/ यों ही उड़ते मन से/ जैसे सुने जाते हैं फिल्मी गाने/ सस्ते कैसेटों पर/ठसाठस्स ठुँसी हुई बस *में!*

उ•) ....

....

....

11.7 पठनीय पुस्तकें

1. काव्य सुमन –सं. महेन्द्र कुलश्रेष्ठ

***

अनामिका का व्यक्तित्व और साहित्यिक विशेषताएँ

12.0 रूपरेखा

12.1 उद्देश्य

12.2 प्रस्तावना

12.3 अनामिका का व्यक्तित्व और साहित्यिक विशेषताएँ

12.4 सारांश

12.5 कठिन शब्द

12.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.7 पठनीय पुस्तकें

12.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययनोपरान्त आप–

– अनामिका के जीवन का ज्ञान प्राप्त कर पाएंगे।

– अनामिका के काव्य की विशेषताओं से अवगत होंगे।

12.2 प्रस्तावना

समकालीन दौर की कवयित्री अनामिका हिंदी तथा अंग्रेजी पर समान अधिकार रखने वाली एक नारीवादी लेखिका हैं। शहरों में बसने के बावजूद उनकी जड़ें अभी भी ग्राम्य संस्कृति की आसक्ति रखती हैं। उन पर देहातके सहज–सरल

जीवन के संस्कार नज़र आते हैं। गांव के छल रहित जीवन की वे अधिक चाहत रखती हैं। वे सामाजिक यथार्थ से जुड़ी हुई रचनाकार हैं। उनका पूरा व्यक्तित्व समाज की उन घटनाओं की छाया है जहाँ मनुष्य अपनी मानवीय स्मृति का ठहराव महसूस करने लगता है।

12.3 अनामिका का व्यक्तित्व और साहित्यिक विशेषताएँ

जीवन परिचय :–

समकालीन हिंदी कविता में अपनी एक अलग पहचान रखने वाली कवयित्री अनामिका का जन्म 17 अगस्त, 1961 ई. में मुजफ्फरपुर, बिहार में हुआ। उनके पिता श्यामनंदन किशोर हिंदी के गीतकार और बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर में हिन्दी विभाग में अध्यक्ष थे। उनकी माता जी एक विदुषी महिला थीं। अनामिका का बचपन मुजफ्फरपुर में ही बीता। उनके पिता जी आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी के प्रिय शिष्य थे। द्विवेदी जी ने उनका नाम प्रज्ञा पारमिता रखा था लेकिन सरस्वती के उपासक पिता ने अपनी बेटी का नाम 'अनामिका' रखा। अनामिका का पूरा परिवार सुसंस्कृत साहित्यिक परिवेश का था।

अनामिका की आरम्भिक शिक्षा उन्हीं के शहर सेंट जेसिस जेवियर्स एकेडमी नामक अंग्रेजी स्कूल में हुई। उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए., पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। इसके पश्चात् उन्होंने डी. लिट् की उपाधि भी प्राप्त की। उनकी पढ़ाई पटना, लखनऊ, दिल्ली के विश्वविद्यालय में पूरी हुई। अपनी अंग्रेजी शिक्षा के बावजूद लेखन के क्षेत्र में हमेशा उन्होंने हिंदी को प्राथमिकता दी।

कार्यक्षेत्र :–

अनामिका ने अपने बड़े भाई की इच्छा के कारण दिल्ली आकर अपने अध्ययन के लिए अंग्रेजी माध्यम का चयन किया। वे सत्यवती कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय के अंग्रेजी विभाग में प्राध्यापिका के पद पर कार्यरत हैं। वे हिंदी और अंग्रेजी दोनों में लिखती हैं। अंग्रेजी की प्राध्यापिका होने के बावजूद अनामिका ने हिंदी कविता कोश को समृद्ध करने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी है। प्रख्यात आलोचक डॉ. मैनेजर पांडेय के अनुसार, "भारतीय समाज एवं जन जीवन में जो घटित हो रहा है और घटित होने की प्रक्रिया में जो कुछ गुम हो रहा है अनामिका की कविता में उसकी प्रभावी पहचान और अभिव्यक्ति देखने को मिलती है।"

अतः हिंदी तथा अंग्रेजी पर समान अधिकार रखने वाली अनामिका एक नारीवादी लेखिका हैं।

पारिवारिक जीवन :–

अनामिका का वैवाहिक जीवन सुखमय है। उनके पति डॉ. बिन्दु अमिताभ सफदरगंज अस्पताल में नेफ्रॉलाजी विभाग के अध्यक्ष हैं। अत्यन्त निपुण चिकित्सक और मेड़िसिन–शिक्षक के रूप में उनकी ख्याति है। अनामिका का अपने पति डॉ. बिन्दु अमिताभ से जो अंतरंग नाता है, उसकी झलक उनके लेखों और कविताओं में हर कदम पर मिलती है। उनके सास–ससुर दोनों अंग्रेज़ी के प्रोफेसर और लेखक रहे हैं। अनामिका और उनके पति का अपने दोनोंबेटों से प्रेमपूर्ण नाता है। बड़े बेटे 'उत्कर्ष' मैकेनिकल इंजीनियरिंग के छात्र होने के अलावा अखिल भारतीय स्तर के निबंधकार और एक्टिविस्ट हैं। उनका छोटा बेटा 'उन्नयन' दसवीं का छात्र होने के साथ गिटार का उत्साद है।

अतः अनामिका का जन्म एक साधारण शहर में हुआ और वह स्वयं स्वीकारती हैं कि "मेरे संस्कार छोटे शहर वाले घरेलू से संस्कार हैं।" शहरों में बसने के बावजूद उनकी जड़ें अभी भी ग्राम्य संस्कृति की आसक्ति रखती हैं। उन पर देहात के सहज–सरल जीवन के संस्कार नज़र आते हैं। गांव के छल रहित जीवन की वे अधिक चाहत रखती हैं। वे सामाजिक यथार्थ से जुड़ी हुई रचनाकार हैं। उनका पूरा व्यक्तित्व समाज की उन घटनाओं की छाया है जहाँ मनुष्य अपनी मानवीय स्मृति का ठहराव महसूस करने लगता है।

पुरस्कार/ सम्मान :–

अनामिका को राष्ट्रभाषा परिषद् पुरस्कार, भारतभूषण अग्रवाल पुरस्कार, गिरिजाकुमार माथुर पुरस्कार, ऋतुराज साहित्यकार सम्मान आदि प्राप्त हो चुके हैं।

साहित्यिक विशेषताएँ :–

आधुनिक हिंदी साहित्य की महिला रचनाकारों में अनामिका का श्रेष्ठ स्थान है। वे एक बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्कार हैं। अपने साहित्यिक क्षेत्र में वे संवेदनशील सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्त करती हैं। अनामिका नेअपने साहित्य लेखन का आरम्भ कविताओं के माध्यम से किया है। कविताओं के माध्यम से उगनेवाले भावानुराग को उन्होंने अपने गद्य लेखन में भी व्यक्त किया है। अनामिका के कृतित्व की शुरूआत घर से ही हुई है। छात्र जीवन से ही उन्होंने लिखना शुरू कर दिया था जिनमें अंग्रेजी कविता के दो संग्रह क्रमशः प्रकाशित हुए :

1. इन क्वेस्ट ऑफ में टाइटिल 2. हैगिंग प्रिज्म्स।

इसी समय उन्होंने हिंदी कविताओं के तीन संग्रह 'शीतल स्पर्श एक धूप की', 'गलत पत्ते की चिट्ठी' और 'समय के शहर में' लिखे। छात्र जीवन में ही उन्होंने दो विशिष्ट उपन्यास 'पर कौन सुनेगा (1982)' और 'मन कृष्ण : मन अर्जुन (1995)' लिखे। तब से लेकर अब तक अनामिका के दस कविता–संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं : शीतल स्पर्श एक धूप की (1975), गलत पत्ते की चिट्ठी (1979), समय के शहर में (1982), बीजाक्षर (1993), अनुष्टुप (1998), खुरदरी हथेलियाँ (2005), कविता में औरत (2007), दूब–धान (2008), कवि ने कहा (2011), पानी को सब याद था (2019)।

कवयित्री के रूप में अपनी प्रतिष्ठित पहचान बनाने के साथ ही उपन्यास के क्षेत्र में भी उन्होंने बेहतरीन कार्य किया। उनके अब तक कुल सात उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। स्त्रीत्व का मानचित्र (1995) इनकी स्त्री–विमर्श पर लिखी पहली हिंदी पुस्तक है। विभिन्न आलोचनात्मक पुस्तकें और निबन्ध संग्रह लिखने के साथ–साथ इन्होंने अनुवाद कार्य और सम्पादन भी किया है। इंग्लैण्ड, अमरीका और अफ्रीका के प्रमुख कवियों की कविताओं का अनुवाद उन्होंने किया है जिनमें 'अतलान्त के आर पार' और 'कहती है औरतें' नामक दो संकलन बहुत चर्चित हुए। आस्ट्रेलिया के कवि लेस मरे का अनुवाद कथा के लिए रविन्द्रनाथ और रिल्के का साहित्य अकादमी के लिए अनुवाद किया। प्रसिद्ध लेखक–अभिनेता, गिरीश कर्नाड़ के 'नागमंडल' का अनुवाद भी उन्होंने किया जिसका मंचन देश भर में हुआ।

इंदिरा गांधी विश्वविद्यालय के अंग्रेजी एम.फिल का पाठ्यक्रम, एन.सी. आर.टी. में 'सृजनात्मक लेखन' पाठ्यक्रम और महात्मा गाँधी विश्वविद्यालय में स्त्री विमर्श के पाठ्यक्रम को रेखांकित करने में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। साहित्य अकादमी के लिए हिंदी की प्रमुख कवयित्रियों के संकलन का सम्पादन कार्य भी उन्होंने किया है। इसी के साथ प्रतिष्ठित समाचार पत्र 'जनसत्ता' और 'राष्ट्रीय सहारा' में भी उन्होंने लोकप्रिय स्तंभ लिखे।

अनामिका की लेखन–यात्रा समय और समाज में संवाद है। समय और समाज के संवाद के दरमियां वह निरंतर स्त्री : जीवन से जुड़े ज्वलंत मुद्दों को कविताओं में उठाती रही हैं। वे यह स्वीकारती हैं कि "वस्तविक जीवन–जगत् के चरित्र हो या क्लासिकों के चरित्र–मेरी कल्पना के स्थायी नागरिक वहीं बनते हैं, जिन्हें कभी न्यय नहीं मिला, जो हमेशा लोगों की गलतफहमी का शिकार हुए, दुनिया ने जिन्हें कभी न प्रेम दिया, न मान। भीतर से वे जितने अगाध होते हैं, उतने ही अकेले।" अतः यह कथन अनामिका के रचना–संसार की भावभूमि की ओर स्पष्ट संकेत करता है।

अनामिका सदियों से बनी कठोर पुरुषवादी मानसिकता में परिवर्तन कर स्त्री के व्यक्तित्व, योग्यता, सर्जना के अनमोल क्षण, खोई पहचान को पुनर्स्थापित कर अस्मिता और अधिकारों की टूटी कड़ियों को जोड़कर सामाजिक,

राजनीतिक, आर्थिक समानता पर आधारित समाज में खुलकर अपने सपनों को जीती, वर्जनाओं से मुक्त व्यक्तित्व को आकार देती एवं पुरुष की हमकदम बन स्वतंत्रता का लुत्फ उठाती नई स्त्री की छवि गढ़ना चाहती है। जिससे समाज में सदियों से बनी लैंगिक एवं वर्गीय असमानता की अलंघ्य दूरियों को पाटा जा सके। अनामिका की कविताओं में चित्रित स्त्रियाँ सबसे पहले उन्हें एक इंसान माने जाने की जायज़ मांग करती हैं–

"हम भी इंसान हैं–
हमें कायदे से पढ़ो एक–एक अक्षर
जैसे पढ़ा होगा बी.ए. के बाद
नौकरी का पहला विज्ञापन।"

अनामिका की दृष्टि में स्त्री–जीवन का हर पहलू और उसका हर पक्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण है और मानवीय समाज के लिए अति आवश्यक है। इसीलिए वह स्त्री के मनोभाव, उसकी इच्छाओं और अनिच्छाओं को इस समाज के द्वारा भली–भांति जानना और समझना अति आवश्यक मानती हैं। उसे नकारा नहीं जा सकता।

अनामिका की कविताएँ अस्मिता के प्रश्न को एक संकुचित दायरे से निकाल उसे व्यापक परिदृश्य से जोड़कर अभिव्यक्त करती हैं। उन्होंने राम, बुद्ध, ईसा मसीह के समय से लेकर तुलसीदास के मध्यकालीन संकीर्ण सोच केदायरों में आम्रपाली रत्नावली जैसी मुखटा स्त्रियों के माध्यम से अपने वजूद को तलाश कर उसे पुनर्स्थापित करती स्त्रियों को उकेरा है। अपने दृढ़ निश्चय से यह स्त्री हर प्रतिरोध के किले को ध्वस्त कर अपने मार्ग पर बेधड़क आगे बढ़ जती है।

प्रत्येक स्त्री के साथ स्वभाविक रूप से घटित मासिक स्त्राव की जैविक क्रिया भी सदियों से समाज में धार्मिक अनुष्ठानों एवं पूजा स्थलों से बाहर कर देने का बड़ा उपयोगी और सरल उपाय रही है। 'मरने की फुर्सत' कविता में अनामिका ने इस अछूते विषय को भी गंभीरता से उठाया है–

"ईसा मसीह औरत नहीं थे
वरना मासिक धर्म
ग्यारह बरस की उम्र से
उनको टिकाए ही रखता
देवालय के बाहर!"

'केरल की एक लोकधुन' पर आधारित कविता में अनामिका ने मानवीय मूल्यों के ह्रास के इस दौर में कुत्सित और विकृत मानसिकता के शिकार, मनोरोगी और स्त्री देह के भूखे भेड़ियों की राजसी कामेच्छा की शिकार हुई एक अबोध बालिका की पीड़ा को व्यक्त किया है। उस मासूम का अपनी माँ से संवाद हृदय में पीड़ा की अनगिनत हिलोरें उठा जाता है–

"मानो न, अम्मा दी, बिल्कुल दी.... जल्दी
तो हार नहीं मानी।
थोड़ा–सा खून बहा, छपाके से बॉबी के
फूल रँग गए
ओ अम्मा, ओ अम्मा–
मत रोओ लेकिन की
एक छपाका खून ही तो था,
तो फिर से बन जाएगा।
इस बार नखरे बिना
मैं खुद ही पीस खाऊँगी
जौ, बाजरा,
तुमको तकलीफ नहीं दूँगी
कि मिट्टी से सारे दाग छुड़ा लूँगी
मैं लहँगे का
ऐ अम्मा, ऐ अम्मा जी!"

निरीह माँ बलात्कार की शिकार इस मासूम बेटी को कैसे समझाए कि उसने क्या खो दिया है ? आज के दौर की सबसे बड़ी चिंता स्त्री की सुरक्षा है। जिसने बहुत गहरे तक अनामिका के मन को आलोड़ित किया है।

आज वैज्ञानिक प्रगति के इस दौर में शिक्षित स्त्रियों की आवश्यकता तो सबको है, किन्तु उनकी तार्किकता और वैचारिक स्वतंत्रता स्वीकार्य नहीं। अनामिका स्त्री विरोधी पुरुषसत्तात्मक संकीर्ण मानसिकता में बदलाव चाहती हैं। वे स्त्रियों को मुक्ति के छद्म आवरण से बाहर निकाल खुले में साँस लेने का मानवोचित अधिकार देने की मँग अपनी

कविताओं में करती हैं। अतः अनामिका अपनी कविता में स्त्री–जीवन का व्यापक संदर्भों में पुनर्पाठ कर उसके अंतः और बाह्य जगत को टटोलते हुए उसके जीवन का अनिवार्य हिस्सा बनी जटिलताओं, विषमताओं की पड़ताल कर अस्मिता, पहचान और व्यक्तित्व विकास से जुड़े स्वतंत्र नजरिए का प्रतिपादन करती है।

वे भारतीय समाज में पुरुष सत्ता और वर्चस्ववादी, सामंती संरचना से जूझ रही असंख्य स्त्रियों के दुःख और पीड़ा का सरलीकरण कभी नहीं करतीं जो इनकी कविताओं की पहचान है। अनामिका एक अस्तित्व के रूप में स्त्री होने को कभी नकारती नहीं बल्कि गरिमा के साथ स्त्री होने को स्वीकारती है क्योंकि एक रचनाकार के रूप में स्त्री का व्यक्तित्व अपनी अस्मिता के होने के सभी भेद–प्रभेदों के बीच से निकलकर, गुजरकर अपनी पहचान पाता हैऔर फिर एक विशिष्ट मनोविज्ञान को रचता है जिसे समग्रता से अनुभव किये बिना न तो कोई अहसास होता है न विचार, न कल्पना, न अंतर्दृष्टि। इसलिए एक कविता में अनामिका ने कहा था–

"लोग दूर जा रहे हैं
और बढ़ रहा है
मेरे आसपास का स्पेस!
इस स्पेस का अनुवाद
विस्तार नहीं अंतरिक्ष करूँगी मैं
क्योंकि इसमें मैंने उड़नतश्तरी छोड़ रखी है।
समय का धन्यवाद
कि इस समय मुझमें सब हैं
सबमें मैं हूँ थोड़ी–थोड़ी
दरअसल इस पूरे घर का
किसी दूसरी भाषा में
अनुवाद चाहती हूँ मैं
पर यह भाषा मुझे मिलेगी कहाँ।"

अनामिका स्त्री–जीवन को, घर को नकारती नहीं हैं बल्कि अपनी भाषा से उसे नयी पहचान देना चाहती है। वर्चस्व की सामाजिक व्यवस्था से दबी मुक्त होने की सहज आकांक्षा के लिए इस अनुवाद की भाषा जब वे ईजाद कर

लेती हैं तो उन्हें स्त्री की वास्तविक ज़मीन मिल जाती है, जो उसकी अपनी हो सके। स्त्री अनुभवों की यातनाओं, देश और संघर्ष को वे अपनी कविता में सच्चाई और तीव्रता के साथ व्यक्त करती हैं।

भारतीय स्त्रियों के जीवन–संघर्ष, हास–परिहास और गीत–अनुष्ठान, रीति–रिवाज़, सामूहिक क्रिया–कलापों के जरिये पीड़ा को सह पाने की उनकी परंपरागत युक्तिहीन मुक्ति के व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखने पर अनामिका की कविताओं के नये अर्थ खुलते हैं। जिन तक कविता को देखने–परखने के रूढ़ ढाँचे को तोड़कर ही पहुँचाजा सकता है।

परम्परा और संस्कृति में अंतर्निहित बड़ी–बुजुर्ग स्त्रियों, दादियों–नानियों, माँ की कथाओं और उनके मुहावरों–कहावतों में छिपे काल–सिद्ध सत्य का अन्वेषण अनामिका हमेशा अपने मौलिक तरीके और शैली मेंकरती आई हैं। स्त्री अनामिका के लिए कोई जाति–विशेष नहीं है, बल्कि एक केन्द्रीय तत्व है जो प्राणी मात्र के अस्तित्व में मौजूद रहता है। वह मनुष्य के रूप में पुरुष भी है, पेड़ में है, पानी में भी है जो सतत गतिशील है। यह स्त्री तत्व ही जीव को जन्म देता है– जीवन भी और उसे सार्थक करता है। वे कहती हैं–

"जो बातें मुझको चुभ जाती हैं
मैं उनकी सुई बना लेती हूँ
चुभी हुई बातों की ही सुई से मैंने
टाँके हैं फूल सभी धरती पर।"

अनामिका के पास एक सम्पन्न, परतदार भाषा है जिसमें जातीय स्मृतियाँ हैं, जो निजी भी हैं, सार्वभौम भी, उस भाषा में जीवन और समाज को देखने का एक बड़ा विज़न भी है। एक स्त्री रचनाकार के रूप में उनमें जो प्रेम और उम्मीद है उसे वे अपनी कविताओं में जीवनानुभवों में व्यक्त करती हैं क्योंकि उनके अनुसार अनुभव बाँटने की चीज़ है। जो मानवीय अनुभव, सुख–दुःख, तकलीफ, विडम्बनाएँ हमने आत्मसात् की वे साझा करने के लिए ही हैं। इसलिए उनकी कविता एक वैयक्तिक रचना न होकर समूचे समाज की तरफ से एक सामूहिक प्रयास बन जाती है। अनामिका अपनी कविताओं में उन तमाम भेद–भावों की संरचनाओं को तोड़ती हैं जो वर्चस्व पूर्ण समाज में स्त्री के लिए निर्मित की गई हैं। उनकी अभिव्यक्ति में जीवन से जुड़े अनेक शब्द अपने नये संदर्भों के साथ आते हैं और प्रतीकात्मक बिम्बों से सजी आत्मीय भाषा में व्यंजना के नये अर्थ प्रस्फुटित होते हैं। साधारण जीवन की असाधारण जीवन परिस्थितियाँ, त्रासद विडम्बनाएँ इनकी कविताओं में बिम्बों, चरित्रों, दृश्यों और संवादों का एक सजीव संसार उपस्थित कर देती हैं

कि पाठक इन स्मृतियों को उसी अंतरंग मनः स्थिति के साथ ही संवेदना में दर्ज कर लेता है। शहर की मध्यवर्गीय स्त्री की पीड़ा हो या गाँव–कस्बे की निर्धन स्त्री की अंतर्व्यथा, उसे सहज और आत्मीय रूप में उकेरने का कौशल अनामिका की काव्यात्मक विशिष्टता है।

मानवीय संबंधों में आते बदलाव और परिवेश की चुनौतियों से परिवार और समाज की मर्यादाओं से जूझी बेटी, बहन के रूप में स्त्री के अस्तित्व का संघर्ष अब ज्यादा जटिल और बहुआयामी है। परम्परा और आधुनिकता के इस विरोधाभास में अनामिका की कविताएँ मिथक और लोकश्रुतियों को भी नये सिरे से स्त्री पक्ष में पुनर्मूल्यांकित करती हैं जिनमें आज का यथार्थ सहज रूप से उभर कर आता है। ऑर किलिंग तथा तथाकथित सम्मान के नाम पर उभरती जातीय खाप–संस्कृति पर उनकी बारीक नज़र स्त्री–अस्मिता पर हुए शोषण के नये आघातों को देखती है जैसे 'प्रेम के लिए फाँसी' कविता में–

''मीरा रानी, तुम तो फिर भी खुशकिस्मत थीं
खाप पंचायत के फैसले
तुम्हारे सगों ने तो नहीं किये।
राणाजी ने भेजा विष का प्याला'
कह पाना फिर भी आसान था
भैया ने भेजा– ये कहते हुए जीभ कटती।
बचपन की स्मृतियाँ कशमकश मचातीं
और खड़े रहते ठगे हुए राह रोककर
हँसकर तुम यही सोचती–
भैया को इस बार मेरा ही
आखेर करनी की सूझी!
वह सब संपदाः त्याग, धीरज, सहिष्णुता।
मेरे ही हिस्से कर दी
क्यों उसके नाम नहीं लिखी ?

स्त्री मुक्ति के यथार्थ का यूटोपिया समूची मानवता के सभ्यतामूलक विकास के लिए वंचितों, शोषितों औरपीड़ित जनों के व्यापक संघर्ष में हिस्सेदारी निभाने से ही संभव है। इसीलिए लेखिका अनामिका की कविताओं की भाषा बहुकेन्द्रित

और संवादधर्मी हैं और उसका आधार लोकतांत्रिक है। यह साझा स्त्री–विमर्श स्त्री को दैहिक, मानसिक, आर्थिक व सांस्कृतिक प्रताड़नाओं से मुक्त करने का निरन्तर प्रयास है जिसमें अन्याय और क्रूरता के समानांतर करुणा और न्याय दृष्टि है।

इतिहास की नाभिकाओं से महादेवी वर्मा, सुभद्राकुमारी चौहान, मीराबाई, घनानंद की सुजान से बेगम अख्तर तक और गाँव–कस्बे, शहर से लेकर झुग्गी–झोपड़ियों, गली–मोहल्लों, फूटपाथों, अनाथालयों, शिविरों विस्थापित बस्तियों तक से खेत–खलिहान, मजदूरी, घरेलू और अन्य बेगार के कार्यों से जुड़ी श्रमिक सर्वसाधारण स्त्रियाँ, उनकी कविताओं में जीवंत हो उठती हैं। परम्परा से रूढ़ि को अलग करती हुई नयी दृष्टि से सचेतन स्त्रियां जिनके जीवन का संघर्ष अंतहीन है और मुक्ति का रास्ता इतना आसान नहीं। 'मेरे मुहल्ले की राबिया फकीर', 'टैगोर को मेरा प्रेमपत्र', 'चैन की साँस', 'प्लेटफॉर्म पर ग्रामवधुएँ', 'ब्यूटी कल्चर : खोली नंबर 65', 'नसीहत' जैसी सशक्त कविताएँ जिनमें जाति और मज़हब से परे प्रत्येक स्त्री का दुख साझा है–

''मेकअप में
उस्ताद है शाज़िया
ईश्वर की भूले भी
मनोयोग से सुधार देती है
उसका नन्हा पार्लर है घरौंदा
पीट कर निकाल दी गई औरतों का
धो देती है उनके चेहरों से
सदियों की धूल
दुनिया के सारे आस्वादों की खातिर
जब फिर से तैयार हो जाते हैं रंध्रकूप–
फिर दोनों साथ–साथ बैठी हुई
चाय नहीं पीतीं
पीतीं हैं घूँट–घूँट अमृत वो
उस मगन आपसदारी का
जिसको कि कहते हैं बहनापा।''

स्त्रीवाद की कठोर ज़मीन पर खड़े होकर अनामिका आज के परिवेश में स्त्री के उत्पीड़न और स्त्री–समाज के त्रासद यथार्थ के प्रति भी पूरी तरह सजग और सचेत है। बाज़ारवादी सभ्यता व उपभोगतावादी संस्कृति मेंस्त्री का संघर्ष अब अधिक कठिन और चुनौतीपूर्ण हुआ है जिसमें अत्याचार, यौन–हिंसा, अन्याय और शोषण के नये–नये तरीकों से टकराना भी नियति है। इनकी कविताओं में समसामयिक परिवेश की तमाम अमानवीय और निर्मम विसंगतियों के प्रति चिंताएँ भी शामिल हैं। स्त्री–मुक्ति के सन्दर्भ में उनकी कविताएँ बने–बनाए विमर्श के ढाँचे को तोड़ती है और स्त्रीवाद का नया पाठ तैयार करती हैं। इनके सरोकार संवेदनात्मक दिशा में अग्रसर होकर भी यथार्थ के प्रति सजग वैचारिक विवेक पर आधारित हैं। स्त्री के आत्मसम्मान का प्रश्न और उसकी स्वतंत्र वैचारिक ज़मीन की तलाश इस समय की कविता की केंद्रिय चिंता है जो सामाजिक व्यवस्था में अपनी पहचान और गरिमा के लिए संघर्षशील है।

अनामिका मूलतः कवयित्री हैं किन्तु अपने पहले उपन्यास में उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि उपन्यास लेखन की क्षमता उनमें मौजूद है तथा एक उपन्यास लिखने के लिए जिस विज़न की दरकार होती है वह भी उनमें स्पष्ट रूप से विद्यमान है। 'अवान्तर कथा' उपन्यास का कथानक बेशक नया नहीं है लेकिन जिस शिल्पकौशल से घटनाओं को सूत्रों में जोड़ा गया है, वह महत्वपूर्ण है। इसमें एक परिवार के राग–द्वेष, प्रेम–करुणा, अहंकार ज़िद, आदर–निरादर, विखंडन और जुड़ाव की कथा है। नन्ना जैसी मुख्य पात्र अपने पैतृक खाली पड़े उजड़े और गिरते–पड़ते मकान में रहती है और उसे 'घर' में बदलती है।

उपन्यास की प्रायः सभी स्त्री पात्र निडर और शक्तिशाली हैं, उनकी भूमिकाएं अहम और प्रभावित करने वाली हैं। उनके जीवन में ऐसे मोड़ आते हैं जहाँ पर ये ठगी जाती हैं, असफल होती हैं किन्तु फिर नए ढंग से जीवन की शुरूआत करती हैं। अर्थात् दुख, उदासियों, स्मृतियों की अपनी जगह है। लेकिन जीवन जीने के लिए वर्तमान और उसका यथार्थ होता है। उपन्यास की प्रायः स्त्रियां इस सत्य को समझती हैं। उनकी जटिल जीवन यात्रा है। जय–पराजय है। लेकिन संघर्षरत जीवन है, वर्जनाओं को तोड़ने की कोशिशें हैं। अतः घर–परिवार, परम्परा और आधुनिकता के ताने–वाने से बुना यह उपन्यास पठनीय तथा जीवंत है।

स्त्री–मुक्ति के लिए प्रतिबद्ध और समर्पित अनामिका का एक अन्य उपन्यास 'दस द्वारे का पिंजरा' है। पुरुष वर्चस्व वाले समाज में नारी के लिए निर्धारित आचरण और उस पर थोपी गई वर्जनाओं को लेकर अनामिका अत्यंत स्पष्ट और कहीं–कहीं आक्रामक भी हैं। देह और उससे जुड़ी कथित शुचिता को उपन्यास में नारी की मुक्ति और प्रगति के मार्ग में बाधक माना गया है। देह क्या सचमुच औरतों के गर्दन में लटका हुआ ढोल है ? मारपीट, सती–दहन और

बलात्कार लगातार झेलती हुई स्त्री कब पूर्ण व्यक्ति की तरह निःशंक रह सकेगी ? उपन्यास की पात्र रमाबाई समाज से चरित्र का प्रमाणपत्र लेने के विरुद्ध है– "क्यों भाई, क्यों चाहिए, दुनिया से प्रमाणपत्र। सत्य अपना प्रमाण खुद है।"

समकालीन नारी–विमर्श में जिस तरह ब्राह्मणवाद को स्त्री की दुर्गति के लिए ज़िम्मेदार ठहराया जाता है, नारी–विरोधी कथित शास्त्रों की भर्त्सना की जाती है, नर–नारी के लिए दोहरे प्रतिमानों पर प्रहार किया जाता है आदि को लेखिका ने उपन्यास में वर्णित किया है। अतः समय की प्रामाणिकता से संपन्न संवेदनशीलता ने न केवल इस उपन्यास को महत्वपूर्ण बनाया है अपितु उस पिंजरे के खुलने या टूटने के प्रति विश्वास भी जताया है, जिसमें नारी आज भी मुक्ति के लिए छटपटा रही है। स्त्री की मुक्ति केवल बुद्धि की मुक्ति नहीं होती, केवल हृदय की मुक्ति नहीं होती बल्कि तमाम इन्द्रियों की मुक्ति होती है। देह भी बंधन है और उससे मुक्ति ही पूर्ण मुक्ति है। अतः इस उपन्यास में स्त्री–मुक्ति के कई नये आयाम खुलते हैं।

कवयित्री अनामिका की पुस्तक 'स्त्रीत्व का मानचित्र' एक स्त्री की शक्ति और उर्जा को गति और प्रगति के समकालीन साँचे में तराशती है। अनादि काल से अब तक खासकर समकालीन परिदृश्य में स्त्री–जीवन के यथार्थ को समाज, संस्कृति, दर्शन और मनोविज्ञान की कसौटी पर कसकर लेखिका ने स्त्री की छवि को बिम्ब–प्रति–बिम्ब चित्रित किया है। लोक और शास्त्र दोनों दृष्टियों से स्त्री–मन की गहराई में उतरने की कोशिश की गई है। जो विषय के प्रति लेखिका की गहरी अनुभूति और ज्ञान का परिचायक है। 'खुरदुरी हथेलियाँ' कविता संकलन में अनामिका ने जीवन–जगत को एक बड़े फलक पर पकड़ने, उसे समझने–समझाने का एक बड़ा ही सुचिंतित आहलादकारी प्रयास किया है। इस संकलन में संकलित कविताएँ नई वैचारिकता की कविताएँ हैं। अनामिका कहती है– "कविता कम सुखन विधा है... उसका स्वभाव स्त्री स्वभाव से मिलता–जुलता है। वह बहुत ज्यादा नहीं बोलती और बोलती है तो इंटेंस इशारों में। उसका अपोरिया, उसकी ब्रह्म गाँठ खोल पाना, उसे डी कोड कर पाना उसी संवेदनशील धैर्य की माँग करता है जो किसी परेशान हाल वंचित के अवचेतन की गाँठ खोलने को अपेक्षित है।"

अनामिका इस सोच के साथ चलती है कि स्त्री मुक्ति का विरोध पितृसत्तात्मकता से है, पुरुष से नहीं। इसी कारण उनके काव्य संसार में ऐसे कितने ही पुरुष चरित्र बिखरे हैं जिन्हें वे पूरा स्नेह और सम्मान देती है इसी कारण उन्हें 'एक उदार सांस्कृतिक प्रवक्ता' कहा जाता है। वे इस पितृसत्ता को आह्वान करती है कि 'सुनो हमें अनहद की तरह'।

कवयित्री अनामिका ने हर वर्ग, नस्ल, आयु या जाति की स्त्री के सामाजिक, व्यक्तिगत व राजनीतिक त्रिकोण की सूक्ष्मता से जाँच पड़ताल की है। वे इस बात को लेकर पूरी तरह सजग दिखाई देती हैं कि स्त्रियां जितनी बाह्री दुनिया को अपने भीतर समेटे, उतना ही अपने भीतर की दुनिया का भी लगातार आत्मालोचन करती चलें। भीतरऔर बाहर के इस संतुलित दृष्टि अवलोकन को वह चुनौती के रूप में देखती हैं और कहती हैं–

"कहीं से भी शुरू हो सकती है कविता,

कहीं से भी उठ सकती है आवाज़"

उनका स्त्री विमर्श उस आधी आबादी का विमर्श है जो विमर्श करती नहीं जीती है। इसी आधी आबादी का अनंत कविता में रचा जाना अभी बाकी है, वही रच रही हैं अनामिका।

12.4 सारांश

अतः अनामिका भारतीय स्त्री के घरेलू जीवन और निकट परिवेश के अनुभवों से सामग्री लेकर अपनी कविताओं और कथा–साहित्य की दुनिया रचती हैं। यह दुनिया न तो छोटी है, न सरल, यह बात उनकी कविताओं में भी उतनी ही सफाई और समझ से व्यक्त होती है, जितनी उनके कथा–साहित्य में। वे आज के नारी–विमर्श के कई खास मुद्दों को उठाती हैं और उन्हें साहित्य के माध्यम से संवेदनशील बनाती हैं। अतः अनामिका का लेखन इस सन्दर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि उन्होंने गद्य और पद्य दोनों माध्यमों से अपने अनुभवों के कई आयामों को उद्‌घाटित करने की चेष्टा की है।

12.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. आसक्ति
2. स्तंभ
3. प्रस्फुटित
4. कामेच्छा
5. भावानुराग
6. आत्मालोचन
7. पितृसत्ता
8. उपभोगतावादी

9. अन्वेषण

10. पुनर्स्थापित

12.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) अनामिका के व्यक्तित्व पर चर्चा करें।

उत्तर) ....

....

....

....

प्र2) अनामिका की साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालें।

उत्तर) ....

....

....

....

12.7 पठनीय पुस्तकें

1. काव्य सुमन– सं. महेन्द्र कुलश्रेष्ठ

***

सन्धि–परिभाषा एवं भेद

13.0 रूपरेखा

13.1 उद्धेश्य

13.2 प्रस्तावना

13.3 सन्धि–परिभाषा एवं भेद

13.4 सारांश

13.5 कठिन शब्द

13.6 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

13.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

13.8 पठनीय पुस्तकें

13.1 उद्धेश्य

– प्रस्तुत पाठ के अध्ययनोपरांत आप शब्दों में प्रयुक्त सन्धि के ज्ञान को प्राप्त कर सकेंगे।

– सन्धि क्या है और इसका प्रयोग शब्द में किन स्थितियों में किस प्रकार होता है, इसकी पूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकेगें।

13.2 प्रस्तावना

भाषा एक व्यवस्था है जिसके माधयम से ध्वनि प्रतीकों द्वारा विचार करने और विचारों को आपस में संप्रेषित करने की सुविधा प्राप्त होती है। इसमें एक ध्यान देने योग्य बात यह है कि हम बोलने और सुनने में प्रयो तो ध्वनि

का करते हैं किन्तु संप्रेषण अर्थ का होता है, जबकि ध्वनियाँ स्वयं मे अर्थहीन होती है ध्वनियाँ विविध भाषिक स्वरों पर संरचित होकर वाक्य नामक संप्रेषणात्मक इकाई का निर्माण करती हैं। वाक्य में शब्द लगे होते हैं और शब्दों का अपना अर्थ तो होता है, किन्तु वे वाक्य में प्रयुक्त होकर ही संप्रेषणीय बन पाते है। जिन शब्दों के और अधिक सार्थक खण्ड़ नहीं किए जा सकते ,उन्हें मुल शब्द कहते हैं और जिन शब्दों में एक से अधिक सार्थक खण्ड़ मिले होते हैं उन्हें निर्मित/व्युत्पादित शब्द कहा जाता है।

निर्मित शब्दों में प्रयुक्त सार्थक घटकों की व्यवस्था उनकी शब्द संरचना है। हिन्दी की शब्द संरचना को समझने हेतु हिन्दी के निर्मित शब्दों में लगनें वाले सार्थक खण्डों और उनकी व्यवस्था का विश्लेषन किया जाता है। शब्द पर कई दृष्टियों से विचार किया जा सकता है जैसे – अर्थ की दृष्टि से, प्रकार्य की दृष्टि से, रुपिमिक संख्या की दृष्टि से और संरचना (निर्माण प्रकिया) की दृष्टि से। इसमें से निर्माण प्रक्रिया की दृष्टि से निर्मित शब्द के निम्नलिखित प्रकार किए जा सकते हैं। उपसर्गयुक्त शब्द, प्रत्यययुक्त शब्द,उपसर्ग और प्रत्यययुक्त शब्द,सामासिक शब्द,संधिकृत शब्द, पुनरूक्त शब्द, प्रतिध्वन्यात्मक शब्द, संक्षिप्त रुप, संकुचित शब्द, परिवर्णी शब्द तथा कतित शब्द। इस पाठ में अपकों संधिकृत शब्दों का परिचय दिया जाएगा।

13.3 सन्धि–परिभाषा एंव भेद

दो वर्णों के मेल से ध्वनि में जो विकार (परिवर्तन) उत्पन्न होता है, वह संधि कहलाती है। उदाहरण के लिए पुस्तकालय अर्थात पुस्तक और आलय इन दो शब्दों में पुस्तक का अंतिम वर्ण 'अ', आलय के प्रथम वर्ण 'आ' से मिल गया है। इस मिलन के कारण इन दोनों वर्णों में विकार उत्पन्न हुआ है और 'अ' तथा 'आ' मिलकर 'आ' हो गया है और यही संधि है।

दो शब्द या पद जब एक दुसरे के निकट आते हैं। तब उच्चारण की सुविधा के लिए पहले शब्द की अंतिम और दूसरे शब्द की प्रारभिक ध्वनि एक दूसरे से मिल जाती है। इस मिलावट से जो ध्वनि विकार उत्पन्न होता है वह संधि है। सरल शब्दों में कहें तो जब दो शब्द आपस में मिलकर कोई तीसरा शब्द बनाते हैं तब जो परिवर्तन होता है, उसे संधि कहते हैं।

यदि वर्णों के आपस में मिलने से उच्चारण एंव लेखन में कोई परिवर्तन नहीं होता है तो उसे संधि नमानकर 'संयोग' माना जाता है। जैसे–

दुर्+अवस्था = दुरवस्था

युग+बोध = युगबोध

अन्तर् +आत्मा = अन्तरात्मा

उपरोक्त वर्णों के योग से किसी प्रकार का ध्वनि परिवर्तन नहीं हुआ है। इसलिए इस योग को संधि न मानकर संयोग माना जाएगा।

जिन शब्दों के बीच संधि हुई हो उन्हें अलग–अलग करके संधि के पहले रुप में रखना संधि विच्छेद कहलाता हैं। जैसे–

उल्लास = उत् + लास

देवालय = देव + आलय

संधि के भेद :– संधि के तीन भेद हैं–

1) स्वर संधि 2) व्यंजन संधि 3) विसर्ग संधि

1) **स्वर संधि :–** जब स्वर के साथ स्वर (स्वर + स्वर) का मेल होता है तो इस मेल से होने वालें विकार या परिवर्तन को स्वर सन्धि कहते हैं। जैसे– महा + इन्द्र = महेन्द्र । स्वर संधि के पाँच भेद हैं–

स्वर संधि

दीर्घ संधि

अ, आ + अ, आ = आ

इ, ई + इ, ई = ई

उ, ऊ + उ, ऊ = ऊ

गुण संधि

अ, आ + इ, ई = ए

अ, आ + उ, ऊ = ओ

अ, आ +ऋ = अर्

वृद्धि सन्धि

अ, आ+ए, ऐ= ऐ

अ, आ + ओ, औ = औ

('ओ' भी हो सकता है)

यण् सन्धि

इ/ई, उ/ऊ, ऋ

य् व् र्

अयादि सन्धि

ए, ऐ, ओ, औ

अय् आय् अव् अप्

2) **दीर्घ स्वर सन्धि :–** किसी स्वर के ह्रस्व या दीर्घ रुप के बाद यदि उसी स्वर का ह्रस्व या दीर्घ रुप आए तो दोनों मिलकर दीर्घ हो जाते हैं। इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि यदि अ, इ, उ (ह्रस्व–दीर्घ) के बाद कोई समान स्वर आए तो दोनों समान स्वर मिलकर दीर्घ हो जाते है। आपकी समझ के लिए यहाँ कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं–

1. **अ + अ = आ**

परम + अर्थी = परमार्थी
राष्ट्र + अध्यक्ष = राष्ट्राध्यक्ष
बीज + अंकुर = बीजांकुर
गीत + अंजलि = गीतांजलि

2. **अ + आ = आ**

देव + आलय = देवालय
भय + आनक = भयानक
जल + आशय = जलाशय
मित + आहार = मिताहार

3. **आ + अ = आ**

निशा + अंत = निशांत
तथा + अपि = तथापि
दीक्षा + अंत = दीक्षांत
विद्या + अर्जन = विद्यार्जन

4. **आ + आ = आ**

महा + आशय = महाशय
द्राक्षा + आसव = द्राक्षासव
वार्ता + आलाप = वार्तालाप
क्रिया + आत्मक = क्रियात्मक

5. **इ + ई = ई**

प्रति + इत = प्रतीत
अभि+इष्ट = अभीष्ट
रवि + इंद्र = रवींद्र
अति + इत = अतीत

6. **इ + ई = ई**

परि + ईक्षित = परीक्षित
हरि + ईश = हरीश
परि + ईक्षण = परीक्षण
मुनि + ईश्वर = मुनीश्वर

7. **ई + इ = ई**

मही + इन्द्र = महीन्द्र
यती + इन्द्र = यतीन्द्र
सुधी +इन्द्र = सुधीन्द्र
शची + इन्द्र = शचीन्द्र

8. **ई + ई = ई**

रजनी + ईश = रजनीश
नारी + ईश्वर = नारीश्वर
मही + ईश = महीश
सती + ईश = सतीश

9.	**उ + उ = ऊ**	10.	**उ + ऊ = ऊ**
	भानु + उदय = भानूदय		लघु + ऊर्मि = लघूर्मि
	सु + उक्ति = सूक्ति		धातु + ऊष्मा = धातूष्मा
	मृत्यु + उपरांत =मृत्योपरांत		सिंधु + ऊर्मि = सिन्धूर्मि
	बहु + उद्देश्यीय = बहूद्देश्यीय		बहु + ऊर्जा = बहूर्जा
11.	**ऊ + उ = ऊ**	13.	**ऊ + ऊ = ऊ**
	वधू + उत्सव = वधूत्सव		चमू + ऊर्जा = चमूर्जा
	वधू + उल्लास = वधूल्लास		सरयू + ऊर्मि = सरयूर्मि
	भू + उपरि = भूपरि		भू + ऊर्ध्व = भूर्ध्व
	चमू (सेना) + उत्साह = चमूत्साह		भू + ऊष्मा = भूष्मा

2) **गुण स्वर सन्धि :–** यदि 'अ' या 'आ' के बाद इ/ई आता है तो दोनों के मिलने पर 'ए' और यदि अ/आ के बाद उ/ऊ आता है तो दोनों मिलकर 'ओ' और यदि अ/आ के बाद 'ऋ' आता है तो दोनो मिलकर 'अर्' हो जाते है। उदाहरण–

1.	**अ/आ + इ/ई = ए**	2.	**अ/आ + उ/ऊ = ओ**
	शुभ + इच्छा = शुभेच्छा		भाग्य + उदय = भाग्योदय
	राका +ईश = राकेश		नव + ऊढ़ा = नगेढ़ा
	देव + ईश = देवेश		महा + उत्सव = महोत्सव
	महा +इन्द्र = महेन्द्र		गंगा + ऊर्मि = गंगोर्मि
3.	**अ/आ + ऋ = अर्**		
	देव + ऋषि = देवर्षि		महा + ऋषि = महार्षि
	सप्त + ऋषि = सप्तर्षि		महा + ऋण = महार्ण

3) **वृद्धि स्वर सन्धि :–** यदि अ/आ के बाद ए/ऐ आए तो 'ऐ' और यदि अ/आ के बाद ओ/औ आता है तो दोनों मिलकर 'औ' हो जाते हैं। 'ऐ' और 'औ' के परिणामवाली वृद्धि संधि कहलाती है। उदाहरण–

1 **अ/आ + ए/ऐ = ऐ**	2. **अ/आ + ओ/औ = औ**
हित + एषी = हितैषी	जल + ओक = जलौक
विचार + ऐक्य = विचारैक्य	भाव + औचित्य = भावौचित्य
सदा + एव = सदैव	महा + ओजस्वी = महौजस्वी
महा + ऐश्वर्य = महैश्वर्य	महा + औषध = महौषध

4) **यण् स्वर सन्धि :–** इस सन्धि में जब इ/ई के साथ कोई अन्य स्वर हो तो 'य्' बन जाता है, जब उ/ऊ के साथ कोई अन्य स्वर हो तो 'व्' बन जाता है और जब 'ऋ' के साथ कोई अन्य स्वर हो तो 'र्' बन जाता है। यहाँ यह भी ध्यान योग्य तथ्य है कि 'यण्' सन्धि होने पर य् , व् , र् के पहले के व्यंजन भी स्वर रह्ति हो जाते है। उदाहरण–

1. **इ/ई + असमान स्वर = य्**	2. **उ/ऊ + असमान स्वर = व्**
अभि + अर्थी = अभ्यर्थी	अनु+अय = अन्वय
अभि + आगत = अभ्यागत	सु + आगत = स्वागत
प्रति + अर्पण = प्रत्यर्पण	अनु+इति = अन्विति
प्रति+उपकार = प्रत्युपकार	अनु + ईक्षण =अन्वीक्षण
नि+ऊन = न्यून	लघु+ओष्ठ = लघ्वोष्ठ
प्रति +एक = प्रत्येक	वधू + इष्ट = वध्विष्ट

3 **'ऋ' + असमान स्वर = र्**

मातृ + अंश = मात्रंश	पितृ + उपदेश = पित्रुपदेश
मातृ + इच्छा = मात्रिच्छा	पितृ + आनन्द = पित्रानन्द
पितृ + अंश = पित्रंश	मातृ + आदेश = मात्रादेश

5) **अयादि स्वर सन्धि :–** जब ए, ऐ,ओ, औ के बाद असमान स्वर आए तो इन स्वरों के स्थान पर क्रमशः अय्, आय्, अव् और आव् का आदेश हो जाता है। उदाहरण–

1.	**ए + अन्य स्वर = अय्**	2.	**ऐ + अन्य स्वर = आय्**
	ने + अन = नयन		नै + अक = नायक
	शे + अन = शयन		गै + इका = गायिका
	संचे + अ = संचय		विधै +अक = विधायक
	चे + अन = चयन		दै + अक = दायक
3.	**औ + अन्य स्वर = अव्**	4.	**औ + अन्य स्वर = आव्**
	शो + अ = शव		भौ + अक = भावक
	भो + अति = भवति		धौ + इका = धाविका
	श्रो + अक = श्रावक		नौ + अ = नाव
	पो + इत्र = पवित्र		प्रसौ + इका = प्रसाविका

2) **व्यंजन सन्धि**

जब किसी व्यंजन के साथ व्यंजन का अथवा स्वर का मेल होता है, वहाँ व्यंजन सन्धि मानी जाती है। व्यंजन सन्धि के प्रमुख नियम इस प्रकार हैं।–

1. **जश्त्व सन्धि (घोष व्यंजन सन्धि) :–** किसी भी वर्ग का पहला वर्ण + किसी भी वर्ग का तीसरा / चौथा वर्ण/स्वर/य,र,ल,व,ह हों तो पहला वर्ण अपने ही वर्ग के तीसरे वर्ण में परिवर्तित हो जाता है। सरल शब्दों में इस प्रकार भी कह सकते हैं कि यदि किसी अघोष व्यंजन के बाद कोई घोष व्यंजन या कोइ स्वर आए तो अघोष व्यंजन अपने घोष रुप में बदल जाता है। (याद रहे कि व्यंजन वर्गों के तीसरे, चोथे और पाँचवें व्यंजन घोष या संघोष हैं तथा पहले और दूसरे व्यंजन तथा विसर्ग अघोष हैं । समस्त स्वर भी घोष ध्वनियाँ हैं) जैसे–

क्/च्/ट्/त्/प् + किसी भी वर्ग का तीसरा/चौथा वर्ण य/र/ल/व/ह/ सभी स्वर
↓ ↓ ↓ ↓ ↓
ग् ज् ड् द् ब्

इस नियम के कुछ उदाहरण यहाँ दिए जा रहें हैं–

वाक् + ईश = वागीश

वाक् + जाल = वाग्जाल

अच + अन्त = अजन्त

अच + आदि = अजादि

अप् + ज = अब्ज(कमल)

षट्+राग = षड्राग

षट्+यंत्र = षडयंत्र

जगत् +ईश = जगदीश

तिप् + आदि = तिबादि

2. **चर्त्व सन्धि (अघोष व्यंजन सन्धि) :–** यदि हलन्त 'द्' के बाद क/त/थ/प/स/क्ष हो तो सन्धि करते समय 'द्' के स्थान पर 'त्' हो जाता है जैसे–

उद् + तीर्ण = उत्तीर्ण

उद् + कोच = उत्कोच (रिश्वत)

उद् + स्थान = उत्थान (स् का लोप)

उद् + सव = उत्सव

उद् + क्षिप्त =उत्क्षिप्त

आपद + काल = आपत्काल

तद् + सम = तत्सम

तद् + परायण = तत्परायण

तद्+ पर = तत्पर

3. **अनुनासिक व्यंजन सन्धि**

1. **पूर्व सवर्ण(अनुनासिक)सन्धि :–** यदि क्/च्/ट्/त्/द्/प् + किसी भी वर्ग का पाचँवा अक्षर हो विशेषतः न्/म् हो तो ये व्यंजन अपने वर्ग के पंचम वर्ण में बदल जाते हैं, जैसे–

क्/च्/ट्/त्/द्/प् + किसी भी वर्ग का पाँचवाँ अक्षर
↓ ↓ ↓ ↓ ↓ ↓
ङ् ञ् ण् न् न् म् (विशेषता : न् / म्)

उदाहरणः–

वाक् + मय = वाङ्मय

उद् + नति = उन्नति

अप् + मय = अम्मय

षट् + मुख = षण्मुख

सत् + मति = सन्मति

विद्वत् + मण्डली = विद्वन्मण्डली

नोट :– यदि 'द्' से पहले मूर्धन्य स्वर (ॠ) आता है तो 'द्' के स्थान पर 'न्' नहीं होकर 'ण्' हो जाता है। जैसे–

मृद् + मय = मृण्मय

मृद् + मूर्ति = मृण्मूर्ति

मृद् + मयी = मृण्मयी

2. **पर सवर्ण (अनुनासिक) सन्धि :–** यदि हलन्त 'म्' के बाद 'क' से लेकर 'म' तक का कोई वर्ण हो तो हलन्त 'म्' के स्थान पर '+' चिहन के आगे आने वाले वर्ण के वर्ग का पंचम वर्ण हो जाता है। लेखन (लिपि) में पंचम वर्ण के स्थान पर अनुस्वार (ऊपर बिंदु) भी मान्य है जैसे–

सम् + कलन = सङ्कलन (संकलन)

सम् + चित = सञ्चित (संचित)

सम् + घात = सञ्घात (संघात)

सम् + चालन = सञ्चालन (संचालन)

सम् + ताप = सन्ताप(संताप)

सम् + धि = सन्धि(संधि)

हलन्त 'म्' के तुरन्त बाद वर्ग का पंचमाक्षर (विशेषतः न/म) हो तो वहाँ 'म्' को अनुस्वार में नहीं बदला जाता बल्कि हलन्त 'म्' को आगे आने वाले पंचमाक्षर के समान वर्ण में बदल दिया जाता है। जैसे–

सम् + निहित = सन्निहित

सम् + न्यासी = सन्न्यासी

सम् + मोहन = सम्मोहन

सम् + मान = सम्मान

यदि हलन्त 'म्' के आगे य, र, ल, व, श, ष, स, ह, हो तो सन्धि करते समय हलन्त 'म्' अनुस्वार में ही बदलता है–

सम् + योग = संयोग	सम् + हार = संहार
सम् + वाद = संवाद	सम् + रचना = संरचना
सम् + शय = संशय	सम् + विधान = संविधान
सम् + सार = संसार	सम् + यम = संयम

यदि 'सम्' उपर्सग के आगे 'कृ' धातु से बनने वाले शब्द करण, कृति, कार, कृत आदि हों तो सन्धि करते समय 'हलन्त' 'म्' तो अनुस्वार हो जाता है साथ ही उपसर्ग एंव शब्द के बीच में दन्त्य 'स्' का आगमन हो जाता है। जैसे–

सम् + कृत = संस्कृत	सम् + कार = संस्कार
सम् + कर्ता = सस्कर्ता	सम् + करण = संस्करण
सम् + कृति = संस्कृति	सम् + कार्य = संस्कार्य

इसी तरह 'परि' उपसर्ग के आगे 'कृ' धातु से बनने बाले शब्द यथा कृत, कृति, कार, करण आदि आने पर उपसर्ग तथा शब्द के बीच में मूर्धन्य 'ष्' का आगम होता है। जैसे–

परि + कृत = परिष्कृत	परि + कार = परिष्कार
परि + कृति = परिष्कृति	परि + करण = परिष्करण
परि + कर्ता = परिष्कर्ता	परि + कार्य = परिष्कार्य

4. **त्/द् की सन्धि :–** त्/द् से हुई सन्धि के नियम इस प्रकार हैं–

(i) यदि त्/द के बाद 'च' या छ हो तो त्/द् का 'च' और यदि त्/द् के बाद 'ज' या 'झ' हो तो त्/द् का 'ज्' हो जाता है। जैसे–

उद् + चारण = उच्चारण	सत् + जन = सज्जन
सत् + चरित्र = सच्चरित्र	उद् + ज्वल = उज्ज्वल
उद् + छिन्न =उच्छिन्न	महत् + झंकार = महज्झंकार
उद् + छेद = उच्छेद	बहत् + झकार = बृहज्झंकार

(ii) यदि त्/द् के बाद 'ट' हो तो त्/द् का 'ट्' और यदि त्/द् के बाद 'ड' हो तो त्/द् का 'ड्' हो जाता है। जैसे–

तद् + टीका = तट्टीका	उद् +डयन = उड्डयन
बृहत + टीका = बृहट्टीका	भवत् + डमरु = भवड्डमरु

(iii) यदि त्/द् के बाद 'ल' हो तो त्/द् का 'ल्' हो जाता है।

जैसे–उद् + लेख = उल्लेख उद् + लास = उल्लास

तद् + लीन = तल्लीन विद्युत् + लेखा = विद्युल्लेखा

(iv) त्/द् के बाद 'ह' हो तो त्/द् का 'द्' और 'ह' का 'ध' हो जाता है। जैसेः–

उद्+हार = उद्धार/उद्धार तद् + हित = तद्धित/तद्धित

उद्+हरण =उद्धरण/उद्धरण पत् +हति =पद्धति/पद्धति

(v) यदि त्/द के बाद 'श' हो तो त्/द् का 'च्' और 'श' का 'छ' हो जाता है जैसे :–

उद् + श्वास = उच्छवास

सत् + शास्त्र =सच्छास्त्र

सत् + शासन =सच्छासन

इसके विच्छेद में ध्यान योग्य तथ्य यह है कि यदि किसी पद में डेढ़ वर्ण या दो अर्द्धवर्ण हों तो विच्छेद करते समय पहले आधे अक्षर के स्थान पर हलन्त त्/द् लिखना है। त्/द लगाने का नियम भी है–

त, उ, र, प के साथ 'द्' लगता है। जैसे –उद्, रद्, पद्, तद् इसी तरह 'स' के साथ 'त्' लगता है जैसे– सत्। अन्य कोई वर्ण हो तो इसके साथ भी 'त्' लिखा जाएगा।

5. **चागम सन्धि :–** किसी भी स्वर के आगे 'छ' वर्ण आने पर 'स्वर' तथा 'छ' के बीच में 'च्' का आगम हो जाता है। जैसे–

पद + छेद = पदच्छेद प्र + छन्न = प्रच्छन्न

वि + छेद =विच्छेद प्रति + छाया = प्रतिच्छाया

आ + छादन = आच्छादन तरु +छाया = तरुच्छाया

अनु + छेद = अनुच्छेद स्व+छन्द = स्वच्छन्द

6. **अहन् की सन्धि :–** यदि 'अहन्' के बाद 'र' हो तो सन्धि के समय 'अहन्' के स्थान पर 'अहो' हो जाता है। (अहन् + र = अहो) और अहन् के बाद यदि 'र' को छोड़कर अन्य वर्ण आए तो 'अहन्' के स्थान पर अहर्हो जाता है। (अहन +'र' को छोडकर अन्य वर्ण = अहर्)

जैसे :–

अहन् + रात्रि = अहोरात्रि	अहन् + निशा = अहर्निशा
अहन् + रूप = अहोरूप	अहन् + मुख = अहर्मुख

7. **मूर्धन्य व्यंजन सन्धि**

(i) यदि इ/उ स्वर के बाद 'स' हो तो दन्त्य 'स्' के स्थान पर मूर्धन्य 'ष्' , 'थ' का 'ठ' और 'न' का 'ण' हो जाता है। जैसे–

प्रति + स्था = प्रतिष्ठा	नि + स्नात = निष्णात
अनु + स्थान = अनुष्ठान	वि + सन्न = विषण्ण

(ii) यदि मूर्धन्य 'ष्' के बाद 'त' या 'थ' हो तो वे क्रमशः 'ट' या 'ठ' में बदल जाते हैं। जैसे –

सृष् + ति = सृष्टि	दृष् + ति = दृष्टि
वृष् + ति = वृष्टि	षष् + थ = षष्ठ

(iii) यदि 'न्' से पहले इ, ऋ, र्, ष् हो तो 'न्' के स्थान पर 'ण्' हो जाता है। जैसे–

ऋ + न = ऋण	प्र + न = प्रण
उष् + न = उष्ण	प्र + मान = प्रमाण
परि + नय = परिणय	तृष् + ना = तृष्णा

8. **विशिष्ट सन्धियाँ : (व्यंजन लोप सन्धि)**

हलन्त 'न्' के बाद कोई भी स्वर/वर्ण हो तो 'न्' का लोप हो जाता है। साथ ही हलन्त 'क्' के बाद 'ह' हो तो 'क्' का 'ग्' और 'ह' का 'घ' हो जाता है। उदाहरणः–

युवन् + राज = युवराज

युवन् + अवस्था = युवावस्था

राजन् + गृह = राजगृह

वाक् + हरि = वाग्धरि

9. विसर्ग सन्धि :–

जब विसर्ग के साथ किसी व्यंजन अथवा स्वर का मेल होने से कोई विकार उत्पन्न होता है वहाँ विसर्ग सन्धि मानी जाती है। जैसे मनः+बल–अनोबल। सामान्यतः विसर्ग सन्धि के तीन उपभेद माने जाते हैंः–

1) सत्व विसर्ग सन्धि 2) उत्व विसर्ग सन्धि 3) रुत्व विसर्ग सन्धि

1) सत्व विसर्ग सन्धि :– इस सन्धि में छः नियम हैंः–

1. यदि विसर्ग के साथ च्/छ्/श्/का मेल हो रहा हो तो विसर्ग (:) के स्थान पर तालव्य 'श्' हो जाता है। जैसे–

ज्योतिः + चक्र = ज्योतिश्चक्र यशः + शेष = यशश्शेष/यशःशेष

मनः + चेतना = मनश्चेतना दुः + छल = दुश्छल

2. यदि विसर्ग के साथ त्/थ्/स् का मेल हो तो विसर्ग के स्थान पर दन्त्य 'स्' हो जाता है। जैसे–

नमः + ते = नमस्ते बहिः + थल = बहिस्थल

पुनः + स्मरण= पुनस्स्मरण/पुनःस्मरण दुः + तर =दुस्तर

निः + सार = निस्सार मरुः + थल = मरुस्थल

3. यदि विसर्ग के साथ ट्/ठ्/ष् का मेल हो तो विसर्ग के स्थान पर मूर्धन्य 'ष्' हो जाता है। जैसे–

धनुः + टंकार = धनुष्टंकार

निः + ठुर = निष्ठुर

चतुः + षष्टि = चतुषष्टि (चौसठ)

4. यदि विसर्ग से पहले इ/उ स्वर तथा बाद में क्/प्/म् हो तो विसर्ग के स्थान पर मूर्धन्य 'ष्' हो जाता है। जैसे –

निः + काम = निष्काम वपुः + मान = वपुष्मान

चतुः + पाद = चतुष्पाद

5. यदि विसर्ग से पहले अ/आ स्वर और बाद में क्/प्/फ् हो तो सन्धि होने पर भी विसर्ग ज्यों का त्यों बना रहता है। अर्थात सन्धि और सन्धि विच्छेद में कोई अन्तर नहीं होता है। जैसे–

अन्तः + करण = अन्त : करण

अधः + पतन = अध : पतन

पुनः + फलित = पुन : फलित

6. यदि विसर्ग से पहले 'अ' स्वर हो तथा विसर्ग के बाद 'अ' के अतिरिक्त अन्य स्वर हो तो सन्धि करते समय विसर्ग का लोप हो जाता है, अन्य कोई परिवर्तन नहीं होता है। जैसे–

अतः+ एव = अतएव पयः + आदि = पयआदि

यशः + इच्छा = यशइच्छा मनः + उच्छेद = मनउच्छेद

ततः + एव = ततएव

2) उत्व विसर्ग सन्धि :–

यदि विसर्ग से पहले 'अ' स्वर हो तथा विसर्ग के बाद 'अ' स्वर/कोई भी घोष वर्ण (वर्ण का तीसरा चौथा, पाँचवाँ वर्ण /य/र/ल/व/ह हो तो सन्धि करने पर विसर्ग के स्थान पर 'ओ' हो जाता है। बाद में 'अ' होने पर 'अ' का लोप हो जाता है। जैसे–

मनः + अभिलाषा = मनोभिलाषा

तेजः + मय = तेजोमय

मनः + दशा = मनोदशा

सरः + ज = सरोज

मनः + रंजन = मनोरंजन

सरः + वर = सरोवर

यशः + भुमि = यशोभूमि

मनः + विज्ञान = मनोविज्ञान

तमः + गुण = तमोगुण

मनः + नीत = मनोनीत

3) रुत्व विसर्ग सन्धि :–

यदि विसर्ग से पहले 'अ' के अतिरिक्त अन्य कोई स्वर हो तथा विसर्ग के बाद कोई भी स्वर/ कोई भी घोष वर्ण/ य/व/ह हो तो विसर्ग के स्थान पर 'र्' हो जाता है। जैसे–

बहिः + आक्रमण = बहिराक्रमण

धनुः + वेद = धनुर्वेद

आशीः + वाद = आशीर्वाद

आयुः + वेद = आयुर्वेद

ज्योतीः + मय = ज्योतिर्मय

13.4 सांराश

प्रिय पाठको इस पाठ से आपको सन्धि के पूर्ण नियमों की जानकारी प्राप्त हो चुकी है। सन्धि की पूर्ण जान्कारी होने के फलस्वरुप आप भविष्य में हिन्दी के शब्द निर्माण को भली–भाँति जानने के साथ शब्द निर्माण भी कर सकते हैं।

13.5 कठिन शब्द

1. संरचित
2. संप्रेषणात्मक
3. व्युत्पादित
4. रुपिमिक
5. ह्रस्व
6. घोष
7. अघोष
8. अनुनासिक
9. विसर्ग

10. वर्ण

13.6 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र3) विसर्ग सन्धि के कितने भेद हैं?

उ0) तीन

प्र4) दीर्घ सन्धि किस सन्धि के अन्तर्गत आती है।

उ0) स्वर सन्धि

प्र5) राकेश में कौन–सी सन्धि है।

उ0) गुण स्वर सन्धि

प्र6) 'नयन' में कौन–सी सन्धि हुई है?

उ0) अयादि स्वर सन्धि।

प्र7) 'वागीश' का सन्धि–विच्छेंद कीजिए।

उ0) वाक्+ईश

प्र8) 'उत्सव' का सन्धि–विच्छेद कीजिए।

उ0) उद्+सव

प्र9) 'युवन+राज' की सन्धि कीजिए।

उ0) युवराज

प्र10) 'नमस्ते' में कौन–सी सन्धि हुई है।

उ0) सत्व विसर्ग सन्धि

13.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) सन्धि किसे कहते हैं?

....

....

....

प्र2) स्वर सन्धि क्या होती है?

....

....

....

प्र3) व्यंजन सन्धि किसे कहते हैं?

....

....

....

प्र4) विसर्ग सन्धि किसे कहते है?

....

....

....

....

13.8 पठनीय पुस्तकें

1. सम्पूर्ण हिन्दी व्याकरण और रचना– डॉ. अरविन्द कुमार

2. परिष्कार व्याख्याता– हिन्दी – डॉ. राघव प्रकाश, डॉ. चतुर सिंह, डॉ. सविता पाईवाल

***

पत्र लेखन तथा अनेक शब्दों के लिए एक शब्द

14.0 रूपरेखा

14.1 उद्देश्य

14.2 प्रस्तावना

14.3 पत्र लेखन

14.4 अनेक शब्दों के लिए एक शब्द

14.5 सारांश

14.6 कठिन शब्द

14.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

14.8 आभ्यासार्थ प्रश्न

14.9 पठनीय पुस्तकें

14.1 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन उपरान्त आप–

– पत्र क्या है, इसकी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

– पत्र कितने प्रकार के होते हैं, इससे अवगत होंगे।

– पत्र लिखने की प्रक्रिया को जान सकेंगे।

–	अनेक शब्दों के लिए दिए गए एक शब्द से परिचित होंगे।

14.2 प्रस्तावना

पत्र–लेखन की कला अत्यन्त चिरपरिचित कला है। इसका सम्बन्ध मानव जीवन की विकसित प्रगति के साथ जुड़ा है। पूर्व समय से ही इस कला के दर्शन मानव के आपसी व्यवहार से होते हैं। किसी व्यक्ति के व्यक्तिगत रूप को समझने हेतु उसके द्वारा लिखित पत्रों का सहारा लेना पड़ता है क्योंकि इन्हीं पत्रों के माध्यम से उसके जीवन का यथार्थ रूप दृष्टिगोचर होता है। पत्र से ही व्यक्ति की भावनाएँ, मानसिकता, आकांक्षाएँ, उसके विचार–विमर्श, उसके व्यकितगत व्यवहार तथा अन्य प्रवृत्तियाँ स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित होती रहती हैं।

पत्र–लेखन के लिए आवश्यक है कि इसका लेखक इस कला का विशेष ज्ञाता हो। वह इस कला में जितना दक्ष व निपुण होगा, उतना ही उसका पत्राचार आत्मीयजनों, पारिवारिक सदस्यों, अष्ट–मित्रों, व्यवसायिकों तथा कार्यालयों को सरलतापूर्वक अपनी ओर आकर्षित करने में सफल हो सकेगा। पत्र लेखन की कौशलता से वह हर एक क्षेत्र में निरन्तर प्रगतिशील होता रहेगा।

हिंदी भाषा में अनेक शब्दों के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग कर सकते हैं। अर्थात हिन्दी भाषा में कई शब्दों की जगह पर एक शब्द बोलकर/लिखकर भाषा को प्रभावशाली बनाया जा सकता है। हिंदी भाषा में अनेक शब्दों के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग करने से वाक्य के भाव को व्यक्त किया जा सकता है। जिसमें वाक्य संक्षिप्त तो होता है लेकिन अर्थ ग्रहन में कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

14.3 पत्र लेखन

पत्र लेखन एक रोचक कला है। अभिव्यक्ति के समस्त लिखित साधनों में पत्र आज भी सबसे प्रमुख, शक्तिशाली, प्रभावपूर्ण और मनोरम स्थान रखता है। इस कला के लिए बुद्धि और ज्ञान की परिपक्वता, विचारों की विशालता, विषय का ज्ञान, अभिव्यक्ति की शक्ति और भाषा पर नियंत्रण की आवश्यकता होती है। पत्र लेखन कला से परिचित होने के लिए सर्वप्रथम पत्र क्या होता है, इसकी जानकारी प्राप्त करना अति आवश्यक है।

पत्र :–

लिखित रूप में अपने मन के भावों एवं विचारों को प्रकट करने का माध्यम 'पत्र' है। 'पत्र' का शाब्दिक अर्थ है– 'ऐसा कागज़ जिस पर कोई बात लिखी अथवा छपी हो।' पत्र के द्वारा व्यक्ति अपनी बातों को दूसरों तक लिखकर

पहुँचाता है। हम पत्र को अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम भी कह सकते हैं। व्यक्ति जिन बातों को प्रत्यक्ष में मौखिक रूप से कहने में संकोच करता है, उन सभी बातों को वह पत्र के माध्यम से लिखित रूप में खुलकर अभिव्यक्त करता है। दूर रहने वाले अपने संबंधियों अथवा मित्रों की कुशलता जानने के लिए तथा अपनी कुशलता का समाचार देने के लिए पत्र–व्यवहार करते हैं। साधारण शब्दों में कहें तो जिन व्यक्तियों व घनिष्ठ सज्जनों के पास हमारी आवाज़ नहीं पहुँच सकती, उन्हें हम लिखित कला के द्वारा जो सन्देश पहुँचाते हैं, उसी का नाम 'पत्र' है किन्तु आज पत्र–लेखन के क्षेत्र में प्रार्थना–पत्र, अभिनन्दन–पत्र, लिखित शिकायत, निजी, व्यापारिक आदि अन्य रूप सम्मिलित कर लिए गए हैं।

अच्छे पत्र की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं–

1) **प्रभावोत्पादकता :–** किसी भी पत्र का प्रथम गुण उसकी प्रभावोत्पादकता होती है। जो पत्र अपने पाठक को प्रभावित नहीं करते वे जल्दी ही रद्दी की टोकरी में चले जाते हैं। उनका लिखा जाना और न लिखा जाना– दोनों बराबर है। अच्छा पत्र लेखक वही है जो अपने विचार प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत कर सके। इसके लिए जरूरी है कि वह जो बात पत्र में लिखना चाहता है उस पर पहले गम्भीरता से विचार कर ले। विचार उपरान्त उसे इस ढंग से प्रस्तुत करे कि पढ़ने वाले पर उसका अनुकूल प्रभाव हो।

2) **विचारों की सुस्पष्टता** :– पत्र में लेखक के विचार सुस्पष्ट और सरल होने चाहिए। कहीं भी पाण्डित्य–प्रदर्शन की चेष्टा नहीं होनी चाहिए। न ही उसमें बनावटीपन हो और न ही विचार ग्रहण में कठिनाई।

3) **संक्षेप और सम्पूर्णता** :– पत्र अधिक लम्बा न होकर संक्षिप्तता में सम्पूर्णता लिए होना चाहिए। उसमें अतिशयोक्ति, वाग्जाल और विस्तृत विवरण के लिए कोई स्थान न हो। एक बात को दुहराने से बचना चाहिए। मुख्य बातें आरम्भ में लिखने के पश्चात् प्रत्येक बात क्रम से लिखनी चाहिए ताकि कोई भी आवश्यक तथ्य छूटने न पाएं।

4) **सरल भाषा शैली** :– पत्र की भाषा साधारणतः सरल और बोलचाल की होनी चाहिए। शब्दों के प्रयोग में सावधानी रखते हुए उपयुक्त, सटीक, सरल और मधुर शब्दों का प्रयोग करना चाहिए। सभी बातों को सरल ढंग से स्पष्ट और प्रत्यक्ष रूप से लिखना चाहिए क्योंकि बातों को घुमा–फिराकर लिखना पत्र का दोष समझा जाएगा।

5) **बाहरी सजावट** :– पत्र की बाहरी सजावट से तात्पर्य यह है कि–

– उसका कागज़ सम्भवतः अच्छा होना चाहिए।

– लिखावट सुन्दर, साफ और पुष्ट हो।

– विरामादि चिह्नों का प्रयोग यथास्थान किया जाए।

– शीर्षक, तिथि, अभिवादन, अनुच्छेद और अन्त अपने–अपने स्थान पर क्रमानुसार होना चाहिए।

– विषय–वस्तु के अनुपात से पत्र का कागज़ लम्बा–चौड़ा होना चाहिए।

6) **उद्देश्यपूर्ण** :– पत्र इस प्रकार लिखा जाना चाहिए जिसमें पाठक की हर जिज्ञासा शान्त हो जाए। पत्र अधूरा नहीं होना चाहिए। पत्र में जिन बातों का उल्लेख किया जाना निश्चित हो उसका उल्लेख पत्र में निश्चिततौर पर किया जाना चाहिए। पत्र पूरा होने पर उसे एक बार पुनः पढ़ लेना चाहिए।

पत्र लेखन की प्रविधि –

1) **प्रेषक का नाम व पता** :–व्यवसायिक पत्रों में सबसे ऊपर लिखने वाले का नाम तथा पता दिया होता है ताकि प्राप्तकर्ता को पत्र देखते ही ज्ञात हो जाए कि वह पत्र किसने भेजा है तथा कहाँ से आया है। प्रेषक का नाम व पता ऊपर की ओर बायें कोने में आता है। पत्र के नीचे दूरभाषा नंबर और उसके नीचे दिनांक के लिए स्थान निर्धारित रहता है। सरकारी पत्रों में इसी स्थान पर पत्रिका संदर्भ रहता है।

2) **प्राप्तकर्ता का नाम व पता** :– प्रेषक के बाद बाईं ओर ही प्राप्तकर्ता का नाम और पता लिखा होता है। नाम के स्थान पर कभी–कभी केवल पद नाम भी लिखते हैं। कभी–कभी नाम और पदनाम दोनों लिखे जाते है। पाने वाले का विवरण इस प्रकार होना चाहिए– नाम, पदनाम, कार्यालय का नाम, स्थान, शहर, जिला एवं पिन कोड।

3) **विषय संकेत** :– औपचारिक पत्रों में पाने वाले का नाम और पते के बाद बाईं ओर विषय शीर्षक देकर लिखना चाहिए। इससे प्राप्तकर्ता को पत्र देखकर उसके विषय की जानकारी हो जाती है।

4) **संबोधन** :– विषय के पश्चात् बाईं ओर संबोधन सूचक शब्द का प्रयोग किया जाता है। व्यक्तिगत पत्र में प्रिय लिखकर प्राप्तकर्ता का नाम या उपनाम दिया जाता है। अपने से बड़ों के लिए प्रिय के स्थान पर पूज्य, मान्यवर आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है। सरकारी पत्रों में प्रिय महोदय या प्रिय महोदया लिखा जाता है।

5) **पत्र की मुख्य सामग्री** :– संबोधन के पश्चात् पत्र की मूल सामग्री लिखी जाती है। आवश्यकता, समय तथा परिस्थिति के अनुसार विषय में परिवर्तन होता रहता है।

6) समापन सूचक शब्द :– पत्र की समाप्ति पर प्रेषक प्राप्तकर्त्ता से अपने संबंध के अनुसार समापन सूचक शब्दों का प्रयोग कर पत्र समाप्त करता है। जैसे– बड़ों के लिए आपका आज्ञाकारी, आपका प्रिय, बराबरी वालों के लिए स्नेहशील, स्नेही और छोटों के लिए शुभचिंतक, शुभकांक्षी जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

7) हस्ताक्षर तथा नाम :– समापन शब्द के ठीक नीचे प्रेषक के हस्ताक्षर तथा पूरा नाम व पता दिया जाता है। हस्ताक्षर प्रायः सुपाठ्य नहीं होने के कारण नाम भी लिखना चाहिए।

8) संलग्नक :– सरकारी पत्रों में प्रायः मूल पत्र के साथ अन्य आवश्यक कागजात भी भेजे जाते हैं। उन्हें इस पत्र के संलग्न पत्र या संलग्नक कहते हैं। संलग्न पत्र में 'संलग्नक' शीर्षक लिखकर उसके आगे संख्या 1, 2, 3, 4, 5 के द्वारा संकेत दिया जाता है।

9) पुनश्च :– कभी–कभी पत्र लिखते समय मूल सामग्री में से किसी महत्वपूर्ण अंश के छूट जाने पर इसका प्रयोग किया जाता है। 'समापन सूचक शब्द', हस्ताक्षर, संलग्नक आदि सब कुछ लिखने के बाद कागज़ पर अंत में सबसे नीचे या उसके पृष्ठ भाग पर पुनश्च शीर्षक देकर छूटी हुई सामग्री लिखकर एक बार पुनः स्थापित कर दिए जाते हैं।

10) प्रेषक व प्राप्तकर्ता का पता :– लिफाफे/पोस्टकार्ड/अंतर्देशीय पत्र के बाहर पत्र प्रेषक को अपना नाम लिखना चाहिए। यदि पत्र में ऊपर पूर्ण पता नहीं दिया गया है तो उसे यहाँ लिख देना चाहिए। साथ ही पत्र प्राप्तकर्ता का पता भी बाहर लिफाफे/पोस्टकार्ड/अंतर्देशीय पत्र पर लिख देना चाहिए। पता लिखते समय ध्यान रखना चाहिए कि पता साफ और पूरा लिखा गया हो। पते में सबसे पहले प्राप्तकर्ता का नाम, फिर दूसरी पंक्ति में मकान नं, सड़क, गली, मुहल्ले और शहर का नाम लिखना चाहिए। समय से पत्र पहुँचे, इसके लिए पिनकोड का चलन हो गया है। अतः नगर के साथ–साथ पिनकोड और राज्य भी लिख दें।

पत्रों के प्रकार :–

मुख्य रूप से पत्रों को निम्नलिखित दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है–

1) औपचारिक पत्र

2) अनौपचारिक पत्र

1) **औपचारिक पत्र** :– यह पत्राचार उन लोगों के साथ किया जाता है जिनसे हमारा कोई निजी परिचय नहीं रहता है। इनमें औपचारिकता और कथ्य संदेश ही मुख्य होता है तथा आत्मीयता गौण होती है। इनमें तथ्यों और सूचनाओं को अधिक महत्व दिया जाता है। यह पत्र विशिष्ट नियमों में आबद्ध होते हैं तथा इनकी परिधि बहुत ही व्यापक होती है। इसके अनेकानेक रूप संभव हैं, जैसे सरकारी पत्र, अर्ध सरकारी पत्र, व्यवसायिक पत्र, पूछताछ पत्र, संपादक के नाम पत्र, अनुरोध पत्र, शोक पत्र, आवेदन पत्र, शिकायत पत्र, निमंत्रण पत्र, विज्ञापन पत्र, अनुस्मारक, स्वीकृति पत्र, बधाई पत्र, शुभकामना पत्र आदि। अध्ययन की सुविधा अनुसार औपचारिक–पत्रों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है– प्रार्थना–पत्र, कार्यालयी–पत्र और व्यवसायिक पत्र।

क) **प्रार्थना पत्र :–** जिन पत्रों में निवेदन अथवा प्रार्थना की जाती है, वे 'प्रार्थना–पत्र' कहलाते हैं। ये अवकाश, शिकायत, सुधार, आवेदन के लिए लिखे जाते हैं।

ख) **कार्यालयी–पत्र :–** जो पत्र कार्यालयी काम–काज के लिए लिखे जाते हैं, वे 'कार्यालयी–पत्र' कहलाते हैं। ये सरकारी अधिकारी, स्कूल और कॉलेज के प्रधानाध्यापकों और प्राचार्यों को लिखे जाते हैं। दूसे शब्दों में कहें तो इन पत्रों में राजकीय तथा सहायता प्राप्त संस्थानों एवं कार्यालयों द्वारा किसी व्यक्ति संस्था और अन्य कार्यालयों को लिखे जाते हैं।

ग) **व्यवसायिक पत्र** :– व्यवसाय में सामान खरीदने व बेचने अथवा रुपयों के लेन–देन के लिए जो पत्र लिखे जाते हैं, उन्हें 'व्यवसायिक पत्र' कहते हैं। ये दुकानदार, प्रकाशक, व्यापारी, कंपनी आदि को लिखे गए पत्र हेते हैं।

औपचारिक पत्र लिखते समय कुछ ध्यान देने योग्य बातें हैं–

1. औपचारिक–पत्र नियमों में बंधे हुए होते हैं।
2. इन पत्रों में नपी–तुली भाषा का प्रयोग किया जाता है।
3. पत्र का आरंभ व अंत प्रभावशाली होना चाहिए।
4. पत्र की भाषा– सरल, लेख– स्पष्ट व सुंदर होना चाहिए।
5. यदि आप कक्षा अथवा परीक्षा भवन से पत्र लिख रहे हैं तो कक्षा अथवा परीक्षा भवन (अपने पते के स्थान पर) तथा क.ख.ग. (अपने नाम के स्थान पर) लिखना चाहिए।
6. पत्र पृष्ठ के बाईं ओर से हाशिए के साथ मिलाकर लिखें।

7. पत्र एक पृष्ठ में ही लिखने का प्रयास करें ताकि तारतम्यता बनी रहे।

8. प्रधानाचार्य को पत्र लिखते समय प्रेषक के स्थान पर अपना नाम, कक्षा व दिनांक लिखना चाहिए।

औपचारिक–पत्र के निम्नलिखित सात अंग होते हैं–

1. पत्र प्रापक का पदनाम तथा पता ।
2. **विषय :–** जिसके बारे में पत्र लिखा जा रहा है, उसे केवल एक ही वाक्य में शब्द–संकेतों में लिखें।
3. **संबोधन :–** जिसे पत्र लिखा जा रहा है– महोदय, माननीय आदि।
4. **विषय–वस्तु :–** इसे दो अनुच्छेदों में लिखें। पहला अनुच्छेद अपनी समस्या के बारे में और दूसरा आप उनसे क्या अपेक्षा रखते हैं, उसे लिखें तथा धन्यवाद के साथ समाप्त करें।
5. **हस्ताक्षर व नाम :–** भवदीय/भवदीया के नीचे अपने हस्ताक्षर करें तथा उसके नीचे अपना नाम लिखें।
6. **प्रेषक का पता :–** मुहल्ला/इलाका, शहर, पिनकोड।
7. **दिनांक :–** जिस दिन पत्र लिखा जाए उस दिन की तिथि।

औपचारिक–पत्र का प्रारूप

प्रधानाचार्य को प्रार्थना–पत्र

प्रधानाचार्य,

विद्यालय का नाम व पता......................

विषय : (पत्र लिखने का कारण)।

माननीय महोदय,

पहला अनुच्छेद ....

दूसरा अनुच्छेद ....

आपका आज्ञाकारी शिष्य,

क.ख.ग

कक्षा ....

दिनांक ....

व्यवसायिक–पत्र

प्रेषक का पता ....

दिनांक ....

पत्र प्रापक का पदनाम,

पता......................

विषय : (पत्र लिखने का कारण)।

महोदय,

पहला अनुच्छेद ....

दूसरा अनुच्छेद ....

भवदीय

अपना नाम

कार्यालयी पत्र या सरकारी पत्र

प्रेषक या कार्यालय .... पत्र संख्या......................

प्रेषक का पद और पता...................... दिनांक ....

सेवा में

प्राप्तकर्ता का पद......................

पता ....

विषय– पत्र लिखने का कारण।

महोदय,

अनुच्छेद–1 ....

अनुच्छेद–2 ....

आपका विश्वासपात्र या सदाभावी

क.ख.ग

संलग्र पत्र सूची

संलग्र : (1) ....

(2) ....
(3) ....
पृष्ठांकन :
प्रतिलिपि निम्नलिखित को प्रेषित है :
(1) ....
(2) ....
(3) ....

औपचारिक पत्रों के कुछ उदाहरण :–

(1) प्रधानाचार्य को छात्रवृत्ति हेतु आवेदन पत्र

सेवा में

प्रधानाचार्य

राजकीय महाविद्यालय

जम्मू।

विषय– छात्रवृत्ति हेतु आवेदन।

मान्यवर

सविनय निवेदन है कि मैं आपके महाविद्यालय के प्रथम समेस्टर की विद्यार्थी हूँ। मेरे पिताजी बहुत दिनों से बीमार चल रहे हैं। पेंशन की राशि से उनका उपचार ही मुश्किल से चल पाता है। घर खर्च हेतु माता जी सिलई करती हैं। परिवार के छः लोगों में इसके अतिरिक्त कमाई का और कोई साधन नहीं है। हम चार भाई–बहन सभी पढ़ने वाले हैं। तेजी से बढ़ती हुई महँगाई और पढ़ाई के प्रति रूचि के कारण आपसे निवेदन करने के लिए विवश हो गई हूँ।

मैं अभी तक सभी कक्षाओं में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुई हूँ। खेल और निबंध प्रतियोगिताओं मेंभी कई पुरस्कार जीत चुकी हूँ। अतः आपसे करबद्ध प्रार्थना है कि मेरे परिवार की आर्थिक स्थिति को देखते हुए मुझे छात्रवृत्ति प्रदान कर कृतार्थ करें। आपकी कृपा दृष्टि मुझे इस दिशा में साहस प्रदान करेगी।

सधन्यवाद

आपकी आज्ञाकारी शिष्य

क.ख.ग

प्रथम समेस्टर

दिनांक ....

(2) पुस्तक मँगवाने के लिए प्रकाशक को लिखा गया पत्र।

अलवर पुस्तक प्रकाशन

(प्रमुख पुस्तक विक्रेता)

अलवर

दिनांक ....

सेवा में

व्यावस्थापक

संजय पुस्तक मन्दिर

जयपुर।

प्रिय महोदय,

कृपा करके निम्नलिखित पुस्तकें रेलवे पार्सल द्वारा भेजने का कष्ट करें :–

1.	सामान्य हिन्दी	–	15 प्रतियाँ
2.	महाकवि निराला	–	15 प्रतियाँ
3.	कबीर वाणी	–	10 प्रतियाँ
4.	कामायनी की टीका	–	10 प्रतियाँ

साथ में अपना नया सूची–पत्र भी भेजने का कष्ट करें।

भवदीय

क.ख.ग

क्रय–विक्रय अधिकारी

(3) **सचिव, कृषिमंत्रालय, भारत सरकार की ओर से मुख्य सचिव, हरियाणा सरकार को पत्र लिखकर जुलाई माह में भीषण वर्षा से हुई हानि का विवरण मांगना।**

पत्रांक : 3/745/03 (कृषि)

प्रेषक

दिनांक ....

सचिव, कृषि मंत्रालय

भारत सरकार

नई दिल्ली।

सेवा में

मुख्य सचिव

हरियाणा सरकार

चण्डीगढ़

विषय : वर्षा से हुई हानि का विवरण

महोदय,

आपको यह सूचित करने का निर्देश हुआ है कि इस माह जुलाई में हुई भीषण वर्षा से कृषि को विशेष हानि हुई। इससे कईं प्रदेश प्रभावित हुए हैं। भारत सरकार इस पर गंभीरता से विचार कर रही है।

आप यथाशीघ्र पूरे हरियाणा में कृषि को हुई हानि का जिले के आधार पर विवरण तैयार कर भेजें, जिससे कृषकों के सहयोग हेतु सरकार अपेक्षित निर्णय ले सके।

आपका सदाभावी,

क.ख.ग

सचिव, भारत सरकार

(4) **औपचारिक पत्र :–** इस प्रकार के पत्रों में पत्र लिखने वाले और पत्र को प्राप्त करने वाले के मध्य मधुर सम्बन्ध होता है, इसलिए इन पत्रों में व्यक्तिगत सुख–दुख का विवरण होता है। ऐसे पत्र अपने परिवार के लोगों, मित्रों तथा निकट संबंधियों को लिखे जाते हैं। इनकी भाषा और शैली, सम्बन्ध के आधार पर निर्धारित की जाती है।

अनौपचारिक पत्र का प्रारूप

प्रेषक का पता ....
दिनांक ....
सम्बोधन सहित प्राप्तकर्ता का नाम
पत्र की मुख्य सामग्री
....
....
समापन सूचक शब्द
आपका आज्ञाकारी/आपका प्रिय/स्नेही/शुभचिंतक आदि शब्द
हस्ताक्षर तथा प्रेषक का नाम

अनौपचारिक पत्रों में निम्नलिखित प्रकार के पत्र रखे जा सकते हैं–

1. बधाई पत्र
2. शुभकामना पत्र
3. निमंत्रण पत्र
4. विशेष अवसरों पर लिखे गए पत्र
5. सांत्वना पत्र
6. किसी प्रकार की जानकारी देने के लिए पत्र
7. कोई सलाह आदि देने के लिए पत्र

अनौचारिक पत्र लिखते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए–

1. भाषा सरल व स्पष्ट हो।
2. पत्र लेखक तथा प्रापक की आयु, योग्यता, पद आदि का ध्यान रखा जाना चाहिए।
3. पत्र में लिखी बात संक्षिप्त होनी चाहिए।
4. पत्र का आरंभ व अन्त प्रभावशाली होना चाहिए।

5. पत्र प्रेषक व प्रापक का पता साफ व स्पष्ट लिखा होना चाहिए।

6. कक्षा/परीक्षा भवन से पत्र लिखते समय अपने नाम के स्थान पर क.ख.ग. तथा पते के स्थान पर कक्षा/परीक्षा भवन लिखना चाहिए।

7. अपना पता और दिनांक लिखने के बाद एक पंक्ति छोड़कर लिखना चाहिए।

8. पत्र में काट–छांट नहीं होनी चाहिए।

अनौपचारिक पत्र के उदाहरण :–

(1) छोटे भाई को पत्र लिखिए जिसमें मोबाईल की उपयोगिता का वर्णन हो।

परीक्षा भवन

दिनांक ....

प्रिय श्याम

स्नेह!

तुम्हारा पत्र मिला। पढ़कर अच्छा लगा कि तुमने मोबाइल ले लिया है। अब हमारा परस्पर संपर्क हो सकेगा, परन्तु इसका दुरुपयोग नहीं होना चाहिए। मोबाइल तुम्हारा ऐसा साथी है, जो तुम्हारी सहायता कर सकता है। इससे संदेश भेजे जा सकते हैं, संगीत सुना जा सकता है, फोटो खींच सकते हैं, कैलकुलेटर का काम ले सकते हैं अनेक व्यक्तियों के सम्पर्क नम्बर दर्ज कर सकते हैं, विदेशी मुद्रा का विनियम, कैलेंडर, समय आदि सभी सुविधाएँ इस पर उपलब्ध हैं। शिक्षा से सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करने में भी यह तुम्हारा सहयोगी होगा। आशा है इन सबका आवश्यकता के अनुसार उपयोग करोगे, परन्तु अपनी पढ़ाई छोड़कर दिन भर इस पर नहीं लगे रहोगे। माता जी और पिता जी को प्रणाम कहना।

तुम्हारा बड़ा भाई

राम

(2) **मित्र को उसकी माताजी के निधन पर एक संवेदना–पत्र लिखिए।**

परीक्षा भवन,

दिनांक ....

प्रिय मित्र संजीव

तुम्हारी माताजी के आकस्मिक निधन का दुखद समाचार मिला। सुनकर मन को शोक हुआ। मैं अभी तक नहीं मान पा रहा कि वे इस दुनिया में नहीं हैं। इस सूचना ने मुझे अचम्भित कर दिया है।

प्रिय संजीव, तुम्हारी माताजी बहुत अच्छी थीं। मुझे भी उनसे जो स्नेह मिला वह मेरे मन पर आज भी अंकित है। मेरे मन में उनके प्रति असीम श्रद्धा है। ईश्वर के विधान को कौन टाल पाया है। मेरी उस परम परमात्मा केचरणों में यही प्रार्थना है कि वह तुम्हें और तुम्हारे परिवार के अन्य सदस्यों को यह दुख सहन करने की शक्ति दे। मुझे विश्वास है कि तुम अवश्य अपने ऊपर आए आकस्मिक भार को सहन कर सकोगे। अगले मास मैं तुम्हारे घर आऊँगा, परिवार के अन्य सदस्यों को मेरी ओर से दिलासा देना।

तुम्हारा प्रिय

अमन

14.4 अनेक शब्दों के लिए एक शब्द

कम शब्दों में एक सारगर्भित अभिव्यक्ति प्रस्तुत करना एक श्रेष्ठ भाषा का उदाहरण है। जैसे–जैसे भाषा का विकास होता है वैसे–वैसे अनेक ऐसे शब्दों तथा मुहावरों का निर्माण होता जाता है, जो अनेक शब्दोंअथवा एक वाक्य के लिए प्रयुक्त होते हैं, जिससे उस वाक्य के अर्थ में कोई परिवर्तन नहीं होता है। ऐसे शब्द जो एक पूर्ण वाक्य या वाक्यांश की जगह प्रयुक्त किए जाते हैं और वाक्यांश का पूर्ण अर्थ प्रदान करते हैं या करने में समर्थ होते हैं, उन्हें एकल शब्द/वाक्यांश या शब्द समूह के लिए एक शब्द आदि कहा जाता है।

अनेक शब्दों के लिए प्रयुक्त होने वाले एक शब्दों के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

1. जो पहले जन्मा हो – अग्रज
2. जो इन्द्रियों द्वारा न जाना जा सके – अगोचर
3. जिसको जाना न जा सके – अज्ञेय

4. जिसको जीता न जा सके	–	अजेय
5. इन्द्रियों की पहुँच से बाहर	–	अतीन्द्रिय
6. किसी प्रस्ताव का समर्थन करने की क्रिया	–	अनुमोदन
7. जो बात लोगों से सुनी गई हो	–	जनश्रुति
8. जो सबके मन की बात जानता हो	–	अन्तर्यामी
9. अपने लिए किए हुए उपकार को याद रखने वाला	–	कृतज्ञ
10. अपने लिए किए हुए उपकार को भुला देने वाला	–	कृतघ्न
11. जिंदा रहने की इच्छा	–	जिजीविषा
12. जो ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा रखता हो	–	ज्ञानपिपासु
13. भूत, वर्तमान और भविष्य को देखने वाला	–	त्रिकालदर्शी
14. छूत का रोग	–	संक्रामक
15. जो अपना ही मतलब साधता हो	–	स्वार्थी
16. अधिक पढ़ी–लिखी और ज्ञानी स्त्री	–	विदुषी
17. बुरे आचरण वाला	–	दुराचारी
18. रात में घूमने वाला	–	निशाचर
19. भाषण देने में चतुर	–	वाग्मी
20. विचारों का ऐसा प्रवाह जिससे कोई निष्कर्ष न निकले	–	ऊहापोह
21. अपने ही पति से अनुराग रखने वाली स्त्री	–	स्वकीया
22. अपनी विवाहिता से उत्पन्न पुत्र	–	औरस
23. गोद लिया हुआ पुत्र	–	दत्तक
24. जो पृथ्वी से संबंधित हो	–	पार्थिव
25. अचानक हो जाने वाला	–	आकस्मिक
26. अधिक दिन तक जीने वाला	–	चिरंजीवी
27. अपने बल पर निर्भर रहने वाला	–	स्वावलम्बी
28. आँखों के समक्ष	–	प्रत्यक्ष

29. आँखों से परे – परोक्ष

30. आकाश में उड़ने वाला – नभचर

31. आगे होने वाला – भावी

4.5 सारांश

प्रिय विद्यार्थीयों इस पाठ में आपने पत्र लेखन का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के साथ–साथ अनेक शब्द के लिए प्रयुक्त होने वाले एक शब्द किसे कहते हैं और इनका प्रयोग लेखन को किस प्रकार प्रभावशाली बनाता है इसकी जानकारी प्राप्त की है जो भविष्य में भी आपके लिए लाभप्रद होगी।

14.6 कठिन शब्द

1. दक्ष
2. परिपक्वता
3. अभिनन्दन
4. वाग्जाल
5. प्राप्तकर्ता
6. प्रेषक
7. संलग्नक
8. भवदीय
9. अनुच्छेद
10. सारगर्भित

14.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्र1) ऐसा कागज़ जिस पर कोई बात लिखी अथवा छपी हो उसे क्या कहते हैं ?

उत्तर) पत्र।

प्र2) पत्र लिखने वाले को क्या कहते हैं ?

उत्तर) प्रेषक

प्र3) पत्र प्राप्त करने वाले को क्या कहते हैं ?

उत्तर) प्राप्तकर्ता या प्रापक

प्र4) मुख्य रूप से पत्रों को कितने भागों में विभाजित कर सकते हैं ?

उत्तर) दो।

प्र5) प्रार्थना पत्र, कार्यालयी पत्र और व्यवसायिक पत्र, पत्रों के किस वर्ग के अन्तर्गत आते हैं?

उत्तर) औपचारिक पत्र।

प्र6) निकट सम्बन्धियों को लिखे गए पत्रों को कौन–से पत्रों की श्रेणी में रखा जाता है ?

उत्तर) अनौपचारिक पत्र।

प्र7) 'जिसे जाना न जा सके' उसे क्या कहते हैं?

उत्तर) अज्ञेय।

प्र8) 'अपने ही पति से अनुराग रखने वाली स्त्री' के लिए एकल शब्द लिखिए।

उत्तर) स्वकीया।

प्र9) 'अचानक हो जाने वाला' का एकार्थी शब्द लिखें।

उत्तर) आकस्मिक।

प्र10) 'जिजीविषा' का अर्थ लिखिए।

उत्तर) जिंदा रहने की इच्छा।

14.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) अपने प्रधानाचार्य को छात्रवृत्ति के लिए आवेदन पत्र लिखिए।

उत्तर) ....

....

....

....

प्र2) आपके क्षेत्र में स्थित एक औद्योगिक संस्थान का गंदा पानी आपके नगर की नदी को दूषित कर रहा है। प्रदूषण–नियंत्रण–विभाग के मुख्य अधिकारी को पत्र द्वारा इस समस्या से अवगत करवाइए।

उत्तर) ....

....

....

....

प्र3) बिजली अधिकारी को बिजली की अनियमित आपूर्ति के संबंध में पत्र लिखिए।

उत्तर) ....

....

....

....

प्र4) छोटे भाई को पत्र लिखिए जिसमें मोबाइल की उपयोगिता का वर्णन हो।

उत्तर) ....

....

....

....

प्र5) मित्र को उसके जन्मदिन की बधाई देने हेतु पत्र लिखिए।

उत्तर) ....

....

....

....

14.9 पठनीय पुस्तकें

1. सम्पूर्ण हिन्दी व्याकरण और रचना– डॉ. अरविन्द कुमार
2. परिष्कार व्याख्याता– हिन्दी – डॉ. राघव प्रकाश, डॉ. चतुर सिंह, डॉ. सविता पाईवाल

***

निबन्ध लेखन

15.0 रूपरेखा

15.1 उद्देश्य

15.2 प्रस्तावना

15.3 निबन्ध लेखन

15.4 सारांश

15.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

15.6 पठनीय पुस्तकें

15.1 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययनोपरान्त आप निबन्ध लेखन की प्रविधि को जानकर, निबन्ध–लेखन कला में निर्पुण हो सकेंगे।

15.2 प्रस्तावना

साहित्य मानवीय चेतना की अभिव्यक्ति का माध्यम है। अनुभूति का सम्बन्ध जहाँ मानव के हृदय की सम्वेदनशीलता से है वहीं चिन्तन उनके जीवन–परिवेश में उठने वाली उसकी स्थिति बोध से उत्पन्न जिज्ञासाओं का बौद्धिक समाधान है। मानवीय चेतना के इस समन्वयात्मक रूप ने उसके जीवन–विकास के विविध चरणों में क्रमशः विचारों को पारस्परिक आदान–प्रदान द्वारा सामाजिक बन्धनों में दृढ़ता प्रदान की होगी। इसी अनुभूतियुक्तचिन्तन ने अपनी सामाजिक प्रस्तुति के निमित्त जो अभिव्यक्ति का माध्यम चुना वही साहित्यिक शैलीगत भेदों के उत्स का कारण बना।

इसलिए संवेदनात्मक वृत्तियों की अभिव्यक्ति–शैली सामान्यतः पद्य कही गई और चिन्तन की छन्द युक्त अभिव्यक्ति शैली को सामान्यतः गद्य कहा गया। गद्य आज हिन्दी साहित्य की एक सशक्त प्रौढ़ विद्या है।

'निबन्ध' गद्य लेखन की ही एक विधा है लेकिन इस शब्द का प्रयोग किसी विषय की तार्किक और बौद्धिक विवेचना करने वाले लेखों के लिए भी किया जाता है। निबंध के पर्याय रूप में सन्दर्भ, रचना और प्रस्ताव का भी उल्लेख किया जाता है किन्तु साहित्यिक आलोचना में सर्वाधिक प्रचलित शब्द निबंध ही है। इसे अंग्रेजी के कम्पोज़ीश्न और 'एस्से' के अर्थ में ग्रहण किया जाता है। आचार्य हज़ारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार संस्कृत में भी निबंध का साहित्य है। प्राचीन संस्कृत साहित्य के उन निबंधों में धर्मशास्त्रीय सिद्धांतों की तार्किक व्याख्या की जाती है। उनमें व्यक्तित्व की विशेषता नहीं होती थी किन्तु वर्तमान काल में निबंध संस्कृत के निबंधों से ठीक विपरीत है। इसमें व्यक्तित्व अर्थात् वैयक्तिकता का गुण सर्वप्रधान है।

इतिहास–बोध, परम्परा की रूढ़ियों से मनुष्य के व्यक्तित्व को मुक्त करता है। निबंध–विधा का संबंध इसी इतिहास–बोध से है। यही कारण है कि निबंध की प्रधान विशेषता व्यक्तित्व का प्रकाशन है।

15.3 निबंध लेखन

निबंध का शाब्दिक अर्थ है 'बाँधना' अर्थात् किसी को बाँधना। प्राचीन काल में जब मुद्रण कला का अविष्कार नहीं हुआ था। अरण्यक ग्रन्थ लिखते हुए अथवा भोजपत्रों पर लिखे काव्य–महाकाव्य को आचार्य एक सूत्र या धागे से बाँध देते थे। इस क्रिया को निबन्ध कहा जाता था। कालान्तर में इसका अर्थ हुआ किसी एक विषय से सम्बन्धित सामग्री को एक स्थान पर संग्रहीत कर देना। चूंकि निबंध एक विषय का सर्वांग निरूपण करता है। इसलिए आधुनिक युग में निबंध उस गद्य रचना के लिए रूढ़ हो गया जिसमें विचारों या विषय का तारतम्यपूर्ण विवेचन हो। अपने मानसिक भावों एवं विचारों को संक्षिप्त रूप से तथा नियन्त्रित ढंग से लिखना 'निबन्ध' कहलाता है। सरल शब्दों मे कहें तो किसी विषय पर अपने भावों को पूर्ण रूप से क्रमानुसार लिपिबद्ध करना ही 'निबंध' कहलाता है।

'निबंध' किसी भी विषय पर लिखा जा सकता है। साधारण रूप से निबंध के विषय परिचित होते हैं अर्थात् जिनके बारे में हम सुनते, देखते व पढ़ते रहते हैं, जैसे– धार्मिक त्योहार, राष्ट्रीय त्योहार, विभिन्न प्रकार की समस्याएँ, मौसम आदि। आज सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और वैज्ञानिक विषयों पर निबन्ध लिखे जा रहे हैं। संसार का हर विषय, हर वस्तु, व्यक्ति एक निबंध का केंद्र हो सकता है।

निबंध के प्रमुख अंग :–

मुख्य रूप से निबंध के निम्नलिखित तीन अंग होते हैं–

1) **भूमिका :–** यह निबंध के आरम्भ में एक अनुच्छेद में लिखी जाती है। इसमें विषय का परिचय दिया जाता है। यह प्रभावशाली होनी आवश्यक है, जो कि पाठक को निबंध पढ़ने के लिए प्रेरित कर सके। इसके लिए यदि विषय से सम्बन्धित कोई काव्य–पंक्ति या सूक्ति या घटना याद हो तो उसी से निबंध लिखना प्रारम्भ करना चाहिए।

2) **विषय–विस्तार :–** इसमें अनुच्छेदों में विषय के विभिन्न पहलुओं पर अपने विचार प्रकट किए जाते हैं। प्रत्येक अनुच्छेद में एक–एक पहलू पर विचार प्रकट किया जाता है किन्तु विचारों में तारतम्यता होनी अनिवार्य है।

3) **उपसंहार :–** यह निबंध के अंत में लिखा जाता है। इस अंग में निबन्ध में लिखी गई बातों को सार–रूप में एक अनुच्छेद में लिखा जाता है। इसमें संदेश भी लिखा जा सकता है। निबंध का विषय किसी समस्या से सम्बन्धित हो तो उपसंहार में उस समस्या के समाधान हेतु अपने सुझाव आदि लिखे जाने चाहिए। ध्यान रखें निबन्ध का अंत प्रभावी होना चाहिए।

निबंध की विशेषताएँ :–

एक अच्छे निबंध की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1) निबंध एक ही विषय पर आधारित होना चाहिए।

2) विचारों में परस्पर तारतम्यता होनी चाहिए अर्थात् क्रमबद्धता का पालन करें।

3) विषय से सम्बंधित सभी पहलुओं पर निबंध में चर्चा की जानी चाहिए।

4) निबंध की भाषा विषयानुरूप होनी चाहिए।

5) वर्तनी शुद्ध होनी चाहिए तथा उसमें विराम–चिन्हों का उचित प्रयोग किया जाना चाहिए।

6) निबंध लिखते समय शब्दों की सीमा का अवश्य ध्यान रखना चाहिए। निबंध परीक्षा कॉपी के दो–तीन पृष्ठों से अधिक नहीं होना चाहिए।

7) कोई उपयुक्त कथन याद हो तो उसे यथास्थान जोड़िए।

8) विचारों की पुनरावृत्ति से बचना चाहिए।

9) निबंध लिखने के पश्चात् एक बार अवश्य पढ़ें ताकि त्रुटियों को शुद्ध किया जा सके।

10) निबंध लेखन विचारों की एक अखण्ड धारा होती है इसलिए उसका एक निश्चित परिणाम होना चाहिए।

11) निबंध में लेखक का व्यक्तित्व प्रतिफल होना आवश्क है।

निबंध के भेद/प्रकार :–

विषय के प्रतिपादन की दृष्टि से निबन्ध के चार प्रकार माने गए हैं– वर्णनात्मक, विवरणात्मक, विचारात्मक और भावनात्मक निबंध।

1) **वर्णनात्मक निबंध :–** किसी प्राकृतिक वस्तु, स्थान, क्षेत्र या किसी मनोहर आह्लाद तथा त्योहारों आदि की प्रस्तुति वर्णनात्मक निबन्ध के रूप में की जा सकती है। इस कोटि के निबन्धों में निबन्धकार के नेत्रों की परख अधिक प्रभावी होती है। मस्तिष्क व तर्क के स्थान पर कल्पना का अवलंब इस प्रकार के निबन्धों में अधिक होता है। ऐसे निबंधों में भाषा का सहज प्रवाह और वर्णन पक्ष सूचनापरक होते हुए भी पाठक को अखरता नहीं।

2) **विवरणात्मक निबंध :–** किसी ऐतिहासिक, पौराणिक या आकस्मिक घटना का वर्णन विवरणात्मक निबंध कहलाता है। संस्मरणों पर आधारित ऐसे निबन्धों में शिकार, पर्वतारोहण, दुर्गम यात्राएँ आदि के छुपे पक्षों की खोज का विवरण अधिक होता है। इन निबन्धों में कौतूहल, कल्पना और अनुभूति का योग अधिक गहराई से दिखाई देता है।

3) **विचारात्मक निबन्ध :–** इन निबन्धों में बौद्धिक विवेचन की प्रधानता रहती है। इनमें हृदय पक्ष की अपेक्षा मस्तिष्क तत्व अधिक प्रभावी होता है। इसी प्रकार के निबन्धों में दार्शनिक, आध्यात्मिक, मनोवैज्ञानिक विषयों की विवेचना होती है। सरल शब्दों में कहें तो किसी विचार, समस्या, मनोभाव आदि के विषय में परिचयात्मक, व्याख्यात्मक अथवा विश्लेषणात्मक लेखन विचारात्मक निबन्ध कहलाता है, जैसे– दूरदर्शन और शिक्षा, विज्ञान के लाभ तथा हानि आदि इसी प्रकार के निबंधों के उदाहरण हैं।

4) **भावनात्मक निबंध :–** इन निबंधों में बुद्धि तत्व की अपेक्षा भाव तत्व की प्रधानता होती है। इन निबंधों की सबसे बड़ी पहचान लेखक के भाव के साथ पाठकीय संवेदना का एकात्म हो जाना होती है। इस प्रकार के निबन्धों में रस और भावों की व्यंजना, प्रधान रूप से परिलक्षित होती है। ऐसे निबंधों में परोपकाऱ सदाचार, देश–प्रेम और राष्ट्रभाषा आदि विषयों के निबन्ध आते हैं।

निबंध–लेखन हेतु विद्यार्थियों के लिए कुछ महत्वपूर्ण विषय निम्नलिखित हैं–

1. नारी शिक्षा/समाज में नारी का स्थान/नारी सशक्तिकरण
2. प्रदूषण की समस्या और निदान
3. विज्ञान के लाभ और हानि
4. समय का सदुपयोग
5. देशप्रेम या राष्ट्रीय एकता
6. स्वच्छ भारत या स्वच्छता अभियान
7. भ्रष्टाचार
8. महँगाई
9. बाल श्रम से सम्बन्धित विषय
10. साक्षरता का महत्व
11. आधुनिक संचार क्रांति
12. आतंकवाद की समस्या
13. जनसंख्या वृद्धि पर निबंध
14. सदाचार पर निबंध
15. बेरोज़गारी पर निबंध
16. वैश्वीकरण/भूमण्डलीकरण/विश्वग्राम का स्वरूप
17. इक्कीसवीं सदी में मानवता किस ओर ?
18. हमारी परीक्षा प्रणाली अथवा परीक्षाओं में बढ़ती नकल की प्रवृत्ति
19. मोबाइल के लाभ और हानि

20. मीडिया का सामाजिक दायित्व/मीडिया का समाज पर प्रभाव

निबंध लेखन के कुछ उदाहरण :–

1) भारत में बेरोज़गारी की समस्या पर निबंध

महाविद्यालय की डिग्री लेकर रोज़गार की तलाश में भटकते हुए नवयुवक के चेहरे पर निराशा और चिंता का भाव होना आजकल सामान्य–सी बात हो गई है। कभी–कभी तो रोज़गार की तलाश में भटकता हुआ युवक अपनी डिग्रियाँ फाड़ने व जलाने के लिए विवश हो जाता है। वह प्रतिदिन समाचारों में रोज़गार के विज्ञापन पड़ता है, आवेदन पत्र भेजता है, साक्षात्कार देता है और नौकरी न मिलने पर पुनः रोज़गार की तलाश में लग जाता है। व्यक्ति अपनी योग्यता के अनुरूप नौकरी खोजता है और परिवार तथा समाज के लोग उसकी विवशता न समझकर उसे निकम्मा व उसकी शिक्षा को व्यर्थ कह देते हैं। वह निराशा की नींद सोता है और असफलता के आँसुओं को पीकर समाज के समक्ष मौन होकर रह जाता है।

बेरोज़गारी का अभिप्राय उस स्थिति से है जब कोई योग्तानुरूप कार्य करने का इच्छुक व्यक्ति प्रचलित मजदूरी की दरों पर कार्य करने के लिए तैयार हो किन्तु उसे काम न मिल रहा हो। बालक, वृद्ध, रोगी, अक्षम तथा अपंगव्यक्तियों को बेरोज़गार की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है। जो व्यक्ति काम करने के इच्छुक नहीं हैं और परजीवी भी हैं वे बेरोज़गारी की श्रेणी में नहीं आते हैं।

भारत की आर्थिक समस्याओं के अंतर्गत बेरोज़गारी एक प्रमुख समस्या है। वस्तुतः यह एक ऐसी बुराई है जिसके कारण केवल उत्पादक मानव शक्ति नष्ट नहीं होती बल्कि देश का भावी आर्थिक विकास अवरुद्ध हो जाता है। जो श्रमिक अपने कार्य द्वारा देश के आर्थिक विकास में सक्रिय सहयोग दे सकते हैं। वह कार्य के अभाव में बेरोज़गार रह जाते हैं। यह स्थिति हमारे विकास में बाधक है।

बेरोज़गारी किसी भी देश या समाज के लिए अभिशाप है। इससे एक ओर निर्धनता, भुखमरी तथा मानसिक अशांति फैलती है तो दूसरी ओर युवाओं में आक्रोश व अनुशासनहीनता बढ़ती है। चोरी, डकैती, हिंसा, अपराध एवं आत्महत्या आदि समस्याओं के मूल में एक बड़ी सीमा तक बेरोज़गारी ही विद्यमान है। बेरोज़गारी एक ऐसा भयंकर विष है जो संपूर्ण देश के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन को दूषित कर देता है। इसलिए इसके कारणों को खोजकर उसका निराकरण अत्यधिक आवश्यक है।

भारत में बेरोज़गारी के अनेक कारण हैं जिनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं–

क) **जनसंख्या में वृद्धि** :– बेरोज़गारी का प्रमुख कारण जनसंख्या में तीव्र वृद्धि है। विगत कुछ दशकों से भारत में जनसंख्या का विस्फोट हुआ है। हमारे देश में जनसंख्या में प्रतिवर्ष लगभग 3.50 प्रतिशत वृद्धि हो जातीहै। जबकि हमारे देश में इस दर से बेरोज़गार व्यक्तियों के लिए रोज़गार की व्यवस्था नहीं है।

ख) **दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली :–** भारतीय शिक्षा सैद्धांतिक अधिक है व्यवहारिक कम। इसमें पुस्तकीय ज्ञान पर ही विशेष ध्यान दिया जाता है। इसी कारण यहाँ के महाविद्यालयों से निकलने वाले छात्र दफ्तर के लिपिक ही बनपाते हैं, वे निजी उद्योग–धंधे स्थापित करने योग्य नहीं बनते हैं।

ग) **कृषि का पिछड़ापन** :– भारत की लगभग 70% जनता कृषि पर निर्भर है। कृषि के क्षेत्र में अत्यंत पिछड़ी हुई दशा के कारण कृषि में व्यापक बेरोज़गारी हो गई है।

घ) **कुशल एवं प्रशिक्षितों की कमी** :– हमारे देश में कुशल एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों की कमी है। अतः उद्योगों के संचालन के लिए विदेशों से प्रशिक्षित कर्मचारी बुलाने पड़ते हैं। इस कारण भारतीय कुशल एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों के बेकार हो जाने की भी समस्या बढ़ जाती है।

इसके अतिरिक्त मानसून की अनियमितता, भारी संख्या में शरणार्थियों का आगमन, मशीनीकरण के कारण होने वाली श्रमिकों की छटनी, श्रम की मांग एवं पूर्ति में असंतुलन, आर्थिक साधनों की कमी से ही बेरोज़गारी में वृद्धि हुई है। देश को बेरोज़गारी से उभारने के लिए इनका समुचित समाधान नितांत आवश्यक है।

बेरोज़गारी दूर करने के निम्नलिखित उपाय सहायक सिद्ध हो सकते हैं–

(i) जनसंख्या वृद्धि में नियंत्रण बहुत आवश्यक है। जनता को परिवार नियोजन का महत्व समझाते हुए उसमें छोटे परिवार के प्रति चेतना जागृत करनी चाहिए।

(ii) शिक्षा प्रणाली में व्यापक परिवर्तन शिक्षा को व्यवसाय प्रधान बनाकर शारीरिक श्रम और खेलों को भी महत्व दिया जाना चाहिए।

(iii) सरकार द्वारा कुटीर उद्योगों के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

(iv) देश में व्यापक स्तर पर औद्योगिकरण किया जाना चाहिए। इसके लिए विशाल उद्योगों की अपेक्षा लघुस्तरीय उद्योगों का अधिक विकास करना चाहिए।

(iv) कृषि के क्षेत्र में अधिकाधिक व्यक्तियों को रोज़गार देने के लिए सरकारी खेती को प्रोत्साहन दिया जानाचाहिए।

(vi) मुख्य उद्योगों के साथ–साथ सहायक उद्योगों का भी विकास किया जाना चाहिए, जैसे– कृषि के साथ पशुपालन तथा मुर्गी पालन आदि।

(vii) राष्ट्र निर्माण संबंधी विविध कार्यों का विस्तार किया जाना चाहिए, जैसे– सड़कों के निर्माण, रेल परिवहन का विकास, पुल निर्माण, बांध निर्माण तथा वृक्षारोपण आदि।

भारत सरकार बेरोज़गारी के प्रति जागरूक है तथा इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम भी उठा रही है। परिवार नियोजन, बैंकों का राष्ट्रीयकरण, कच्चा माल एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने की सुविधा, कृषि भूमि की हदबंदी, नए उद्योगों की स्थापना, प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना, प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना, नेशनल स्किल ड्वेलपमेंट संस्थान आदि जो बेरोज़गारी को दूर करने में एक सीमा तक सहायक सिद्ध हुए हैं। इनको और अधिक विस्तृत एवं प्रभावी बनाने की आवश्यकता है।

2) सदाचार विषय पर निबंध–लेखन

सदाचार शब्द संस्कृत के सत् और आचार शब्दों सें मिलकर बना है। इसका अर्थ है सज्जन का आचरण अथवा शुभ आचरण। सत्य, अहिंसा, ईश्वर विश्वास, मैत्री भाव, महापुरुषों का अनुसरण करना आदि बातें सदाचार में गिनी जाती हैं। इस सदाचार को धारण करने वाला व्यक्ति सदाचारी कहलाता है। इसके विपरीत आचरण करने वाले व्यक्ति को दुराचारी कहते हैं।

सदाचार मनुष्य का लक्षण है– सदाचार को धारण करना अर्थात् मानवता को प्राप्त करना। सदाचारी व्यक्ति समाज में पूजित होता है। आचारहीन का कोई सम्मान नहीं करता और न ही उसका साथ देता है। वेद भी उनकाकल्याण नहीं करते हैं इसलिए कहा गया है कि "आचारहीनं पुर्नान्ते वेदाः" अर्थात् वेद भी आचार रहित व्यक्ति काउद्धार नहीं कर सकते हैं।

सदाचार का महत्व पूर्ण सच्चरित्रता है। सच्चरित्रता सदाचार का सर्वोत्तम साधन है। अंग्रेजी कहावत के अनुसार धन नष्ट हो जाए तो मनुष्य की विशेष हानि नहीं होती, स्वास्थ बिगड़ जाने पर कुछ हानि होती है किन्तु चरित्रहीन होने पर मनुष्य का सर्वस्व नष्ट हो जाता है। मनुष्य में जो कुछ भी मनुष्यत्व है, उसका प्रतिबिम्ब उसका चरित्र है। आचारहीन व्यक्ति तो निरा पशु या राक्षस के समान है। रावण के पास भी धन, वैभव और विद्या सब कुछ था किंतु अनाचार के कारण उसका सब कुछ नष्ट हो गया। भारत एवं पाश्चात्य के सभी विद्वानों ने शील, सदाचार और सच्चरित्रता को जीवन में सर्वाधिक महत्व दिया है।

सच्चरित्रता के लिए यह आवश्यक है कि भय की प्रवृत्ति पर नियंत्रण प्राप्त किया जाए। ऐसा करने पर हमारे हृदय में ऊँचे आदर्श और स्वस्थ प्रेरणाएँ पनप सकती हैं। जो भय के वश में होगा उसके चरित्र का विकास नहीं हो सकता है। जीवन में अच्छे चारित्रिक गुणों के विकास हेतु आवश्यक है कि स्वयं को बुरे वातावरण से दूर रखा जाए। अपने चरित्र निर्माण हेतु सदैव भले और बुद्धिमान लोगों का संगत करना चाहिए। आदर्श चरित्र के लिए मन, वचन और कर्म की एकरूपता का होना भी आवश्यक है। चरित्रवान व्यक्ति की कथनी और करनी में कोई अंतर नहीं होता है।

भारत एक आध्यात्मिक देश है। यहाँ की संस्कृति तथा सभ्यता धर्म प्रधान है। धर्म से मनुष्य की लौकिक एवं आध्यात्मिक उन्नति होती है। लोक–परलोक की भलाई धर्म से ही संभव है। धर्म आत्मा की उन्नति कर उसे पतन की ओर जाने से रोकता है। इस प्रकार धर्म सदाचार का ही पर्यायवाची भी कहा जा सकता है। जो आचरण मनुष्य को ऊंचा उठाये, उसे चरित्रवान बनाए, वह धर्म भी है और सदाचार भी। शील, सत्य, भाषण, अहिंसा, क्षमा, करुणा और परोपकार जिनको सदाचार कहा जाता है, वहीं धर्म के प्रमुख गुण हैं। अतः सदाचार को धारण करना ही धर्म को धारण करना है।

शील मानसिक भूचाल के लिए अंकुश है। सदाचार मनुष्य की काम, क्रोध, मोह आदि बुराइयों से रक्षा करता है। अहिंसा की भावना से मन की क्रूरता समाप्त होती है तथा उसमें करुणा, सहानुभूति एवं दया की भावना जागृत होती है जो मनुष्य का नैतिक उत्थान करती है। व्यक्ति में मनुष्य से लेकर पशु–पक्षी तक के प्रति उदारता की भावना पैदा होती है। इस प्रकार सदाचार का गुण धारण करने से मनुष्य का चरित्र उज्ज्वल होता है और उसमें कर्तव्यनिष्ठा पैदा होती है।

सदाचार मनुष्य के संपूर्ण गुणों का सार है। जो उसके जीवन को सार्थकता प्रदान करता है। इसकी तुलना में विश्व की कोई भी मूल्यवान वस्तु नहीं टिक सकती। सदाचार रहित मनुष्य कभी पूजनीय नहीं होता और न ही इसके अभाव में व्यक्ति अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

वर्तमान युग में प्रायः शिक्षा के प्रभाव से भारत के युवक–युवतियाँ सदाचार के महत्व को निरर्थक मानने लगे हैं तथा सदाचार विरोधी जीवन को अपना आदर्श मानते हैं। इसी कारण देश व समाज पतन की ओर जा रहा है। आचरण की रक्षा हेतु युवा वर्ग को सचेत रहना चाहिए। उन्हें राम, कृष्ण और गांधी के चरित्र को आदर्श मानकर न्यायप्रिय आचरण करना चाहिए। राष्ट्र का सच्चा निर्माण, सच्ची प्रगति तभी संभव है, जब प्रत्येक भारतवासी सदाचारी बनने का संकल्प ले।

3) 'भ्रष्टाचार' पर निबन्ध–लेखन

भ्रष्टाचार अर्थात् भ्रष्ट+आचार। 'भ्रष्ट' का अर्थ है– 'बुरा' या 'बिगड़ा हुआ' तथा 'आचार' का अर्थ है– 'आचरण'। अतः भ्रष्टाचार का शाब्दिक अर्थ हुआ– 'वह आचरण जो किसी भी प्रकार से अनैतिक और अनुचित हो।'

जब कोई व्यक्ति न्याय व्यवस्था के अन्य नियमों के विरुद्ध जाकर अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु बुरा आचरण करने लगता है तो वह व्यक्ति भ्रष्टाचारी कहलाता है। वर्तमान में भारत जैसे सोने की चिड़िया कहलाने वाले देश में भ्रष्टाचार अपनी जड़ें फैला रहा है। आज भारत में ऐसे कई व्यक्ति व्याप्त हैं जो भ्रष्टाचारी हैं। समस्त विश्व में भारत भ्रष्टाचार के संदर्भ में 94वें स्थान पर है। भ्रष्टाचार के कई रूप हैं जैसे – काला–बाजारी, स्वेच्छा से दाम बढ़ाना, पैसा लेकर किसी का काम करना, सस्ता सामान लाकर महँगा बेचना। भ्रष्टाचार में मुख्य घूस यानी रिश्वत, चुनाव में धांधली, ब्लैकमेल करना, टेक्स चोरी, झूठी गवाही, झूठा मुकदमा, परीक्षा में नकल, परीक्षार्थी का गलत मूल्यांकन, हफ्ता वसूली, जबरन चंदा लेना, वोट हेतु पैसा और शराब आदि बांटना, पैसे लेकर रिपोर्ट छापना, अपने कार्यों को करवाने के लिए नकद राशि देना यह सब भ्रष्टाचार ही है।

व्यक्ति भ्रष्टाचार को तब अपनाता है जब किसी व्यक्ति को आर्थिकाभाव के कारण कष्ट होता है तो उस समय वह भ्रष्ट आचरण करने के लिए विवश हो जाता है। असमानता, आर्थिक, सामाजिक या सम्मान, पद–प्रतिष्ठा के कारण भी व्यक्ति अपने आपको भ्रष्ट बना लेता है। हीनता और ईर्ष्या की भावना से शिकार हुआ व्यक्ति भी भ्रष्टाचार को सरलता से अपना लेता है। साथ ही रिश्वतखोरी, भाई–भतीजावाद आदि भी भ्रष्टाचार को जन्म देते हैं। समाज में यह भ्रष्टाचार

अब इतना अधिक व्याप्त हो गया है कि जो व्यक्ति भ्रष्ट नहीं या फिर वह इस भ्रष्टाचार में सहयोग नहीं देता ते उस व्यक्ति के लिए इस भ्रष्ट समाज में जीवन व्यतीत करना कठीन हो जाता है।

भ्रष्टाचार किसी बीमारी से कम नहीं है। समाज में इसकी जड़ें तेजी से फैल रही हैं। यदि समय रहते इसे रोका नहीं गया तो यह समस्त भारत को अपनी चपेट में ले लेगा। भ्रष्टाचार का प्रभाव अत्यंत व्यापक है। जीवन का कोई भी क्षेत्र इसके प्रभाव से मुक्त नहीं है। आज छोटे–से–छोटा कार्य करवाने के लिए भी घूस देनी पड़ती है। चाहे खेल क्षेत्र में फिक्सिंग हो, नौकरी पाने के लिए व्यक्ति का संघर्ष हो या सामान्य किसी अस्पताल में डॉक्टर से ही क्यों न मिलना हो, शीघ्र और अपनी इच्छा से कार्य करने के लिए घूस देनी पड़ती है। इसलिए आज देश का हर तबका इस बीमारी से ग्रस्त है।

भ्रष्टाचार एक संक्रामक रोग की तरह है। समाज में व्याप्त इस भ्रष्टाचार को रोकने के लिए कठोर दंड–व्यवस्था की जानी चाहिए। आज भ्रष्टाचार की स्थिति यह है कि व्यक्ति रिश्वत के मामले में पकड़ा जाता है और रिश्वत देकर ही छूट जाता है। इसलिए जब तक इस अपराध के लिए कोई कड़ा दंड नहीं दिया जाएगा तब तक यह बीमारी दीमक की तरह पूरे देश को खाती रहेगी। कानून से भी पहले लोगों को स्वयं में ईमानदारी विकसित करनी होगी। भावी पीढ़ी को ईमानदारी के लाभ और भ्रष्टाचार की हानि से परिचित करवाना होगा। तभी इस बीमारी से बचा जा सकता है।

अतः भ्रष्टाचार हमारे नैतिक जीवन मूल्यों पर सबसे बड़ा प्रहार है। भ्रष्टाचार से जुड़े लोग अपने स्वार्थ में अंधे होकर राष्ट्र का नाम बदनाम कर रहे हैं। किन्तु इस भ्रष्टाचार को खत्म करने के प्रयास भी हो रहे हैं। दुनियाभर में भ्रष्टाचार के खिलाफ लोगों में जागरूकता फैलाने हेतु ही 9 दिसम्बर को 'अंतरराष्ट्रीय भ्रष्टाचार विरोधी दिवस' मनाया जाता है। संयुक्त राष्ट्र महासभा में 31 अक्टूबर 2003 को एक प्रस्ताव पारित कर 'अंतरराष्ट्रीय भ्रष्टाचार विरोधी दिवस' मनाए जाने की घोषणा की। भ्रष्टाचार के खिलाफ संपूर्ण राष्ट्र एवं दुनिया का इस जंग में शामिल होना एक शुभ घटना कही जा सकती है। हमारा सिनेमा भी 'Gabbar is back' जैसी फिल्में बनाके इस जंग में हमारा सहयोग दे रहा है, क्योंकि भ्रष्टाचार आज किसी एक देश की नहीं, बल्कि संपूर्ण विश्व की समस्या है जिसे मिटाने के लिए हमें स्वयं ईमानदार बनकर सहयोग देना चाहिए।

4) इंटरनेट

मनुष्य को जीवित रहने के लिए बुनियादी रूप से रोटी, कपड़ा और मकान की आवश्यकता होती है, परन्तु वर्तमान समय में इंटरनेट ने इन बुनयादी आवश्यकताओं में अपनी जगह बना ली है। आज भारत हर क्षेत्र में प्रगति कर रहा है जिसमें इंटरनेट की भूमिका अहम् हो गयी है। यह आई.टी. (इनफार्मेशन टेकनोलॉजी) के क्षेत्र में क्रांति लाने वाला सबसे शक्तिशाली नेटवर्क है। जब कंप्यूटर का अभ्युदय हुआ तो बाद में उसमें इक्कठा आंकड़ों एवं जानकारियों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने की आवश्यकता का अनुभव किया गया जिसके परिणामस्वरूप सन् 1969 में इंटरनेट का अविष्कार अमेरिका में किया गया। भारत में इंटरनेट 80 के दशक में आया था। इंटरनेट मानव जाति को विज्ञान द्वारा दिया गया सबसे उत्कृष्ट उपहार है। इसके भीतर अनेक सम्भावनाएँ छिपी हुई हैं। इसके माध्यम से कोई भी सन्देश, चित्र एवं चलचित्र एक स्थान से दूसरे स्थान पर पल भर में भेजा जा सकता है।

वर्तमान में प्रत्येक व्यक्ति व्हाट्सप्प एवं फेसबुक जैसे बहुचर्चित नामों से भली–भाँति परिचत है जिनका उद्गम इंटरनेट के द्वारा ही संभव हो पाया है। आज आनलाइन शापिंग का चलन बहुत बढ़ गया है, जिससे लोग घर बैठअपनी मनपसंद वस्तुए मँगा सकते हैं किन्तु इंटरनेट के अभाव में इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। ऐसे ही ई–मेल से भी प्रायः सभी परिचित हैं चाहे सरकारी संस्थान हो या कोई व्यक्तिगत, हर जगह इसका प्रयोग सन्देश को एक छोर से दूसरे छोर तक भेजने के लिए किया जाता है जो इंटरनेट नेटवर्क द्वारा ही संभव है।

इंटरनेट पर लोगों की निर्भरता इस प्रकार बढ़ गयी है कि भोजन के बिना वे एक दिन रह सकते हैं परन्तु इंटरनेट के बिना नहीं। यद्यपि इंटरनेट ने मानव जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाये हैं परन्तु इसके दुष्परिणाम भी हो रहे हैं। जब तक हम किसी वस्तु को एक सीमित दायरे में रहकर इस्तेमाल करते हैं तब तक वो हमारे लिए हितकर होती है किंतु जैसे ही हम उस दायरे से बाहर जाते हैं तो वही हितकारी वस्तु हमारे लिए अहितकर साबित हो जाती है। यह बात इंटरनेट के परिपेक्ष्य में पूर्ण रुप से सत्य है।

आज युवा वर्ग एवं बच्चे इंटरनेट से सबसे ज्यादा प्रभावित हो रहे हैं, हमारे देश में जो आपराधिक गतिविधियाँ बढ़ गई हैं, जैसे आजकल बैंकों द्वारा इंटरनेट बैंकिंग की सुविधा दी जाती है जिसके द्वारा हमघर बैठे अपने खाते से धनराशि एक बैंक से दूसरे बैंक में भेज सकते हैं। ये पहल तो बहुत अच्छी है और लोग इससे लाभान्वित भी हो रहे हैं, परन्तु कुछ आपराधिक प्रविति वाले लोग इसी इंटरनेट का प्रयोग कर लोगों के खातों से धनराशी निकाल

लेते हैं जो वर्तमान की गंभीर समस्या बन गई है। हालांकि सेंटरल बैंक ने इन गतिविधियों को रोकने केलिए सख्त कदम उठाए हैं फिर भी इन गतिविधियों को पूर्ण रुप से नियंत्रित नहीं किया जा रहा है।

अतः कहा जा सकता है कि इंटरनेट विज्ञान द्वारा प्रदत्त अमूल्य भेंट है जिसे हमें बड़ी सावधानीपूर्वक और सीमित दायरे में रहते हुए उपयोग करना चाहिए और इस वरदान को अभिशाप नहीं बनने देना चाहिए।

5) आधुनिक युग की नारी

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्त फलाः क्रिया।।"

अर्थात् जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं और जहाँ ऐसा नहीं होता वहाँ समस्त यज्ञार्थ क्रियाएं व्यर्थ होती हैं। यह विचार भारतीय संस्कृति का आधार स्तंभ है। भारत में स्त्रियों को सदैव उच्च स्थान दिया है। कोई भी मंगलकार्य स्त्री के अभाव में अपूर्ण माना गया है। पुरुष यज्ञ भी करे तो पत्नी का साथ होनाअनिवार्य होता है। उदाहरणस्वरुप श्रीराम का अश्वमेध यज्ञ।

यदि किसी समाज की स्थिती को देखना है तो वहाँ की नारी की अवस्था को देखना होगा। राष्ट्र की प्रतिष्ठा, गरिमा उसकी समृद्धि पर नहीं अपितु उस राष्ट्र के सुसंस्कृत व चरित्रवान नागरिकों से है। राष्ट्र व समाज को ये संस्कार देती है–स्त्री। स्त्री जो एक माँ है, निर्मात्री है। वह अपने व्यवहार से बिना बोले ही बच्चे को बहुत कुछ सिख देती है। स्त्री मार्गदर्शक है। वह जैसे चित्र अपने परिवार के सामने रखती है परिवार व बच्चे उसी प्रकार बन जाते हैं। वह एक प्रेरक शक्ति भी है जो परिवार व समाज के लिए चैतन्य स्वरुप है परन्तु वहीं राष्ट्रीय चैतन्य आज स्वयं सुषुप्तावस्था में है।

आज हम सब मिलकर देश व समाज कहाँ जा रहा है इसकी बातें करते हैं। आज के बच्चे कल देश का भविष्य बनेंगे परन्तु यह विचार करना अति आवश्यक है कि आज के इस परिवेश में ये नोनिहाल किस नए भविष्य को रचने की कोशिश करने में लगा हुआ है। हम सब एक दूसरे पर दोषारोपण करते हैं। क्या सच में ऐसा है ?इसी पर आज के परिवेश में चिंतन करने की आवश्यकता है और इस सबके लिए स्त्री जो एक माँ है उसका दायित्व अधिक बढ़ जाता है। स्त्री संस्कारित होगी तो बच्चों में वह संस्कार स्वतः ही आ जाएँगे क्योंकि अगर वह अपने घर में एक स्वस्थ माहौल देखेंगे तो इसे अपने आचरण में उतारेंगे।

उदाहरणस्वरूप अगर हम अपने घर में प्रातः उठते ही कोई भक्ति संगीत लगाएंगे तो देखेंगे कि वह भजन सारा दिन आप गुनगुनाते रहेंगे। शाम के समय आपका बच्चा भी बोलेगा कि माँ ये सुबह आपने क्या लगा दिया मैं तो सारा दिन वही भजन बोलता रहा। इसलिए माताओं को यह विचार करना होगा कि घर का वातावरण कैसा हो, हमें किस तरह का साहित्य पड़ना चाहिए जिससे उसकी संतान राष्ट्र के प्रति समर्पित बने। यदि माता कौशल्या केवल रानी और भोग विलास में मस्त रहती तो 'राम' कुछ और ही होते यह माता कौशल्या के संस्कारों का ही प्रतिफल है कि वह श्रीराम बने। आज के संदर्भ में हम डॉ. अब्दुल कलाम का उदाहरण ले सकते हैं कि इतने बड़े वैज्ञानिक होते हुए भी और यहाँ तक कि देश के राष्ट्रपति पद पर आसिन रहते हुए भी उन्होंने हमेशा सादगी से अपना जीवन जिया और आज तक अपनी माता के संस्कारों को जीवित रखे हुए हैं। आज ये प्रश्न हम सबको अपने आप से करना है कि वर्तमान समाज में स्त्री का क्या स्थान है क्या हम आज की स्त्री में माता सीता के दर्शन करते हैं, जो जब तक जीवत रही अपने शील की रक्षा करती रही। आज वो द्रौपदी कहाँ गई जिसने हमेशा अपने खुले केशों से पाँडवों कोयह याद दिलाया कि राज्यसभा में किस तरह उनका अपमान हुआ और उन्हें उसका बदला लेना है, जो खत्म हुआ महाभारत के युद्ध पर।

आज नारी जीवन पर फैशन और पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। समाज भी अश्लीलता का उल्लंघन करने में लगा हुआ है। ऐसा नहीं कि फैशन पहले नहीं था। क्या पहले जमाने में प्रेम विवाह नहीं होते थे उस समय तो गंधर्व विवाह और यहाँ तक कि स्वंयवर भी पिता तय करते थे तथा कुछ स्वयं कन्याएँ भी करती थी। पुरानी संस्कृति में सब तरह से श्रृंगार भी महिलाएँ करती थीं और आभूषणों और फूलों से भी सजती थीं। इसके साथ–साथ यह भी सच है कि जो कुछ आज का परिवेश है उसकी कल्पना हजारों साल पहले भी नहीं की जा सकती थी। यह सिलसिला सालों से चला आ रहा है शायद इसे ही परिवर्तन कहते हैं। इसलिए हमारे सामने यह चुनौती है कि केवल अश्लीलता हम पर हावी न हो और न ही हमारी संस्कृति व हमारी संवेदनाओं पर चोट करे।

वर्तमान में नारी चाँद पर पहुँच गई है। कल्पना चावला का नाम तो कोई नहीं भूला होगा, इसके साथ–साथ नारी देश के उच्च पदों पर आसीन है और हमारे देश की राजनीति में भी नारी को देखा जा सकता है। शिक्षित होकर विभिन्न क्षत्रों में नारी अच्छा प्रदर्शन कर रही है। नारी को भोग्या मानने वाले पुरुष प्रधान समाज में नारी ने प्रमाणित कर दिया है कि वे भी इस पुरुष प्रधान देश में अपना लोहा रख सकती है। आज उसकी प्रतिभा और दृष्टिकोण पुरुष से पीछे नहीं है। साहित्य, चिकित्सा, विज्ञान, अनेक ऐसे क्षेत्र हैं जिसमें नारी ने अपनी प्रतिभा प्रदर्शित कीहै। केवल

पुरुष का क्षेत्र मानने वाले पुलिस विभाग में भी नारी कार्य कर रही है और पुरुष से किसी क्षेत्र में पीछे न्हीं है। आज नारी स्वतन्त्रता को अपना रही है किन्तु इस स्वतन्त्रता के भीतर के भाव को समझना भी आवश्यक है। बेटी को उच्छृंखल बनाना तो आसान है पर साथ में यह भी ध्यान देना होगा कि कहीं यह आज़ादी हमारी शर्मींदगी का कारण न बन जाए। हमें अपनी मर्यादाओं की सीमा तय करनी होगी और समझना होगा कि इनका उल्लंघन करने पर कौन से दुष्परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। हमें आधुनिक तो बनना चाहिए पर अपनी स्वदेशी पद्वति को अपनाकर।

नारी में विद्यमान उसकी प्रतिभा और प्रगति समाज के लिए आवश्यक है परन्तु आधुनिकता के नाम पर नारी को समाज को दूषित करने का कोई अधिकार नहीं है। नारी का दर्जा माँ, बेटी, पत्नी के साथ–साथ माँ दुर्ग, सरस्वती के रुप में पूजे जाने का भी है। इसलिए उसको भी इनका सम्मान रखते हुए आगे बढ़ना है न कि रिश्तों को तोड़कर परिवार को अलग करके आधुनिकता को अपनाना है।

15.4 सारांश

प्रस्तुत पाठ में आपने निबंध लेखन की कला का ज्ञान प्राप्त किया है जिसके परिणामस्वरुप विद्यार्थी निबंध लेखन में निपूण हो सकेंगे।

15.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) 'भ्रष्टाचार' पर निबन्ध लिखिए।

....

....

....

प्र2) 'प्रदूषण की समंस्या और निदान' पर निबन्ध लिखिए।

....

....

....

प्र3) 'सदाचार' पर निबन्ध लिखिए।

....

....

....

.

प्र4) 'देशप्रेम या राष्ट्रीय एकता' विषय पर निबन्ध लिखिए।

....

....

....

प्र5) 'स्वच्छ भारत या स्वच्छता' पर अपने शब्दों में निबन्ध लिखिए।

....

....

....

प्र6) 'आधुनिक युग में नारी की स्थिति' पर निबन्ध लिखिए।

....

....

....

प्र7) 'जनसंख्या वृद्वि' पर अपने शब्दों में लेख लिखिए।

....

....

....

प्र8) 'विज्ञान के लाभ और हानि' विषय पर सुलेख लिखें।

....

....

....

प्र9) 'इंटरनेट' विषय पर अपने शब्दों में निबंध लिखें।

....

....

....

प्र10) 'बेरोजगारी की समस्या' पर निबन्ध लिखें।

....

....

....

15.6 पाठनीय पुस्तकें

1. सम्पूर्ण हिन्दी व्याकरण और रचना– डॉ. अरविन्द कुमार

2. परिष्कार व्याख्याता– हिन्दी – डॉ. राघव प्रकाश, डॉ. चतुर सिंह, डॉ. सविता पाईवाल

***

प्रत्यय एवं विलोम शब्द

रूपरेखा

16.0 रूपरेखा

16.1 उद्देश्य

16.2 प्रस्तावना

16.3 प्रत्यय

16.4 विलोम शब्द

16.5 सारांश

16.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

16.7 पठनीय पुस्तकें

16.1 उद्देश्य

प्रस्तुत पाठ के अध्ययनोपरान्त आप–

– प्रत्यय क्या है और इसका प्रयोग कैसे होता है, इसकी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

– विलोम शब्द किसे कहते हैं और उनका क्या महत्व है, इसका ज्ञान प्राप्त करेंगे।

16.2 प्रस्तावना

मूल शब्द के बाद में लगने वाले शब्दांश को प्रत्यय कहा जाता है। उपसर्ग की तरह प्रत्यय भी भाषा में स्वतंत्र रूप से प्रयोग में नहीं आते हैं किंतु शब्द के बाद लगकर उसके अर्थ में परिवर्तन ला देते हैं। भाषा मेंप्रत्ययों की महत्ता इसलिए है कि शब्द में प्रत्यय लगाकर उसी शब्द से विभिन्न अर्थों को प्राप्त किया जा सकता है।

विलोम का अर्थ है उल्टा। जब किसी शब्द का उल्टा या विपरीत अर्थ दिया जाता है उस शब्द को विलोम शब्द कहते हैं। इस पाठ में विद्यार्थियों को शब्द रचना के अवयव प्रत्यय और विलोम शब्दों से पूर्ण रूप सेपरिचित करवाया जाएगा।

16.3 प्रत्यय

भाषा में ऐसे मूल शब्द होते हैं जिनका अर्थ की दृष्टि से आगे विभाजन नहीं किया जा सकता, इस प्रकार के मूल शब्द भाषा की अविभाज्य इकाई होते हैं, जैसे हिंदी में पढ़, चल, घर, हाथ आदि। किंतु ऐसे मूल शब्दों के पहले या बाद में किसी शब्दांश (प्र, अप, दार आदि) के जुड़ने से नए अर्थों वाले शब्दों का निर्माण किया जासकता है। इन्हें शब्दांश इसलिए कहा जाता है कि ये भाषा में स्वतंत्र शब्द की तरह काम में नहीं आते और किसी शब्द का अंश बनकर ही अपनी भूमिका निभाते हैं। ये शब्दांश मूल शब्द के पहले या अंत में लगाए जाते हैं। शब्द के पूर्व भाग में लगने वाले शब्दांश को उपसर्ग (Prefix) कहते हैं और शब्द के बाद में लगने वाले शब्दांश को प्रत्यय कहा जाता है। इस प्रकार प्रत्यय वह शब्दांश है जो किसी शब्द के अन्त में जुड़कर उसके अर्थ में परिवर्तन कर देता है।

उपसर्ग और प्रत्यय में अन्तर :–

उपसर्ग और प्रत्यय में निम्नलिखित अन्तर हैं–

1) उपसर्ग शब्दों के पहले लगते हैं लेकिन प्रत्यय शब्दों के अंत में लगते हैं। जैसे कुछ शब्दों के उदाहरण जहाँ दिए जा रहे हैं जिनमें उपसर्ग और प्रत्यय का प्रयोग हुआ है–

शब्द	**=**	**उपसर्ग**	**+**	**शब्द**	**+**	**प्रत्यय**
अधार्मिक	=	अ	+	धर्म	+	इक
अपमानित	=	अप	+	मान	+	इत
अनुदारता	=	अन	+	उदार	+	ता
अभिमानी	=	अभि	+	मान	+	ई
दुस्साहसी	=	दुस्	+	साहस	+	ई
परिपूर्णता	=	परि	+	पूर्ण	+	ता

अलौकिकता	=	अ	+	लोक	+	इक	+	ता

2) उपसर्ग के कारण शब्द का अर्थ बदल जाता है लेकिन प्रत्यय से अर्थ में परिवर्तन नहीं होता; उनके कारण केवल अर्थ में विशेषता आ जाती है। जैसे–

उपसर्ग से शब्द के अर्थ में परिवर्तन के कुछ उदाहरण–

उपसर्ग		मूलशब्द		नया शब्द
नि	+	डर	=	निडर
अ	+	चेत	=	अचेत
प्रति	+	दिन	=	प्रतिदिन
उप	+	नाम	=	उपनाम
अ	+	धर्म	=	अधर्म

प्रत्यय से अर्थ में आने वाले विशेषता के कुछ उदाहरण –

मूल शब्द		प्रत्यय		नया शब्द
सज	+	आवट	=	सजावट
त्याग	+	ई	=	त्यागी
भूल	+	अक्कड़	=	भुलक्कड़
उड़	+	आन	=	उड़ान
चल	+	आऊ	=	चलाऊ

उपर्युक्त उदाहरणों से उपसर्ग और प्रत्यय का अन्तर स्पष्ट करने के पश्चात् अब हम प्रत्यय पर चर्चा करेंगे–

प्रत्यय की परिभाषा :– 'प्रति' और 'अय' दो शब्दों के मेल सें 'प्रत्यय' शब्द का निर्माण हुआ है। 'प्रति' का अर्थ – 'साथ में' पर 'बाद में' होता है। 'अय' का अर्थ होता है, 'चलनेवाला'। इस प्रकार प्रत्यय का अर्थ हुआ– शब्दों के साथ, पर बाद में चलने वाला या लगने वाला शब्दांश।

अतः जो शब्दांश धातु रूप या शब्दों के अंत में लगकर नए शब्दों का निर्माण करते हैं, उन्हें प्रत्यय कहते हैं। जैसे 'सब्जीवाला' शब्द 'सब्जी' शब्द में 'वाला' जोड़ने से बना है और 'वाला' जोड़ने से अर्थ भी बदल गया है। प्रत्यय के मुख्यतः दो भेद होते हैं–

1) कृत प्रत्यय
2) तद्धित प्रत्यय

1) **कृत प्रत्यय** :– जो प्रत्यय क्रिया की मूल धातु के अन्त में जोड़े जाते हैं उन्हें कृत (कृदन्त) प्रत्यय कहते हैं। ये प्रत्यय पाँच प्रकार के होते हैं–

1. कर्तृ वाचक कृदन्त प्रत्यय
2. कर्म वाचक कृदन्त प्रत्यय
3. करण वाचक कृदन्त प्रत्यय
4. भाव वाचक कृदन्त प्रत्यय
5. विशेषण वाचक कृदन्त प्रत्यय

1. **कृर्त वाचक कृदन्त प्रत्यय** :– वे प्रत्यय जो धातुओं के अन्त में जोड़कर कर्त्ता वाचक शब्दों का निर्माण करते हैं, उन्हें कर्तृ वाचक कृदन्त प्रत्यय कहते हैं। जैसे–

अक	–	लेखक, नायक, गायक, पाठक, चालक
अक्कड़	–	भुलक्कड़, धुमक्कड़, पियक्कड़
आक	–	तैराक, लड़ाक, चालाक
आलु	–	झगड़ालु, दयालु, ईर्ष्यालु
आकू	–	लड़ाकू पढ़ाकू
आड़ी	–	खिलाड़ी, कबाड़ी
इयल	–	अड़ियल, मरियल, सड़ियल

एरा – लुटेरा, बसेरा

ऐया – गवैया, खिवैया, बचैया, नचैया

ओड़ा – भगोड़ा, हसोड़ा

आऊ – चलाऊ, टिकाऊ

ता – दाता, श्रोता, वक्ता, ज्ञाता

वाला – पढ़नेवाला, लिखनेवाला, सब्जीवाला

हार – माखनहार, राखनहार, चाखनहार, पालनहार, तारनहार

ऐत – लडैत, लुटैत, चढैत, टिकैत

2. **कर्म वाचक कृदन्त प्रत्यय :–** वे प्रत्यय जो धातुओं के अन्त में जुड़कर कर्म बोधक शब्दों का निर्माण करते हैं, उन्हें कर्म वाचक कृदन्त प्रत्यय कहते हैं। जैसे–

औना – बिछौना, खिलौना, घिनौना

नी – कहानी, फूकनी, सूंघनी, चटनी

ना – गाना, दाना, ओढ़ना

3. **करण वाचक कृदन्त प्रत्यय** :– वे प्रत्यय जो धातुओं के अन्त में जुड़कर कर्म के साधन या माध्यम का बोध कराने वाले शब्दों का निर्माण करते हैं उन्हें करणवाचक कृदन्त प्रत्यय कहते हैं। जैसे–

आ – मेला, झूला, ठेला, पूजा, ढेला

न – बेलन, बंधन, मंथन, पोंछन, झाड़न, जामन, ढक्कन

ऊ – झाड़ू, बाजारू

नी – लेखनी, सुमरनी, कतरनी, धौंकनी, छलनी, ओढ़नी

4. **भाववाचक कृदन्त प्रत्यय** :– वे प्रत्यय जो धातुओं के अन्त में जुड़कर भाववाचक संज्ञा शब्दों का निर्माण करते हैं, उन्हें भाव वाचक कृदन्त प्रत्यय कहते हैं। जैसे–

आ – घेरा, झटका, झगड़ा, फेरा, लचका, खटका

***

अक	–	बैठक, उठक, कसक
अत	–	बचत, चाहत, बढ़त, पढ़त, लिखत
अन्	–	उलझन, फिसलन, घुटन, ऐंठन, चलन
अंत	–	रटंत, भिड़ंत, लड़न्त, गढ़न्त
आई	–	पढ़ाई, लिखाई, चढ़ाई, लड़ाई, कटाई, सिंचाई
आवा	–	पछतावा, बुलावा, दिखावा, चढ़ावा
आव	–	चढ़ाव, बचाव, छिड़काव, बहाव, खिंचाव
आवट	–	मिलावट, लिखावट, बनावट, सजावट, रुकावट
आहट	–	घबराहट, टकराहट, चिल्लाहट, विलविलाहट
ती	–	धरती, गिरती, भरती, पावती, चुकती, बढ़ती
आन	–	थकान, ढलान, उठान, मिलान, चढ़ान, उड़ान
ई	–	बोली, चोरी, हँसी, धुड़की, धमकी
नी	–	मंगनी, होनी, भरनी, करनी, मिलनी,
आऊ	–	चलाऊ, टिकाऊ, दिखाऊ

5. **विशेषण वाचक कृदन्त प्रत्यय** :– वे शब्दांश जो किसी धातु के अन्त में जुड़कर विशेषणवाची शब्दों का निर्माण करते हैं, उन्हें विशेषण वाचक कृदन्त प्रत्यय कहते हैं। जैसे–

इत	–	चिन्तित, याचित, कथित, लिखित
अनीय	–	पठनीय, कथनीय, अभिनंदनीय

2) **तद्धित प्रत्यय** :– जो प्रत्यय क्रिया के धातु रूपों को छोड़कर अन्य शब्दों जैसे– संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, आदि के साथ लगकर नए शब्द बनाते हैं, वे तद्धित प्रत्यय कहलाते हैं। जैसे– बंगाल + ई = बंगाली। यहाँ 'ई' तद्धित प्रत्यय है क्योंकि यह 'बंगाल' नामक संज्ञा के साथ मिलकर नया शब्द बना रहा है।

तद्धित प्रत्यय के भेद :– ये छः प्रकार के होते हैं–

1. कर्तृवाचक तद्धित प्रत्यय
2. भाववाचक तद्धित प्रत्यय
3. सम्बन्धवाचक तद्धित प्रत्यय
4. अपत्यवाचक या संतान बोधक तद्धित प्रत्यय
5. ऊनतावाचक (हीनतावाचक/लघुतावाचक) तद्धित प्रत्यय
6. स्त्रीबोधक तद्धित प्रत्यय

1. **कर्तृवाचक तद्धित प्रत्यय :–** वे प्रत्यय जो किसी संज्ञा, सर्वनाम या विशेषण शब्दों के अन्त में जुड़कर कर्तावाचक शब्दों का निर्माण करते हैं, उन्हें कर्तृवाचक तद्धित प्रत्यय कहते हैं। ऐसे शब्द के कुछ उदाहरण निम्न हैं–

आर	–	सुनार, लुहार, गँवार, कुम्भकार, चमार, कुम्हार
आरी	–	भिखारी, पुजारी
आरा	–	बंजारा, घसियारा, भठियारा, हत्यारा
एरा	–	सपेरा, घसेरा, कमेरा, लखेरा
इया	–	आढ़तिया, भरतपुरिया, दुखिया, छलिया, मुखिया, रसिया
ची	–	नकलची, अफीमची, बाबरची, चिलमची, खजानची
वान	–	गाड़ीवान, गुणवान, कोचवान, पहलवान, धनवान
कार	–	शिल्पकार, कुंभकार, गीतकार, सलाहकार, पत्रकार
हारा	–	लकड़हारा, पनिहारा, मनिहारा
वाला	–	दूधवाला, घरवाला, फलवाला, गाड़ीवाला
दार	–	मालदार, हिस्सेदार, दानेदार, पहरेदार

2. **भाववाचक तद्धित प्रत्यय** :– वे प्रत्यय जो किसी संज्ञा, सर्वनाम या विशेषण शब्दों के अन्त में जुड़कर भाववाचक संज्ञा शब्दों का निर्माण करते हैं, उन्हें भाववाचक तद्धित प्रत्यय कहते हैं। जैसे–

आई	–	चतुराई, बुराई, भलाई, सफाई, चौड़ाई, पण्डिताई, लम्बाई, अच्छाई, ऊँचाई
आटा	–	भर्राटा, घर्राटा, सर्राटा, खर्राटा, फर्राटा

आस	–	खटास, मिठास, पिटास, भडास
आहट	–	गर्माहट, कड़वाहट, चिकनाहट
इमा	–	लालिमा, कालिमा, गरिमा, हरीतिमा, पूर्णिमा, अरुणिमा, मधुरिमा, पीतिमा
ई	–	सावधानी, बुद्धिमानी, मेहरवानी, चोरी, गर्मी, सर्दी, लाली, सफेदी, खुशी, नमी
ता	–	सुन्दरता, मुर्खता, मनुष्यता, दानवता, मानवता, मधुरता, विवशता, लघुता, मित्रता
त्व	–	लघुत्व, महत्त्व, प्रभुत्व, मनुष्यत्व, गुरुत्व, बंधुत्व, नेतश्त्व
आपा (पा)–		बुढ़ापा, मुटापा
पन	–	लड़कपन, बचपन, अपनापन, भोलापन, पागलपन, छुटपन, बांझपन
गी	–	सादगी, मर्दानगी, एकबारगी, रवानगी, जिन्दगी
इकी	–	मानविकी, यांत्रिकी, भौतिकी, वानिकी, सांख्यिकी
औती	–	कठौती, मनौती
अक	–	ठंडक, लचक, लटक, भनक
कार	–	झंकार, ठंकार, जयकार, धिक्कार
अत	–	रंगत, संगत

3. **सम्बन्धवाचक तद्धित प्रत्यय** :– वे प्रत्यय जो किसी संज्ञा, सर्वनाम या विशेषण शब्दों के अन्त में जुड़कर सम्बन्धबोधक शब्दों का निर्माण करते हैं, उन्हें संबंधवाचक तद्धित प्रत्यय कहते हैं। जैसे–

ऐरा	–	चचेरा, ममेरा, मौसेरा, फुफेरा, बहनेरा
इक	–	शारीरिक, मानसिक, मार्मिक, प्रासंगिक, आत्मिक, आध्यात्मिक, जैविक, रासायनिक
इत	–	फलित, घटित, खंडित, द्रवित, रचित
ईय	–	भारतीय, जातीय, राष्ट्रीय, नारकीय, स्वर्गीय, आत्मीय
जा	–	भानजा, भतीजा, सतीजा, आत्मजा,
ओई	–	बहनोई, ननदोई
आल	–	ससुराल, कंगाल, घड़ियाल, ननिहाल
मान	–	बुद्धिमान, शक्तिमान, शोभायमान

वत्	–	पुत्रवत्, मातृवत्
तन	–	पुरातन, अद्यतन, नूतन, अधूनातन

4. **अपत्यवाचक तद्धित प्रत्यय** :– वे प्रत्यय जो किसी संज्ञा, सर्वनाम या विशेषण शब्दों के अन्त में जुड़कर संतान बोधक शब्दों का निर्माण करते हैं, उन्हें अपत्यवाचक तद्धति प्रत्यय कहते हैं। जैसे–

इ	–	दाशरथि, मारूति, सारथि, वाल्मीकि, सौमित्रि
ई	–	जानकी, द्रौपदी, मैथिली, गांधारी
एय	–	गांगेय, आग्नेय, आंजनेय, पाथेय, कौन्तेय, पौरुषेय, मार्कण्डेय, कार्तिकेय, आत्रेय, आतिथेय, भागिनेय।
य	–	दैत्य, आदित्य, वात्सल्य, नैराश्य, ऐश्वर्य, गृहस्थ्य, शौर्य
आयन	–	दांडायन, कात्यायन, वात्स्यायन, मौदग्ल्यायन
अयन	–	रामायण, नारायण

5. **ऊनतावाचक तद्धित प्रत्यय :–** वे प्रत्यय जो किसी संज्ञा, सर्वनाम या विशेषण शब्दों के अन्त में जुड़कर लघुता बोधक शब्दों का निर्माण करते हैं, उन्हें ऊनतावाचक तद्धित प्रत्यय कहते हैं। जैसे–

उआ	–	बबुआ, मनुआ, कलुआ, गेरुआ, बचुआ
इया	–	बिटिया, खटिया, कुटिया, डिबिया, लुटिया, चुहिया, चुटिया
ई	–	मण्डली, टोकरी, पहाड़ी, किवाड़ी, रस्सी, चिमटी, हथौड़ी नाली, छुरी, छतरी
ओला	–	खटोला, सँपोला, बतोला, फफोला, मंझोला
इका	–	पत्रिका, कलिका, लतिका, कणिका
ड़ा/डी	–	दुखड़ा, टुकड़ा, मुखड़ा, बछड़ा, पंखुड़ी, अंतड़ी
ली	–	लाडली, ढपली, टीकली

6. **स्त्रीवाचक तद्धित प्रत्यय :–** वे प्रत्यय जो किसी संज्ञा, सर्वनाम या विशेषण शब्दों के अन्त में जुड़कर पुल्लिंग से स्त्रीलिंग शब्दों का निर्माण करते हैं, उन्हें स्त्रीवाचक तद्धित प्रत्यय कहते हैं। जैसे–

आ	–	सुता, छात्रा, अनुजा, प्रिया, शिष्या, बाला, तनया
ई	–	देवी, बेटी, काकी, हरिणी, घोड़ी, लड़की, पुत्री, छोटी
आइन	–	ठकुराइन, पंडिताइन, चौधराइन, मुंशियाइन
इन	–	मालकिन, नागिन, धोबिन, भिखारिन, पड़ोसिन, मालिन, बाघिन, चमारिन
नी	–	मोरनी, रोशनी, चटनी, जाटनी, ऊँटनी
आनी	–	जेठानी, सेठानी, ठकुरानी, नौकरानी
इया	–	कुतिया, बंदरिया, चिड़िया, चुहिया
इनी	–	कमलिनी, भुंजगिनी, वाहिनी, सरोजिनी
इका	–	लेखिका, अध्यापिका, गायिका, नायिका, सेविका

<u>उर्दू के प्रत्यय</u>

गर	–	जादूगर, बाजीगर, कारीगर, सौदागर
नाक	–	शर्मनाक, दर्दनाक, खतरनाक, खौफनाक
इन्दा	–	परिन्दा, बाशिन्दा, शर्मिन्दा, चुनिन्दा
इश	–	फरमाइश, पैदाइश, रंजिश
इस्तान	–	कब्रिस्तान, तुर्किस्तान, अफगानिस्तान
खोर	–	हरामखोर, घूसखोर, जमाखोर, रिश्वतखोर
गाह	–	ईदगाह, बंदरगाह, दरगाह, आरामगाह
गी	–	दीवानगी, ताजगी, सादगी
नामा	–	इकरारनामा, सुलहनामा, अकबरनामा
बन्द	–	हथियारबन्द, बाजूबन्द, नजरबन्द

बाज	–	नशेबाज, चालबाज, दगाबाज
ईन	–	शौकीन, बेहतरीन, हसीन, संगीन
आना	–	हर्जाना, नज़राना, जुर्माना
शाही	–	इमामशाही, कुतुबशाही, नौकरशाही
आवर	–	जोरावर, बख्तावर, दिलावर, दस्तावर

16.4 विलोम शब्द

विलोम का अर्थ होता है उल्टा। जब किसी शब्द का उल्टा या विपरीत अर्थ दिया जाता है तो उस शब्द को विलोम शब्द कहते हैं अर्थात् एक–दूसरे के विपरीत या उल्टा अर्थ देने वाले शब्दों को विपरीत शब्द कहते हैं। इसे विपरीतार्थक शब्द भी कहा जाता है।

विलोम शब्द बनाने के नियम

1. **लिंग परिवर्तन से :–** जैसे भाई– बहन, राजा – रानी, वर – वधू, लड़का– लड़की, गाय – बैल, कुत्ता –कुत्तिया आदि।
2. **अलग जाति के शब्दों से :–** जैसे अधम – उत्तम, अधिकतम – न्यूनतम, अनुराग – विराग, आजाद– गुलाम, आगे – पीछे, कड़वा – मीठा आदि।
3. **उपसर्ग से :–** जैसे ईश्वर – अनीश्वर, आस्था – अनास्था, अस्वस्थ – स्वस्थ, मान– अपमान आदि।
4. **उपसर्ग की तरह प्रयोग होने वाले शब्दों के बदलने से :–** जैसे गणतंत्र – राजतंत्र, एकतंत्र – बहुतंत्र, उत्तरायण – दक्षिणायन, विशालकाय – लघुकाय आदि।
5. **नज समास के पद बनाकर :–** जैसे आदि– अनादि, संभव – असंभव, आस्तिक – नास्तिक, अनाथ – सनाथ आदि।

भाषा में भावों–विचारों की स्पष्टता के लिए विलोम शब्द का ज्ञान उपयोगी होता है। इनके प्रयोग से भाषा में अभिव्यक्ति शक्ति बढ़ जाती है। विद्यार्थियों के अध्ययन हेतु विलोमार्थक शब्दों की सूची यहाँ प्रस्तुत है–

शब्द	विलोम	शब्द	विलोम
आदि	अंत	अनुज	अग्रज
आविर्भाव	तिरोभाव	अवनि	अम्बर
अंश	पूर्ण	तामसिक	सात्विक
अकाल	सुकाल	गृहस्थ	सन्यासी
अभिज्ञ	अनभिज्ञ	कोप	कृपा
आधार	निराधार	ग्राह्य	त्याज्य
आसक्त	अनासक्त	निन्दा	स्तुति
उत्पत्ति	विनाश	बाह्य	अभ्यन्तर
उपकार	अपकार	नैसर्गिक	कृत्रिम
उन्मूलन	रोपण/स्थापन/निमीलन	कदाचार	सदाचार
उत्कृष्ट	निकृष्ट	खल	सज्जन
उत्पत्ति	विनाश	उग्र	सौम्य
उन्नति	अवनति	खण्डन	मण्डन
उभरा	धँसा	अग्र	पश्च
अनिवार्य	ऐच्छिक	गुण	दोष
अनुकूल	प्रतिकूल	छली	निछल
इंसान	शैतान	अल्पज्ञ	बहुज्ञ
तृष्णा	वितृष्णा	सुगम	अगम
कनिष्ठ	वरिष्ठ/ज्येष्ठ	ऊर्वर	ऊसर
उत्कर्ष	अपकर्ष	सक्षम	अक्षम
उत्तम	अधम	आग्रह	दुराग्रह

जागरण	निद्रा	पदोन्नत	पदावनत
मूक	वाचाल	मत	विमत
चपल	गंभीर	चतुर	मूढ़
चंचल	स्थिर	रुग्ण	स्वस्थ
चिकना	खुरदरा	शोषक	पोषक
विनीत	उद्दंड	स्थूल	सूक्ष्म
निष्क्रिय	सक्रिय	कटू	मधुर
गतिशील	गतिहीन	कठोर	कोमल
कुख्यात	विख्यात	निंदा	स्तुति
आज्ञा	अवज्ञा	निरक्षर	साक्षर
निर्माण	विनाश	घात	प्रतिघात
प्रातः	संध्या	प्रस्थान	आगमन
अपमान	सम्मान	कुमार्ग	सन्मार्ग
ध्वंस	निर्माण	गुरु	शिष्य
खिलना	मुरझाना	परिश्रम	आलस्य
पुरस्कृत	दंडित	चेतना	मूर्च्छा
जय	पराजय	प्रवृत्ति	निवृत्ति
अंतिम	प्रथम	विधि	निषेध
पालक	घातक	विधवा	सधवा
तुच्छ	महान	वैमनस्य	सौमनस्य
विपन्न	सम्पन्न	विस्तृत	संक्षिप्त
हर्ष	शोक	याचक	दाता

सत्कार	तिरस्कार	ह्रस्व	दीर्घ
क्षुद्र	महान्	आगमी	विगत
आवास	प्रवास	खीझना	रीझना
गहरा	उथला	विसर्जन	आवाहन
विकास	ह्रास	शीर्ष	पाद/तल
साहसी	भीरु	आनन्द	विषाद
आश्रित	निराश्रित	गणतंत्र	राजतंत्र
गौण	प्रमुख	रमार्थ	स्वार्थ
विकीर्ण	संकीर्ण	प्रत्यक्ष	परोक्ष
सुकृति	कुकृति	श्याम	श्वेत
संघटन	विघटन	राजा	रंक
ग्राम्य	नगर		

16.5 सारांश

इस पाठ में आपको प्रत्यय और विलोम का पूर्ण ज्ञान दिया गया है, जो हिन्दी भाषा की शब्द रचना एवं निर्माण को समझने में सहायक है इससे आपकी बुद्धि में व्याप्त शब्द भण्डार में वृद्धि हुई होगी ऐसी मेरी आशा है।

16.1 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र1) प्रत्यय किसे कहते हैं ? उदाहरण सहित परिभाषित कीजिए।

....

....

....

....

प्र2) प्रत्यय के कितने भेद हैं? सोदाहरण स्पष्ट करें।

....

....

....

....

प्र3) उपसर्ग और प्रत्यय का अंतर सोदाहरण स्पष्ट करें।

....

....

....

....

प्र4) निम्नलिखित प्रत्ययों के संयोग से दो–दो नए शब्दों का निर्माण करें :–

नी, हार, आई, इक, पन

....

....

....

....

प्र5) निम्नलिखित शब्दों में प्रयुक्त प्रत्यय अलग कीजिए :–

बेटी, नशेड़ी, दुखड़ा, गवैया, होनहार

....

....

....

....

प्र6) निम्नलिखित शब्दों से प्रत्यय छाँटिए तथा उन प्रत्ययों से एक–एक नया शब्द बनाइए

बचपना, हथौड़ा, पढ़ना, लकड़ी, सुरीला

....

....

....

....

प्र7) निम्नलिखित शब्द के विलोमार्थक शब्द लिखिए :–

अनुकृति, करुण, विधि, उत्कर्ष, तृषा

....

....

....

....

प्र8) 'प्रत्यक्ष' का विलोमार्थक शब्द लिखिए।

....

....

....

....

प्र9) विलोम शब्द बनाने के कितने नियम हैं ,उनके नाम बताइए।

....

....

....

....

प्र10) 'लड़का–लड़की' विलोम शब्द में कौन–सा नियम प्रयोग हुआ है ?

....

....

....

16.7 पठनीय पुस्तकें

1. सम्पूर्ण हिन्दी व्याकरण और रचना– डॉ. अरविन्द कुमार
2. परिष्कार व्याख्याता– हिन्दी – डॉ. राघव प्रकाश, डॉ. चतुर सिंह, डॉ. सविता पाईवाल

***